सम्पूर्ण
दुर्गा सप्तशती
भगवती दुर्गा
निगमागम शक्ति शोध संस्थान
सिहोरा जबलपुर
संदीप तमरहाई जबलपुर

श्री गुरुभ्योनमः

नागेश्वरानन्द मंडली

Received fr. Sri Venkataraman

ARUTSAKTHI NAGARAJAN,

1-7-89

निगमागम शक्ति शोध संस्थान
सिहोरा जबलपुर

संदीप समरहाई जबलपुर

सचित्र

सम्पूर्ण श्री दुर्गा सप्तशती

(सर्वाङ्ग - संवलिता)

संकलन-कर्ता एवं प्रकाशक

श्री १००८ श्रीमद्दण्डी स्वामी तत्त्वबोधाश्रम जी

अध्यक्ष

निगमागम शक्ति शोध संस्थान, सिहोरा, जि० जबलपुर (म० प्र०)

मूल्य सजिल्द ३३.०० रु०; अजिल्द ३०.०० रु० (डाक-खर्च अलग)

चैत्र-कृष्ण-चतुर्दश्यां सं० २०४१ वत्सरे श्रीगुरु-पादुकायां समर्पितम्

मुद्रक : जय हनुमान प्रिंटिंग प्रेस, १-सी. बाई का बाग, इलाहाबाद

अभिशंसनम्

सप्तशत्या रहस्यं तु, लुप्त - प्रायं मही - तले । जगद्धात्री-प्रसादेन, पुनः प्राचकटद् ध्रुवम् ॥१॥
गुरोः कृपा - कटाक्षेण, साक्षाद् भगवती पुनः । दधौ सप्तशती-रूपमिति मूढ़स्य मे मतिः ॥२॥

—श्री १००८ स्वामी श्री तत्वबोधाश्रम

ॐ शं शं शं दुर्गायै नमः

प्रकाशकीय

कलियुग में ताप-त्रय से सन्तप्त सांसारिक जीवों के उद्धार हेतु स्वयं पर-ब्रह्म परमात्मा ने ही वेदों में आध्यात्मिक ज्ञान-युक्त मन्त्रों को प्रकट किया। इस परम्परा में ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, धर्म-सूत्र एवं स्मृतियों की रचना हुई, जिनका एकमात्र उद्देश्य मानव का लौकिक एवं पारलौकिक अभ्युदय है। वेदों के वर्तमान स्वरूप को प्रतिष्ठित करनेवाले महर्षि व्यास ने ही पुराणों की रचना के सन्दर्भ में **'मार्कण्डेय पुराण'** एवं **'उत्तर मार्कण्डेय पुराण'** के माध्यम से सर्व-शक्ति-स्वरूपा भगवती महा-माया की उपासना का चित्रण किया है। यही उपासना सात सौ श्लोकों से युक्त **'दुर्गा-सप्तशती'** के नाम से सुविख्यात हुई। ये सात सौ श्लोक अति दुर्लभ सहस्राक्षर-मन्त्र से गर्भित हैं, जिससे **'सप्तशती'** की उपादेयता अनुपमेय है।

पाराशर-नन्दन श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यास जी ने बदरी-वन में दस हजार वर्ष तप करने के पश्चात् पराम्बा को प्रसन्न करके कलि-जन्य दोषों से ग्रस्त जीवों के उद्धार के लिए एवं मानव-गत त्रयोदश दोषों के शमनार्थ परम पावन रस-मय, सम्पूर्ण शास्त्र-रूप फलों के रस-रूप में **'सप्तशती'** की रचना की। इसके पाठ एवं प्रयोग-मात्र से मानव के आगत त्रयोदश दोष नष्ट हो जाते हैं। कलियुग में **'सप्तशती'** के तेरह अध्यायों के पारायण से क्रमशः १ काम, २ क्रोध, ३ शोक, ४ मोह, ५ विधित्सा (शास्त्र-विरुद्ध काम करने की इच्छा), ६ मद, ७ लोभ ८ मात्सर्य, ९ ईर्ष्या, १० निन्दा, ११ पर-दोष-दृष्टि और १२ कृपणता एवं १३ दैन्य-भाव तो नष्ट होते ही हैं, साथ ही विशुद्ध ज्ञान की उपलब्धि भी होती है।

मूल ७०० श्लोक-युक्त अभिनव 'दुर्गा-सप्तशती' के प्रकाशन के प्रेरणा-स्रोत अनन्तश्री-विभूषित परमहंस परिव्राजकाचार्य अवधूत-शिरोमणि श्री १००८ श्रीमद् स्वामि विद्यारण्य आश्रम जी महाराज एवं अनन्तश्री-विभूषित परिव्राजक श्री १००८ श्रीमद् दण्डि स्वामि तत्वबोधाश्रम जी महाराज हैं। आपने जन-कल्याण एवं साधकों के निमित्त कठिन तपस्या व अनुष्ठानों के माध्यम से पराम्बा को प्रसन्न कर अनुग्रह-स्वरूप गुह्यतत्वों को खोज कर संग्रहीत किया। यही संग्रह सांगोपाङ्ग सहस्राक्षरी-युक्त सर्व-सुलभ हो रहा है। इसे प्रकाशित कर हमारा 'संस्थान' गौरवान्वित है।

हमारे संस्थान का यह प्रथम पुष्प २४ दुर्लभ चित्रों से युक्त दैवीशक्ति-सम्पन्न है। इसके लिये हमारा संस्थान परमपूज्य स्वामि-द्वय का चिर ऋणी रहेगा एवं श्रीचरणों में हार्दिक-कृतज्ञता ज्ञापित करता है।

प्रस्तोता श्री जगदीशप्रसाद अग्रवाल (सुरेका), गौहाटी (असम) ने प्रकाशन का समस्त व्यय-भार पूर्ण मनोयोग के साथ सहर्ष वहन किया है। एतदर्थ 'संस्थान' मंगल-कामना के साथ हृदय से आभारी है। पाण्डुलिपि एवं चित्रों के निर्माण तथा प्रकाशन-कार्य में श्री अवधेशकुमार वाजपेयी ने चित्रों को बनाकर तथा डा० विश्वनाथ चौदहा व उनकी पत्नी डा० मीना चौदहा, तेवरी (जबलपुर) ने लेखन-कार्य कर एवं पं० श्यामनारायण मिश्र व उनकी पत्नी श्रीमती सरला मिश्र, नया गाँव (हरदोई) ने अपना सहयोग देकर महत्वपूर्ण योग-दान किया है। गीता-निकेतन, प्रयाग के अध्यक्ष श्री व्यास जी तथा सर्वश्री नारायणप्रसाद व माधवराज, कीटगंज (प्रयाग), सेठ नौरतमल, सोडाला (जयपुर) आदि सभी सहयोगी जनों का एवं प्रयाग (उत्तर प्रदेश) से विगत ४३ वर्षों से शक्ति-उपासना पर प्रामाणिक प्रकाश डालनेवाली भारत की एकमात्र मासिक पत्रिका 'चण्डी' के सम्पादक 'कुलभूषण' पण्डित रमादत्त शुक्ल, एम० ए० ने पाण्डुलिपि एवं प्रूफ-संशोधन में तथा जय हनुमान प्रिंटिंग प्रेस के संरक्षक श्री कामेश्वरनाथ भार्गव ने पुस्तक के सुन्दर मुद्रण में जो परिश्रम किया है, उसका आभार मानते हुये 'संस्थान' उनके कल्याण की कामना करता है।

पाठकों एवं साधकों से सुझाव एवं त्रुटियों से अवगत कराने हेतु नम्र निवेदन है ताकि भावी संस्करणों में उनका निराकरण किया जा सके। आशा है, जिज्ञासु साधक ऐहिक, पारलौकिक सभी प्रकार के सौख्य को उपलब्ध करते हुये परमार्थ-प्रकाश प्राप्त करने में सफल होंगे।

विनीत

रविशङ्कर द्विवेदी, एम० ए० (द्वय), बी० टी० (बेसिक) आयुर्वेद-रत्न,
सचिव—निगमागम शक्ति-शोध-संस्थान, सिहोरा, जि० जबलपुर (म. प्र.)

आशीर्वाद

[१] परम पूज्य जगद्गुरु शङ्कराचार्य श्री अभिनव सच्चिदानन्द तीर्थ स्वामी जी महाराज, श्री शारदा पीठ, द्वारका

श्री दण्डी स्वामी श्री तत्त्वबोधाश्रम महाराज की प्रेरणा से संकलित मार्कण्डेय-पुराणांतर्गत 'श्री दुर्गा सप्तशती' की पाण्डुलिपि आज श्री स्वामी जी ने बताई, अनुक्रमणिका तथा कुछ अंश देखे। इसमें विशिष्ट आलोचना-दृष्टि से अनेक मार्मिक रहस्य उद्घाटन के लिये प्रयत्न किया गया है।

यह ग्रन्थ जिज्ञासु, प्रेमी, जनता को लाभप्रद हो, यही पूज्यपाद अनन्तश्री-विभूषित श्रीद्वारका शारदा-पीठाधीश्वर जगद्गुरु श्रीशंकराचार्य महाराज के शुभाशीर्वाद हैं। शुभम्।

जगद्गुरु की आज्ञा से ह० अस्पष्ट (मंत्री)
रतलाम मार्ग, कृष्ण ११ (२६-१२-१९७८)

[२] सही—अस्पष्ट मुख्य सचिव
अनन्त श्री जगद्गुरु शंकराचार्य, गोवर्धन पीठ (पुरी)

॥ श्रीः ॥ आमोदः ॥

[३] यत्रास्ति भोगो नहि तत्र मोक्षः, यत्रास्ति मोक्षो न हि तत्र भोगः।
श्रीसुन्दरी - साधन - तत्पराणां, भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव ॥

अव्याज-करुणामूर्तिर्भगवती-ललिताम्बा-परा-भट्टारिका-निखिल-ब्रह्माण्ड-जननी समस्त-भक्त-वाञ्छा-कल्पतरुर्विराजते जगत्यमुस्मिन्। दश-महा-विद्याः, नव-दुर्गाः, योगिन्यः—आसामवान्तर-भेदाः असंख्येयाः वर्तन्ते, एतासां समाराधनं दुरधिगम्यमति-विस्तृतञ्च वरीवर्ति। अपौरुषेय-वेद-प्रतिपाद्य-सनातन-धर्मे द्विजातयोऽति-श्रद्धया गायत्री-रूपां शक्तिमुपासन्ते। अस्माकं वेदेषु शक्ति-तत्व-प्रतिपादकाः अनेके मन्त्राः सन्ति। केषुचिन्मन्त्रेषु शक्ति-मन्त्राः समुद्दिश्यन्ते। विविधागमेषु पुराणेष्वपि शक्त्याराधन-विधानं विद्यते, तस्यामेव परम्परायां मार्कण्डेय-पुराणान्तर्गत-दुर्गा-सप्तशती इत्याख्यो माला-मन्त्रः सुप्रख्यातः स्तोत्रात्मकः, यस्य श्रद्धा-भरः पाठोऽद्यावधिः विधीयते।

सप्तशती-गणनायामुवाचादिकं परिगणय्य साम्प्रतं सप्तशतकं गणनं सम्पाद्यते, पाठ-भेदैरपि सप्तशती-निर्धारणे बहु-मत-कोलाहलं बधिरी-

करोति श्रवण-रन्ध्रान् । परिव्राजक-वर्यैस्तत्वबोधाश्रम स्वामिभिः स-प्रमाणं श्लोक-सप्त-शतकमापूरितमित्यवज्ञाय सन्तोषामोदो वरीवर्धते । सहैव ध्यान-सौकर्याय शास्त्रीयं ध्यानमाश्रित्य चित्राणि च चित्र्यन्ते इत्यपि सन्तोषाधायकम् ।

प्रयासेनानेन पराम्बा भगवती जुष्टा प्रसन्ना भूयात् । लोके च प्रस्तुतिरियं नन्द्यादित्यादि शुभाशींषि प्रयुञ्ज्महे सामोदमिति शुभम्भूयात् ।

ह० स्वरूपानन्द सरस्वती

[४] ।। श्री हरिः ।। दण्डी स्वामी श्री तत्त्वबोधाश्रम जी महाराज द्वारा संकलित दुर्गा सप्तशती का अवलोकन किया । यद्यपि प्रचलित सप्तशती का पाठ भी परम प्रामाणिक एवं अपरिगणित शिष्टों द्वारा समादृत है और वे सभी सिद्ध मन्त्र हैं । इस पुस्तक में अनेक महत्वपूर्ण तत्व संनिविष्ट किये गये हैं । परम्परा-प्राप्त पाठ से भिन्न मार्कण्डेय उत्तर पुराण के अनुसार इसमें सात सौ संख्या की पूर्ति की गई है । यह अपने में बहुत महत्वपूर्ण उपलब्धि है ।

साधकों के लिये यह पुस्तक एक नई दिशा प्रदान करेगी, ऐसी आशा है ।

भवदीय

सही—करपात्र स्वामी

[५] ।। श्रीहरिः ।। हर हर महादेव, श्रीकाशी विश्वनाथो विजयते । ऊर्ध्वाम्नाय श्रीकाशी सुमेरु-पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य, अनन्तश्री-विभूषित स्वामी श्रीशंकरानन्द सरस्वती जी महाराज, धर्म-संघ, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी

श्रीमद्दण्डि स्वामी तत्वबोधाश्रम-विरचित दुर्गा-सप्तशती-विषयक हस्त-लिखित ग्रन्थमवलोक्य मदीयं चित्तं संतोषुतीति । प्रचलित-सप्तशती-प्रणालीतर-प्रणाली श्लाघनीया । तथापि सप्तशती सप्तसती-वेति विचारो विचारार्हो नात्र संदेह-लेशावकाशः । सप्तशत-श्लोक-विषये प्रत्नेतरा पद्धतिराविष्कृता । एकादश-न्यासाम्नाय-चक्र-शरीर-चक्रादि-विषये महाकाल्यादि-ध्यान-विषये मातृकादि-विषये च विचारः समीचीनः कृतः । अतः श्रीतत्वबोधाश्रमान्वेषण-प्रकारः सर्वथा मननीयोऽस्ति निगमागम-शास्त्र-पारङ्गतैः । परिश्रमोऽयं स्वामिनः साफल्याय भवत्विति भगवन्तं विश्वनाथमन्नपूर्णां च प्रार्थयामहेति काशीस्थोर्ध्वाम्नाय-जगद्गुरु-शंकराचार्याणां सम्मतिः ।

जगद्गुरुणाभासषा

सही—शङ्करानन्द सरस्वती, ४-२-७६

ले० अनन्त चैतन्याख्यो ब्रह्मचारी

गुरुदेव का आशीर्वाद

पुण्य-सलिला श्री नर्मदा तट पर मेरे सुयोग्य शिष्य श्रीमद्दण्डी स्वामी तत्त्वबोधाश्रम जी द्वारा किये गये चार शतचण्डी-पाठों के शुभ परिणाम-स्वरूप उपलब्ध साङ्गोपाङ्ग-निरूपण-युक्त शुद्ध 'दुर्गा सप्तशती' सर्व-जन-हिताय प्रकाशित करवाने में मुझे हार्दिक हर्ष का अनुभव हो रहा है।

शास्त्र एवं स्वानुभव के आधार पर सङ्कलित प्रस्तुत पुस्तक में कवच, कीलक, अर्गला, महाकाली-सूक्त, महालक्ष्मी-सूक्त, महासरस्वती-सूक्त, मूर्ति-रहस्य, वैकृतिक-रहस्य, प्रधान-रहस्य, तेरह अध्याय, कुञ्जिका-स्तोत्र, आपदुद्धार आदि २४ अङ्गों के अतिरिक्त आह्वान, चण्डिका-दल, चण्डिका-हृदय, एकादश न्यास, सप्त महाषोडश न्यास एवं बीज-मन्त्रात्मक कवच-चतुष्टय आदि का समावेश प्रयोग-विधि सहित किया गया है। इस प्रकार इस पुस्तक में कुल मिलाकर ४६ अङ्ग हैं। विभिन्न चरितों के विशद वर्णन के साथ-साथ सप्त चक्र-आम्नाय एवं षण्मुखी शिव का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध निम्न-रूपेण स्पष्ट किया गया है—

शिव के मुख :—१ पूर्व, २ दक्षिण, ३ उत्तर, ४ पश्चिम, ५ ऊर्ध्व, ६ अधो; १ तत्पुरुष, २ अघोर, ३ वामदेव, ४ सद्योजात, ५ ईशान, ६ कालाग्नि-रुद्र।

चक्र :—१ स्वाधिष्ठान, २ मणिपूरक, ३ विशुद्ध, ४ अनाहत, ५ आज्ञा, ६ मूलाधार।

आम्नाय :—१ पूर्वाम्नाय, २ दक्षिणाम्नाय, ३ उत्तराम्नाय, ४ पश्चिमाम्नाय, ५ ऊर्ध्वाम्नाय, ६ अधराम्नाय (पातालाम्नाय)।

अधोमुख	अधोमुख	अधोमुख	अधोमुख
स्वाधिष्ठान	मणिपुर	विशुद्ध	अनाहत
ईशान	आग्नेय	वायव्य	नैर्ऋत्य

इस प्रकार शिव के ६ मुख ही मानव शरीर के छः चक्र हैं और मानव शरीर के छः चक्र ही छः आम्नाय हैं। दो चक्रों के मिश्रण से अधोमुख चक्र बने, जो ईशानादि चार आम्नाय हैं।

वर्तमान समय में 'दुर्गा-सप्तशती' के जो संस्करण उपलब्ध हैं, उनमें अधिकतर ५६३ श्लोक ही प्राप्त होते हैं तथा उवाचादि को भी श्लोक मानकर सात सौ श्लोकों की गिनती पूरी करने का प्रयास ही अधिकांश में दृष्टिगोचर होता है। त्रिसूक्त, प्रत्येक चरित के नवार्ण मन्त्र एवं उनकी

शक्तियों के ध्यान का तो प्रायः लोप ही हो गया है ।

प्रस्तुत 'सप्तशती' में मार्कण्डेय उत्तर पुराण में वर्णित तत्वात्मक विवेचन-युक्त सात सौ श्लोक सम्पूर्ण दिये गये हैं तथा उनके अतिरिक्त ५५ श्लोकों का उल्लेख टिप्पणी में कर दिया गया है । इस गिनती में अर्द्धश्लोक, उवाच एवं आवादान् सम्मिलित नहीं किये गये हैं । व्यावहारिक पक्ष को दृष्टि-मध्य रखते हुये भू-शुद्धि, भूत-शुद्धि, चक्र-भेदन-प्रक्रिया-युक्त अन्तर्बाह्य मातृका-न्यास, हवन-वस्तु-प्रयोग-विधि, शत-चण्डी-प्रयोग, सहस्र-चण्डी-प्रयोग, सार्ध-नव-चण्डी-प्रयोगादि की भी जानकारी समाविष्ट की गयी है तथा आपदुद्धार-स्तोत्र, नवार्ण-माहात्म्य एवं प्रत्येक अध्याय के साथ आम्नायाधिष्ठात्रियों के ध्यान भी दिये हैं, जो सर्वत्र सुलभ नहीं होते । चण्डिका-दल एवं चण्डिका-हृदय का पाठ तो महामाया के पूर्णोत्कर्ष का स्तवन है, जो प्रायः अनुपलब्ध है । प्रचलित संस्करणों में कहीं-कहीं एकादश-न्यास एवं तदनन्तर केवल समष्टि नवार्ण मात्र दिये जाते हैं । उनके भीषण भैरव का दुर्लभ दशाक्षरी ज्ञान तथा महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती का नवार्ण तथा उसके ब्रह्मा, विष्णु, महेश एवं भैरव का मन्त्रोद्धार आदि देकर इस पुस्तक को और भी अधिक उपादेय बना दिया गया है । अतः मेरी मान्यता है कि 'सप्तशती' का यह संस्करण दुर्गा-पाठियों के लिये एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति करने में सहायक सिद्ध होगा ।

मेरी हार्दिक कामना है कि अधिकाधिक भक्त-जन इस सप्तशती का सम्यक् पाठ कर अपने अभीष्ट को सिद्ध करते हुये संङ्कलन-कर्ता के श्रम को सार्थक करें । शुभाशीर्वाद है कि दोनों शक्ति-भक्ति को प्राप्त होवें । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

कल्याण-कांक्षी

द: स्वामी सच्चिदानन्द आश्रम

१७ फरवरी, सन् १६७६

५५ सद्गुरु-सदन, चन्द्रेश्वर मार्ग, हृषीकेश, देहरादून (उत्तर प्रदेश)

शुद्धि-पत्र

[किसी भी पुस्तक को प्रयोग में लाने के पूर्व यथाशक्ति उसे संशोधित कर लेना चाहिए क्योंकि परिस्थितियों वश कुछ-न-कुछ अशुद्धियां रह ही जाती हैं। हमारी दृष्टि में आई कुछ त्रुटियों के सम्बन्ध में 'शुद्धि'-निर्देश यहाँ प्रस्तुत है—प्रकाशक]

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
		प्राक्कथन	
१५	११	चडि	चण्डि ✓
१५	१२	मुडि	मुण्डि ✓
२२	१५	चक्र	च ✓
४०	७	'हायना के आगे' 'अष्टवर्षा शाम्भवी स्यात् दुर्गा तु नव-हायना' ✓	
४६	६	'घं' के आगे 'ङं' ✓	
		पाठ-विधि	
२०	३	ऋणु	शृणु ✓
२१	१५	ऋणु	शृणु ✓
२२	७	बधे	क्षये ✓
३६	६	मूलं नमः	मूलं ॐ नमः ✓
४३	६	रैघोरां	घोरां ✓
४३	६	कः	करै ✓
४६	१३	श्री दिव्युवाच	ऋषिरुवाच ✓
५२	१	यन्मोहा	यन्मोहो ✓

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५८	८	ससस्त्श्वकः	ससस्त्यश्वकः ✓
६४	६	परशू	परशु ✓
६६	११	पृथिवीति	पृथिवी तु ✓
७४	१०	एवं ब्रह्माणि	एक-बाह्वक्षि ✓
७४	१२	तिष्ठेति	तिष्ठ तु ✓
८७	१४	नमानपति कश्चन	नमानयति कश्चनः
८७	१५	ससस्त्यश्चक	ससस्त्यश्वकः
१००	४	मायेति	माया तु
१०६	१२	प्रयाहीति	प्रयाहि तु
१३२	११	मारो	मारी सैव
१३४	१३	धपाग्नि	धूपाग्नि
१४३	५	सहस्त्रावृति	द्वि-सहस्त्रावृत्ति
१४६	१४	भमाऽपि	भीमाऽपि
१५०	५	एकल	सकल
१६१	५	सर्वे	सर्वे देवा

विषय-सूची

विषय-उपलब्धि का परिचय

श्री गुरुदेव जी की आज्ञा से बद्रीनाथ-धाम में द्वादश वर्ष-पर्यन्त निरंतर महा-मंत्र का शास्त्रोक्त सविधान जप करते-करते प्रणव की मात्राओं की तथा उनकी शक्ति, कलाओं, मंत्र एवं ध्यान की उपलब्धि हुई। उन मंत्रों का पुरश्चरण तत्-स्थान में ही वर्षों तक किया। तत्-पश्चात् नर्मदा-तट में शत-चण्डी करने की प्रेरणा हुई। चार शत-चण्डी करने के बाद 'अ' कार की मात्राओं, 'उ' कार की मात्राओं एवं 'म' कार की मात्राओं, अर्द्ध-चन्द्र-बिन्दु की मात्राओं—सभी का परिचय जानने, सुनने एवं अनुभव करने की शक्ति प्राप्त हुई अर्थात् अनुभव-गम्य हुईं। तत्-पश्चात् यह ज्ञान उपलब्ध हुआ कि 'म'कार की मात्रा, जो शुद्ध स्वरूप—सप्तशती है, वही सप्तशती है। यह जानकर मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ। यही श्री गुरुदेव जी की एवं महामाया की अन्तर्प्रेरणानुसार यह छोटी सी पुस्तिका, जो अनुभव-गम्य है, "सविधान कर्म-फल का स्वरूप है," साधक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। विशेष विवरण क्रमशः अनुशीलन से प्राप्त करें।

षट्-मास हृषीकेश एवं षट्-मास बद्रिकाश्रम में निवास रहा और साधना-क्रम चलता रहा।

आत्म-कथन

संवत् २०२३ के चातुर्मास में इन पंक्तियों का लेखक मध्यप्रदेश के जबलपुर जिले में नर्मदा नदी के किनारे घोर वन-प्रांतर में स्थित लम्हेटा घाट पर शत-चण्डी के पाठ में संलग्न था। पाठ करते-करते मन में यह संशय उपस्थित हुआ कि जिसे हम सप्तशती कहते हैं, वह क्या है? वे सात सौ श्लोक कौन से हैं, जिनसे "सप्तशती" शब्द के सही अर्थ का भान हो सके? प्रचलित सप्तशती में प्रथम से द्वादश अध्याय तक ऋषि एवं राजा के संवादों के माध्यम से उपदेश निर्दिष्ट हैं। त्रयोदश अध्याय में उल्लिखित है कि राजा ने ३ वर्ष तक एक 'सूक्त' का पाठ किया। इस पर भी यह प्रश्न मन में अटक कर रह गया कि वह 'सूक्त' कौन सा था? इन्हीं प्रश्नों को मन में रखकर १२० दिनों में शत-चण्डी का कार्य-क्रम पूरा किया।

इसी वर्ष प्रयाग-राज में कुम्भ के अवसर पर भगवती भागीरथी के तट पर अपने उक्त संशय को (मैंने स्वामी) जी के समक्ष निवेदित किया। स्वामी जी महाराज मात्र मुस्कराते रहे और मुझे लगा कि मेरा प्रश्न वह उत्तर नहीं पा रहा है, जिसकी

मुझे अपेक्षा है। मैं बराबर हठ करता रहा। अन्ततोगत्वा स्वामी जी ने मेरे आग्रह को समझकर समीपस्थ उदयपुर (राजस्थान) निवासी पंडित रघुनाथप्रसाद पुरोहित जी को आदेश दिया कि वह 'सूक्त' लिख कर मुझ तक पहुँचा दें। इसके पश्चात् मेरे मन की जिज्ञासा को शान्त करने की दृष्टि से पूज्य स्वामी जी ने एक अत्यन्त रोचक प्रसंग सुनाया। वह इस प्रकार है—

देवाधिदेव महादेव ने कलि-काल के आगमन पर जब आगम का निर्माण किया, उस समय भगवती पार्वती रुष्ट हो गईं। भगवती को अपनी मानव संतति के कल्याण की चिन्ता थी। वे अव्यक्त मन से मानो कह रही थीं कि जिस आगम के अनुसरण से रावण, कुम्भकर्ण, महिष जैसे सामर्थ्यवान पैदा हुये, क्या भविष्य में ऐसा प्रताप अर्जित करना सदा के लिये समाप्त हो जायेगा ? माँ की इसी उद्वेग की स्थिति में भगवान् शिव ने विष्णु का मन-ही-मन स्मरण किया। अन्तर्यामी विष्णु तत्काल प्रकट हो गये और भगवती के रुष्ट होने का कारण पूछने लगे। माँ पार्वती ने अपना संकट बताकर भगवान् विष्णु से निवेदन किया कि वे इसका कोई उपाय निकालें। इस पर भगवान् श्री विष्णु ने प्रसन्नतापूर्वक कहा—"मैं कहीं-कहीं कलिकाल में अपनी स्तुतियाँ प्रचलित करूँगा, कहीं-कहीं भगवान् महादेव की स्तुतियाँ प्रकटित करूँगा, और कहीं-कहीं भगवती की स्तुतियाँ गाऊँगा।"

इस कथन पर भगवती ने व्यंग्य करते हुये कहा कि आप अपने मुँह मियाँ मिठ्ठू बनते हो। आपने अपनी स्तुति प्रचलित करने की बात सर्व-प्रथम कही है।

इस पर भगवान् विष्णु मात्र मुस्कराते रहे और वहाँ से अन्तर्ध्यान हो गये। कालान्तर में वे ही विष्णु वेदव्यास के रूप में अवतरित हुये और समस्त आध्यात्मिक वाङ्मय को विभिन्न रूपों में लिखकर प्रचारित किया। जब वेदव्यास जी मार्कण्डेय पुराण लिखने को उद्यत हुये, तब उसकी पूर्व-तैयारी के रूप में आपने वर्षों तक भगवती की आराधना की। उनकी तपस्या से प्रभावित होकर जगज्जननी भगवती पार्वती प्रकट हुईं। वेदव्यास जी ने माँ से आज्ञा चाही कि मार्कण्डेय पुराण, जो कि समस्त शास्त्रों का नवनीत है, निर्विघ्न एवं प्रभावी ढंग से लिख लिया जाये, साथ ही वेदव्यास जी सहस्राक्षरी भगवती मंत्र को साधकों के हित के लिये देना भी चाहते थे और उसे प्रच्छन्न भी रखना चाहते थे। इस पर माँ भगवती की आज्ञा हुई कि उस सहस्राक्षरी-मंत्र को सप्तशती के सात सौ मंत्रों में इस प्रकार विलीन कर दिया जाये कि प्रत्येक मन्त्र में कम-से-कम एक अक्षर बीज-रूप में रह जाये। इस प्रकार वह मंत्र जीवित भी रह गया और प्रच्छन्न भी।

स्वामी जी द्वारा सुनाये गये इस प्रसंग को सुनकर मैंने एक और जिज्ञासा निवेदित की कि वह सहस्राक्षरी मंत्र क्या है ?

स्वामी जी ने उसी समय पंडित रघुनाथ जी पुरोहित को आज्ञा दी कि उस मन्त्र को लिखकर मुझ तक पहुँचा दिया जाये।

इसी प्रसंग पर एक बार पुनः संवत् २०३३ के मार्गशीर्ष मास में उदयपुर में चर्चा हुई, तब स्वामी जी ने बताया कि मेरे प्रश्नों से संबन्धित संशयों का शमन उन्हें बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के रमणा कस्बे में स्वर्गीय श्री उमाशंकर प्रसाद के संग्रहालय तथा बृहत् पुरश्चरणार्णव से हुआ। यद्यपि संग्रहालय में उपलब्ध साहित्य एवं बृहत् पुरश्चरण में थोड़ा सा अन्तर है।

दूसरे दिन वहीं प्रयागराज में यही वार्तालाप चल रहा था कि मेरी दृष्टि स्वामी जी के पास रखी हुई, मुद्रण की अशुद्धियाँ देखने हेतु आई हुई एक पुस्तक पर गई। इसमें जगदम्बा के सात सौ नाम बीज-सहित दिये हुये थे। मेरी प्रार्थना पर स्वामी जी ने वह पुस्तक मुझे दे दी।

दूसरे वर्ष संवत् २०३४ के चातुर्मास में पुनः पूर्वोक्त स्थान (नर्मदा के तट पर स्थित) पर शत-चण्डी का कार्य-क्रम आरम्भ किया। तब वहीं यह भास हुआ कि विद्वानों ने 'उवाच' को मंत्र कैसे मान लिया? अर्द्धश्लोक—श्लोक कैसे मान लिये गये? पंचम अध्याय में तो एक-एक मंत्र को गणना की दृष्टि से तीन-तीन गिनाया गया है, यह कैसे संभव हो सकता है? इन्हीं प्रश्नों को मन में रखे-रखे वह कार्य-क्रम पूरा किया।

कुछ अन्तराल के बाद मैं पुनः स्वामी जी के पास पहुँचा। मैंने अपने मन के संशय स्वामी जी के समक्ष प्रकट किये। स्वामी जी ने मुस्करा कर कहा कि "आप हर बार नया प्रश्न लेकर उपस्थित होते हो। आप नर्मदा के किनारे भजन करते हो या प्रश्न ही सोचा करते हो?" इस पर मेरे द्वारा यह कहे जाने पर कि गत वर्ष के उत्तर भी मुझ तक नहीं पहुँचे हैं, स्वामी जी ने जानकारी दी कि पंडित रघुनाथ जी ने गलती से सहस्राक्षरी सूक्त मुझ तक न भेजकर स्वामी जी के पास ही भेज दिया था।

संवत् २०३४ माघ की पूर्णमासी के पश्चात् मैं उस सूक्त को निमित्त बनाकर उदयपुर (राजस्थान) पहुँचा। वहाँ स्वामी जी ने बताया कि सूक्त तो जयपुर में है। अतः १५ दिन पश्चात् उदयपुर से जयपुर पहुँचे। वहाँ पहुँचकर दो दिन की खोज-बीन के पश्चात् पंडित रघुनाथप्रसाद जी द्वारा हस्तलिखित सहस्राक्षरी मंत्र की प्रति मुझे प्राप्त हुई। यह वही प्रति है, जो पंडित जी ने मेरे निमित्त लिखकर स्वामी जी को भेज दी थी।

उस सूक्त की प्राप्ति से मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई। इसे मैंने शत-चण्डी का पुण्य-प्रताप ही समझा। उसी समय मैंने स्वामी जी से सात सौ मन्त्रों की बात पुनः चलाई। स्वामी जी ने कहा कि "उपर्युक्त लेखक मिल जाने पर लिखवा दूँगा।"

जयपुर में यह व्यवस्था नहीं हो सकी। वहाँ से चलकर मध्यप्रदेश के आलोट कस्बे में चिदम्बा भगवती की मूर्त्ति की प्रतिष्ठा के आयोजन में चार दिन रुकना पड़ा। भगवती की असीम अनुकम्पा से वहाँ मुझे उन ७०० मन्त्रों की प्राप्ति हुई। मैंने अपने हाथों से उन मन्त्रों को लिखा।

मैंने संवत् २०३५ का चातुर्मास मध्यप्रदेश के सतना जिले के अन्तर्गत कुसेड़ी ग्राम में बिताया। वहाँ पंडित राम अनुग्रह शुक्ल, परसिया-गोविन्दगढ़ (सतना) निवासी द्वारा सप्तशती लिखवाई गई। जिस दिन सप्तशती का लेखन-कार्य पूरा हुआ, स्वामी जी महाराज का पत्र मिला कि वे इन दिनों मित्तल ब्रदर्स, शोडाला, जयपुर, विराज रहे हैं। मैं अविलम्ब वहाँ पहुँचा और वह हस्तलिखित प्रति स्वामी जी को दिखाई। स्वामी जी ने लेखक की प्रशंसा की तथा वहीं पर शेष आवश्यक उपलब्धियाँ भी हुईं।

भगवती की प्रेरणा से वहीं पंडित पद्म शास्त्री जी से भेंट हुई। स्वामी जी महाराज ने पंडित जी को उस हस्त-लिखित प्रति को देखने हेतु कहा। पंडित जी ने ७ दिनों के अनवरत श्रम से न केवल उसके प्रत्येक अक्षर को परखा अपितु उसे सांगोपांग बनाने में भी योग दिया। इस हेतु मैं उन्हें हार्दिक शुभाशीर्वाद देता हूँ।

इसके पश्चात् भरतपुर में राजपंडित श्री गोविन्द मिश्र ने भी इस प्रति को देखा और अपने विचार लिखकर दिये। तदनन्तर समीपस्थ डीग नगर में पंडित बाबूराम वशिष्ठ ने भी इस प्रति को देखा और भूमिका लिख कर दी। दोनों ही पंडित श्री गोविन्द मिश्र एवं रामबाबू वशिष्ठ शुभाशीर्वाद के पात्र हैं।

सादि-कूट का संक्षिप्त परिचय—दुर्गा सप्तशती

इस संसार में बड़े-बड़े सिद्ध एवं साधकों ने 'सप्तशती' पर अपनी वाणी को पवित्र करने के लिये शास्त्र-साधना, अनुभव, भक्ति, प्रेम एवं आनन्द में विभोर होकर अपने-अपने श्रेष्ठतम विचारों को साधकों के हितार्थ व्यक्त किया था, कर रहे हैं और करते रहेंगे।

आचार्य श्री नागोजी भट्ट (भास्कर राय जी) ने 'सप्तशती' की गुप्तवती टीका एवं टिप्पणी में आनन्दातिरेक के कारण भाव-विभोर होकर विनम्र भाव से यह कह ही दिया कि मैं अत्यन्त गोपनीय रहस्य को प्रकाश में ला रहा हूँ। पुनरपि यह अत्यल्प ही है क्योंकि कोई कह नहीं सकता।

इस परमाराध्य सर्वाराध्य 'सप्तशती' पर अनेक संस्कृत टीकाएँ और भाष्य हिन्दी-बँगला-महाराष्ट्रीयादि सभी भारतीय भाषाओं में विद्यमान हैं तथा विभिन्न भक्तों, देशिकों, विद्वानों एवं महापुरुषों ने अपनी-अपनी शैलियों में इस गूढ़ रहस्य को बुद्धि-गम्य बनाने की चेष्टा की है तथा इसे आधिभौतिक, आध्यात्मिक एवं आधिदैविक अर्थों से विभूषित कर समय-समय पर भगवती की इच्छा से ही प्रकट किया है। इस गूढ़ विषय पर कुछ कहने की चेष्टा करना मेरा चाञ्चल्य एवं धृष्टता नहीं तो और क्या है ?

सप्तशती अथवा सप्तसती—भगवान् वेदव्यास ने श्री मार्कण्डेय पुराण के माध्यम से सात सौ मंत्रों (श्लोक नहीं) को लोक-कल्याणार्थ प्रकट किया है। अतएव इनकी संख्यात्मकता के आधार पर इसे 'सप्तशती' कहा जाता है। इसमें आद्या परा-शक्ति दुर्गा की तीन कलाओं—तमोगुण-स्वामिनी, रजोगुण-स्वामिनी और सत्व-गुण-स्वामिनी—महाकाली, महालक्ष्मी और महा-सरस्वती का चरित वर्णित है।

इसे 'सप्तशती' अथवा 'सप्तसती' दोनों ही कहा जाना सार्थक है। चिदम्बर संहिता कहती है—

"तस्मिन् देव्याः स्तवे पुण्ये मन्त्राः सप्तशतं शिवे। तस्मात् सप्तशती नाम स्तवं परम-दुर्लभम्।"

मेरु-तंत्र 'सप्तसती' नाम की व्याख्या इस प्रकार करता है—

"महाविद्येत्यादि सत्यः सप्त-कल्पे तथादिमे। ब्रह्मेन्द्र-गुरु-शुक्राणां विष्णु-रुद्र-सुर-द्विषाम्। उपास्या देवता जातास्ताश्चात्र ब्रह्मणा स्तुताः। तस्मात् सप्त-सतीत्येव व्यासेन परिकीर्त्तिता। ताश्च आद्य-चरिते—१ काली, २ तारा, ३ छिन्नमस्ता, ४ सुमुखी, ५ भुवनेश्वरी, ६ बाला, ७ कुब्जा; मध्य-चरिते—१ लक्ष्मी, २ ललिता, ३ काली, ४ दुर्गा, ५ गायत्री, ६ अरुन्धती, ७ सरस्वती; उत्तम-चरिते—१ नन्दा, २ शताक्षी, ३ शाकम्भरी, ४ भीमा, ५ रक्तदन्तिका, ६ दुर्गा, ७ भ्रामरी॥ या ब्राह्मी आदि चामुण्डान्ताः सप्त-सतयः॥"

प्रधान विषय:—'सप्तशती' में वर्णित माँ भगवती के चरित का क्या अभिप्राय है, यह तो मुझे भी ज्ञात नहीं है क्योंकि स्वयं भगवान् शंकर ने इस चण्डी-स्तव के संबंध में कहा है—

"सप्तशत्याश्च सकल तत्वं वेद्मयहमेव हि। पादोनं श्रीहरिर्वेत्ति वेत्त्यर्द्धं तु प्रजापतिः।
व्यासस्तुर्य्यांशिकं वेत्ति कोट्यंशमितरे जनाः।"

अर्थात् 'सप्तशती' का तत्व पूर्णतया केवल मैं ही जानता हूँ। श्री विष्णु भगवान् इसके तीन चरण ही जानते हैं, ब्रह्मा जी केवल दो अर्थात् आधा, व्यासदेव केवल एक अर्थात् चौथाई और साधारण लोग केवल करोड़वाँ भाग ही जानते हैं।

अतः मुझ जैसे अल्पज्ञ का इस विषय में प्रवेश करना मात्र धृष्टता ही है तथापि **"यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि"** के अनुसार **"या देवी सर्व-भूतेषु बुद्धि-रूपेण संस्थिता"** जगज्जननी भगवती को प्रणाम कर विज्ञ पाठकों को अपना कथ्य निवेदित कर रहा हूँ।

इस परमाराध्य 'सप्तशती' पर अनेक संस्कृत टीकाएँ, भाष्य एवं अनुवाद उपलब्ध हैं तथा समस्त भारतीय भाषाओं में भक्तों, विद्वानों एवं महापुरुषों ने इस गूढ़ विषय पर विचार रखे हैं। उनमें से प्रमुखतया जो विषय उभर कर दिखाई देते हैं, वे इस प्रकार हैं—

आध्यात्मिक स्वरूप—'सप्तशती' का प्रयोग आगमोक्त तथा निगमोक्त अर्थात् तन्त्रोक्त और वेदोक्त दोनों प्रकारों से होता है। ऐसा और कोई स्तव उपलब्ध नहीं है, जो इसकी बराबरी* कर सके। सर्व-दर्शन-सार श्रीमद्-भगवद्गीता में और इस 'चण्डी'-स्तव में समन्वय का बोध होता है। ऐसा लगता है कि जहाँ गीता दार्शनिक सिद्धान्त-वादिनी है, वहाँ 'सप्तशती' उन्हीं दार्शनिक तत्वों का पौराणिक कथानक के रूप में साधारण जनता तक को ज्ञान देनेवाली है। विस्तार-भय के कारण मात्र कुछ उदाहरण ही प्रस्तुत हैं—

१. गीता एवं सप्तशती दोनों के श्लोकों की संख्या समान अर्थात् ७०० है।

२. प्रथम चरित में राजा सुरथ के पूछने पर कि महामाया देवी कौन हैं? मेधा ऋषि कहते हैं—**"नित्यैव सा जगन्मूर्त्तिस्तया सर्वमिदं ततम्।"** इसकी साम्यता भगवान् श्रीकृष्ण की इस उक्ति से स्पष्ट होती है—**"मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्त-मूर्तिना।"** (गीता अ० ९)।

* डामर-तन्त्रे—**"नातः परतरं स्तोत्रं किञ्चिदस्ति वरानने!"**

इसी प्रकार की साम्यता "इत्थं यदा-यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति । तदा तदावतीर्याऽहं करिष्याम्यरि-संक्षयम्" (सप्तशती) से श्रीमद्-भगवद्गीता के "यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ! अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥" की स्पष्ट है। ऐसे अनेक प्रसंग और भी गिनाये जा सकते हैं।

३. गीता एवं सप्तशती के असुरों में भी साम्यता है :—

१. अहंकार* — शुम्भ । शुम्भ हिंसायां भावे घञ् ।
आत्मघ्न द्वैत - भाव - सम्पन्नः अहंकारः ॥
(बृहदा० - उप०)

२. ममत्व — निशुम्भ ।

३. काम रक्त-बीज । रक्तमनुरागः बीजं कारणमस्य । (रज्यते अनेन इति रागः कामः)

४. क्रोध धूम्र - लोचन । धूम्र-वर्णं रक्त-कृष्ण - लोचनं यस्य सः ।

५. बल चण्ड । चडि कोपे । बलं सामर्थ्यं काम - रागादि - युक्तं ।

६. दर्प मुण्ड । मुडि खंडने ।

७. परिग्रह सुग्रीव ।

गीता एवं 'सप्तशती' की साम्यता पर अन्वेषकों को आगे कार्य करना चाहिये । अब चरित-त्रय में वर्णित विषयों की आध्यात्मिक समीक्षा यदि की जाये, तो निम्नांकित तथ्य सामने आते हैं :—

प्रथम चरित—१. मधु-कैटभ के उत्पीड़न के कारण ब्रह्माजी द्वारा परमाद्या शक्ति की स्तुति की गई । तत्पश्चात् महा-मेधा प्रकट हुई और उन्होंने असुर-द्वय की बुद्धि भ्रष्ट कर दी । इसका सीधा-सा अर्थ समझा जा सकता है कि पाशव शक्ति से बुद्धि-शक्ति श्रेष्ठ है तथा उसके भ्रष्ट हो जाने पर व्यक्ति का विनाश ध्रुव है। यथा—"स्मृति-भ्रंशाद् बुद्धि-नाशो बुद्धि-नाशात् प्रणश्यति । (गीता)

* अहंकार और ममत्व दोनों एक ही शब्द "अस्मत्" से उत्पन्न होते हैं, जैसे शुम्भ और निशुम्भ दोनों सहोदर हैं ।

२. मधु-कैटभ अर्थात् सुकृत और दुष्कृत में निर्ममत्व तथा उसके निर्मूलन के नहीं, नियंत्रण का प्रयत्न है। "मधु" शब्द से कर्म-फल का बोध होता है जैसा कि कठोपनिषद् भाष्य कहता है "मधुमिष्टं कर्म - फलम्।" गीता में भी यही है—"बुद्धि-युक्तो जहातीह उभे सुकृति-दुष्कृते।" योग-दर्शन के १४वें और १५वें सूत्र भी यही कहते हैं—"ते ह्लाद-परिताप-फलाः पुण्यापुण्य-हेतुत्वात्। परिणाम-ताप-संस्कार-दुःखैर्गुण-वृत्ति-विरोधाच्च दुःखमेव सर्वं विवेकिनाम्।"

३. मेधा ऋषि, सुरथ राजा और समाधि वैश्य तीनों स्थूल रूप से ब्राह्मण[1], क्षत्रिय[2] और वैश्य[3] हैं।

गीता के शंकर-भाष्य के अनुसार "मेधया आत्म-ज्ञान-लक्षणया प्रज्ञया" अर्थात् ब्राह्मण का नाम है मेधा, जो आत्म-ज्ञान-लक्षण से युक्त हो। 'सुरथः' अर्थात् 'सुष्ठु रम्यतेऽत्र अतः सत्य-प्रवृत्ति-मार्ग-पथिकः।' इसका अर्थ यह है कि सुरथ उसे कहेंगे, जो सत्य-प्रवृत्ति-मार्ग का पथिक हो। वैश्य का नाम है 'समाधि'[4]। इस शब्द से निवृत्ति-मार्ग के पथिक का बोध होता है। इस प्रकार सत्य-प्रवृत्ति-मार्ग और निवृत्ति-मार्ग के पथिकों अर्थात् जिज्ञासुओं का मेधा की शरण में जाना उपयुक्त ही है।

इसी प्रकार और भी दृष्टांत दिये जा सकते हैं।

द्वितीय चरित—

१. देवासुर-संग्राम (महिष एवं देवताओं के बीच) का तात्पर्य मन एवं बुद्धि के बीच के युद्ध से है। यह द्वन्द्व चिरकाल से चलता आया है। ('द्वौ भूत-सर्गौ लोकेऽस्मिन् दैव आसुर एव च'—गीता)। 16-6

२. देवी के वाहन सिंह का अर्थ धर्म है। वैकृतिक रहस्य के अनुसार 'सिंहं समग्र-धर्ममीश्वरम्।' अतएव यह बोध होता है कि परमा शक्ति का वाहन अर्थात् बोध करानेवाला धर्म ही है। अधार्मिक भाव से परा-शक्ति का ज्ञान नहीं हो सकता।

३. महिषासुर के चौदह (सप्त-द्वन्द्व) सेना-नायक युद्ध में लड़े और मारे गये। गीता में भी इन सप्त-द्वन्द्वों को इस प्रकार

---

१. "ब्रह्म जानाति इति ब्राह्मणः"। २. "क्षरति रक्षति जनान् क्षतान् त्रायते, इति वा।"
३. "वेदाध्ययन-सम्पन्नः सः वैश्य इति संज्ञितः।"
४. 'समाधीयतेऽस्मिन् पुरुषोपभोगाय सर्वम् इति समाधिः।'
'समः सर्व-पर्यायः आधिः मनो-व्यथा यस्याऽसौ समाधिः।'

बताया है—१. सुख-दुःख, २. प्रिय-अप्रिय, ३. निन्दा-स्तुति, ४. मान-अपमान, ५. मित्र-शत्रु, ६. हर्ष-विषाद, ७. ऐश्वर्य-अनैश्वर्य।

इन द्वन्द्वों से उपरत हुये बिना परा-शक्ति का अनुभव होना असंभव है। महिष असुर पर कृपा करके भगवती उसके सेना-रूपी पूर्व-कृत कर्म का सम्यक् प्रकार से क्षय करके उसकी मुक्ति की कामना हृदय में रखकर उसका नाश (अविद्या-युक्त रूप से विद्या-युक्त रूप में परिवर्तित) करती हैं। यह गीता के इस कथन से पूर्णतः सिद्ध होता है—

अशास्त्र-विहितं घोरं तप्यन्ते ये तपोजनाः, दम्भाऽहंकार-संयुक्ताः काम - राग-बलान्विताः।
कर्षयन्तः शरीरस्थं भूत - ग्राममचेतसः, मां चैवान्तः शरीरस्थं तान् विद्धयासुर - निश्चयान्॥ 17/5,6

तृतीय चरित—१. इसमें स्थल-युद्ध एवं आकाश-युद्ध का वर्णन है। इसी प्रकार व्यष्टि में मूलाधार-चक्र (पृथ्वी-तत्व) से विशुद्धि-चक्र (आकाश-तत्व) तक युद्ध होता है और इसमें विजयी ही आज्ञा-चक्र की स्थिति में पहुँचता है। इसके बाद सहस्रार तक पहुँचने में कोई रुकावट नहीं होती है। इसका रहस्य तो योगी ही उद्घाटित कर सकता है।

२. इस चरित से यह भी निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सात्विक उपासना का फल अति हितकर होता है। सद्-भावाश्रितों की विजय असद्-भावाश्रितों पर निश्चित रूप से होती है।

३. सारा जगत् भगवती से ओत-प्रोत है। उसके अतिरिक्त किसी की भी सत्ता इस संसार में नहीं है, इसकी पुष्टि शुम्भ एवं भगवती के संवाद से होती है। भगवती का यह कथन कि **"अरे, ये मेरी विभूतियाँ हैं, वास्तव में मैं एक ही हूँ"** ध्यान देने योग्य है।

वैसे तो अध्यात्म एक अथाह समुद्र है। मुझ जैसे अल्पज्ञ ने मात्र संकेत किया है। 'सप्तशती' के इन चरित-त्रय में जो जितने गहरे गोते लगाएगा, उसे दुर्लभ मोती अवश्य ही प्राप्त होंगे।

सप्तशती और चक्र-व्यवस्था

श्रीमदाद्य शंकराचार्य-विरचित 'दण्डैश्वर्य-विधान' में प्रणव की मात्राओं (अकार, उकार, मकार) का वर्णन किया है। अकार में विशुद्ध, अनाहत और स्वाधिष्ठान-चक्र समाहित होते हैं। उकार में मणिपूर, मूलाधार एवं आज्ञा-चक्र सन्निविष्ट हैं।

मकार में अनाहत और मणिपूर, मणिपूर और स्वाधिष्ठान, स्वाधिष्ठान और विशुद्ध, विशुद्ध और अनाहत का समावेश होता है। इस अंतिम उपाम्नाय में ही सम्पूर्ण सप्तशती का वर्णन हुआ है।

प्रत्येक चक्र आम्नाय का पर्यायवाची संकेत है। जैसे मूलाधार को अधर-आम्नाय या पातालाम्नाय भी कहा जाता है। स्वाधिष्ठान चक्र पूर्वाम्नाय का पर्यायवाची है। मणिपूर चक्र एवं दक्षिणाम्नाय एक ही हैं। अनाहत चक्र एवं पश्चिमाम्नाय में कोई अन्तर नहीं है। विशुद्ध उत्तराम्नाय का दूसरा नाम है। आज्ञा-चक्र ऊर्ध्वाम्नाय है। इन्हीं छः चक्रों को भगवान् शिव के छः मुख कहा गया है। जब भी एक साथ दो मुखों से जो मंत्र अथवा ध्यान उत्पन्न हुआ, तो वह एक तृतीय नाम (दोनों मुखों का मिश्रित) बन गया। इन्हें यों भी समझा जा सकता है कि दो चक्रों से मिलकर तीसरे चक्र का निर्माण होता है। इस तृतीय चक्र में अपने पूर्व के दोनों चक्रों की विशेषताएँ अवस्थित रहती हैं। इसे गणितीय भाषा में इस प्रकार भी समझा जा सकता है—

विशुद्ध (उत्तर) + स्वाधिष्ठान (पूर्व) = अधोमुख स्वाधिष्ठान = ईशानाम्नाय – महा-काली
मणिपूर (दक्षिण) + स्वाधिष्ठान (पूर्व) = अधो – मणिपूर = आग्नेयाम्नाय – महा-लक्ष्मी
अनाहत (पश्चिम) + मणिपूर (दक्षिण) = अधो – अनाहत = नैऋत्याम्नाय – चामुण्डा भद्र-काली
विशुद्ध (उत्तर) + अनाहत (पश्चिम) = अधो – विशुद्ध = वायव्याम्नाय – महा-सरस्वती

उक्त व्यवस्था का अध्ययन करने के पश्चात् यदि 'सप्तशती' से तुलना की जाये, तो अत्यधिक साम्यता दिखाई देती है। देवी के तीन चरितों का वर्णन 'सप्तशती' में है। ईशानाम्नाय की नायिका महा-काली प्रथम अध्याय में वर्णित हैं। यह शुद्ध-सत्वा देवी हैं। मंत्र, ऐश्वर्य एवं पूर्ण-सात्विकता के गुणों से 'सप्तशती' का आरम्भ होता है। मोटी भाषा में कहा जाए, तो यों समझना होगा कि उपासना की पृष्ठ-भूमि सात्विक होना अपेक्षित है। वैसे भी शुद्ध सात्विक आज्ञा-चक्र का लक्षण है तथा उसका प्रतिबिम्ब स्वाधिष्ठान पर पड़ता है अर्थात् सात्विकता का उदय अधोमुख स्वाधिष्ठान से होता है तथा उसकी पूर्णता आज्ञा-चक्र में होती है। अतः प्रथम चरित पूर्णतः शारीरिक विज्ञान पर आधारित चक्रों की व्यवस्था के सर्वथा अनुकूल सिद्ध होता है।

द्वितीय चरित गुणों (अर्थात् सत्व, रज, तम) को समाहित किये है। इसमें अधोमुख मणिपूर की नायिका महालक्ष्मी का चरित वर्णित है। दूसरे से चौथे तक कुल मिलाकर तीन अध्याय हैं और तीनों गुण इसमें वर्णित हैं। महालक्ष्मी अधोमुख-मणिपूर की अधिष्ठात्री देवी हैं अर्थात् तेज (मणिपूर-दक्षिण) एवं जल (स्वाधिष्ठान-पूर्व) का सम्मिश्रण है। तेज एवं जल-सम्बन्धी सारी उपलब्धियाँ इस चरित द्वारा उपलब्ध होती हैं।

तृतीय चरित में तीनों गुणों की विवेचना इस प्रकार है :—

सत्व में — सत्व-सत्व,	सत्व-रज,	सत्व-तम
रज में — रज-सत्व,	रज-रज,	रज-तम
तम में — तम-सत्व,	तम-रज,	तम-तम

अधोमुख अनाहत (तेज + वायु) अथवा मणिपूर + अनाहत (पश्चिम + दक्षिण) एवं अधोमुख विशुद्ध (आकाश + वायु अथवा विशुद्ध + अनाहद—उत्तर + पश्चिम) दोनों की विशेषताएँ अध्याय ५ से लेकर अध्याय १३ तक वर्णित हैं। चामुण्डा भद्रकाली असीम तेज (वायु + तेज) एवं वेग की स्वामिनी हैं। महासरस्वती (वायु + आकाश) चिद्-रूपा एवं जगत्-व्यापिनी महामाया हैं। साधना की सर्वोत्कृष्ट स्थिति उक्त दोनों चक्रों के विकसित होने पर होती है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि साधना की सीढ़ियों की स्थितियाँ एवं उपलब्धियाँ इन चरित-त्रय से उपलब्ध हो सकती हैं। 'सप्तशती' के प्रच्छन्न बीजों का पाठ करनेवाले पर यह प्रभाव पड़ता है कि उसके शरीर में चक्र स्वतः विकसित होते जाते हैं और साधक उत्तरोत्तर त्वरित गति से अपने गन्तव्य की ओर बढ़ता जाता है। अर्थात् कुण्डलिनी-जागरण की प्रक्रिया शुद्ध एवं सात्विक विधि से पाठ करने पर अपने आप पूरी होती जाती है और साधक अपनी आत्मिक उन्नति की ओर अग्रसर होता जाता है। 'सप्तशती' के सम्बन्धित चक्रों का चिन्तन करते हुये चरितों का ध्यानपूर्वक पाठ करने से साधक का आध्यात्मिक जागरण सहज में ही होकर सारी प्रक्रियाएँ सद्यः फल-दायिनी हो जाती हैं।*

* इस विषय में आदि शंकराचार्य ने 'दंडैश्वर्य-ग्रहण-विधान पद्धति' में कुंडलिनी-जागरण का विशद विवेचन किया है।

'सप्तशती' के देवताओं का परिचय

इस ग्रन्थ में तेरह अध्याय एवं तीन चरित (प्रथम-मध्यम-उत्तम) हैं। कवच-रहस्यादि इसके शास्त्रीय सहयोगी अंग हैं। निगमागमों का सार ही इन श्लोकों में उपनिबद्ध है तथा पुरुषार्थ-चतुष्टय की प्राप्ति ही इसका फल है।

१ इस ग्रन्थ के प्रथम अध्याय में महाकाली अधिदेवता हैं, जो पूर्वाम्नाय एवं उत्तराम्नाय का ही मिश्रित रूप है। प्रथम चरित में इन्हीं का ध्यान किया जाता है।

२ द्वितीय अध्याय की अधिदेवता आग्नेयाम्नायात्मिका महालक्ष्मी हैं, जो पूर्वाम्नाय एवं दक्षिणाम्नाय का मिश्रित रूप है।

३ तृतीय अध्याय की अधिदेवता ऊर्ध्वाम्नायात्मिका भैरवी देवी हैं।

४ चतुर्थ अध्याय की अधिदेवता सर्वाम्नायात्मिका जय-दुर्गा देवी हैं।

५ पञ्चम अध्याय की अधिदेवता महासरस्वती हैं, जो पश्चिमाम्नाय एवं उत्तराम्नाय का मिश्रित रूप हैं। इन्हें ही वायव्याम्नायात्मिका भी कहा गया है।

६ छठे अध्याय की अधिदेवता अधराम्नायात्मिका पद्मावती (धूमावती) देवी हैं।

७ सप्तम अध्याय की अधिदेवता पश्चिमाम्नायात्मिका मातंगी देवी हैं।

८ अष्टम अध्याय की अधिदेवता ऊर्ध्वाम्नायात्मिका भवानी हैं।

९ नवम अध्याय की अधिदेवता ऊर्ध्वाम्नायात्मिका अर्द्ध-नारीश्वरी देवी हैं।

१० दशम अध्याय की अधिदेवता ऊर्ध्वाम्नायात्मिका कामेश्वरी देवो हैं।

११ एकादश अध्याय की अधिदेवता पूर्वाम्नायात्मिका भुवनेश्वरी देवी हैं।

१२ द्वादश अध्याय की अधिदेवता सर्वाम्नायात्मिका आग्नेय दुर्गा देवी हैं।

१३ त्रयोदश अध्याय की अधिदेवता त्रिपुर-सुन्दरी अधिष्ठात्री सर्वाम्नायात्मिका होती हुई ऊर्ध्वाम्नायात्मिका बन कर पश्चिमाम्नायात्मिका देवी बनती हैं, जिनका न्यास, ध्यान, पूजा पश्चिमाम्नायात्मिका है। सम्पूर्ण 'सप्तशती' को ही पश्चिमाम्नायात्मिका कहा गया है।

अब तीनों चरितों के सम्बन्ध में संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है। मरीचि-तंत्र में लिखा है कि **"चरिते-चरिते राजन् ! जपेन्मन्त्रं नवाक्षरम्"** । इस पर भी हम लोग विचार नहीं करते हैं। विद्वान् साधकों एवं पाठकों के समक्ष इसी विषय का प्रतिपादन करने का दुःसाहस कर रहा हूँ।

'सप्तशती' के प्रथम चरित में मधु-कैटभ-बध एवं ब्रह्मा जी की स्तुति का वर्णन है। इसकी अधिष्ठात्री शक्ति दश-वक्त्रा महाकाली हैं। इन्हें ईशानाम्नायात्मिका नवाक्षरी विद्या भी कहते हैं। ईशानाम्नाय पूर्वाम्नाय के योग से बनता है। ईशानाम्नाय की सहयोगिनी ही पूर्वाम्नायात्मिका सप्ताक्षरी रक्त-दन्तिका एवं एकादशाक्षरी सिद्ध-लक्ष्मी हैं तथा उत्तराम्नायात्मिका चतुर्दशाक्षरी पञ्च-वक्त्रा महाकाली हैं। पूर्वाम्नायात्मिका रक्त-दन्तिका हैं, जो सप्ताक्षरी हैं।

यह साधकों के लिये मन्त्र-सिद्धि एवं सहयोग तथा ऐश्वर्य-प्रदात्री हैं। पूर्वाम्नायात्मिका एकादशाक्षरी सिद्ध-लक्ष्मी ज्ञान, योग एवं ऐश्वर्य-प्रदात्री हैं। यह एकादशाक्षरी परम ज्ञान से युक्त होने के कारण दिव्य यथार्थ ज्ञान द्वारा एकादश इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कराती हैं।

यह सिद्ध-लक्ष्मी पञ्चानना एवं चतुर्मुखा हैं एवं चतुर्भुजा, षड्-भुजा, अष्ट-भुजा हैं। इन भुजाओं में सुशोभित जो इनके आयुध हैं, वे भक्तों के अभीष्ट-प्रदायक हैं। दश-वक्त्रा महा-काली के आयुध दक्षिणहस्त से अधः-क्रमानुसार—१ खड्ग, २ वाण, ३ गदा, ४ शूल, ५ चक्र, ६ शंख, ७ भुशुण्डि, ८ परिघ, ९ चाप और १० शिर हैं।

सिद्ध-लक्ष्मी का ध्यान तीन प्रकार से दिया गया है। जब रक्त-दन्तिका के साथ इनका ध्यान होगा, तब पञ्च-वक्त्रा महा-काली, एक-मुख रक्त-दन्तिका एवं चतुर्मुख सिद्ध-लक्ष्मी की पूजा होती है। जब केवल सिद्ध-लक्ष्मी एवं पञ्च-वक्त्रा काली होंगी, तब मन्त्र नवाक्षरी पञ्च-मुखी हो जायेगा। साधकों के लिये यह जानना आवश्यक है कि किस समय हम पञ्च-मुखी का प्रयोग करें एवं किस समय चतुर्मुखी का। यह ज्ञान गुरु-जनों से प्राप्त करें।

पञ्च-वक्त्रा महा-काली ज्ञान को सुदृढ़ बनानेवाली, मन्त्र-सिद्धि-दात्री एवं ऐश्वर्य-प्रदान-कर्त्री हैं। चार मुखवाली सिद्धि-लक्ष्मी, एक-मुखवाली रक्त-दन्तिका एवं पञ्च-वक्त्रा महा-काली के मिलने से यह देवी दश-मुखवाली कहलायीं। इनमें पाँच मुख पूर्वाम्नायात्मिका के एवं पाँच मुख उत्तराम्नायात्मिका के हैं। यह नवाक्षरी मन्त्र है। इसी को प्रथम चरित का नवार्ण कहते हैं। इनका शिव षडक्षर है। इसका विशेष ज्ञान गुरु-मुख से दीक्षित व्यक्ति को लेना चाहिये।

यह विशेष ज्ञातव्य है कि इस चरित का शारीरिक रचना-विशेष से भी सम्बन्ध है। यह कर्म-काण्ड का प्रतीक है। जो व्यक्ति इस रहस्य को समझ-बूझकर इसका पाठ करता है, उसे दिव्य अनुभव-युक्त ज्ञान-विज्ञान अवश्य ही प्राप्त होता है तथा उसका नाड़ी-संस्थान शुद्ध एवं दिव्य हो जाता है।

अकार के १८ भेद हैं। प्रायः सभी व्यक्ति इन अकारों का किसी-न-किसी रूप में उच्चारण करते हैं परन्तु ज्ञान न होने के कारण वे इनके यथार्थ स्वरूप को नहीं पहचानते। यही स्थिति इस सम्बन्ध में साधक की भी है।

मध्यम चरित महिषासुर-वध के वर्णन से सम्बन्धित है। महिषासुर साक्षात् शिव रम्भासुर का पुत्र था। रम्भासुर ने घोर तप करके शिव को प्रसन्न किया था तथा स्व-सदृश पुत्र-प्राप्ति का वरदान माँगा था। तब महिषी के गर्भ से शिव स्वयं आविर्भूत हुये थे। तदनन्तर महिषासुर ने उग्र तप कर ब्रह्माजी से वर माँगा कि नारी के अतिरिक्त किसी से मेरी मृत्यु न हो। वर-प्राप्ति से मदोन्मत्त होकर इन्द्रादि देवताओं को पद-च्युत कर वह स्वयं इन्द्रासन ग्रहण करने का प्रयत्न करने लगा। महा-माया भगवती इस राक्षस का संहार करने के लिये महिषासुर-मर्दिनी के रूप में स्वयं अवतरित हुई तथा एक समय महा-लक्ष्मी, एक समय उग्र-चण्डा तथा एक समय कात्यायनी बनीं।

ये आग्नेयात्मिका हैं। आग्नेयाम्नाय, दक्षिणाम्नाय एवं पूर्वाम्नाय के योग से कोणात्मिका सिद्ध होती हैं। दक्षिणाम्नायात्मिका चतुस्त्रिंशाक्षरा बगलामुखी और पूर्वाम्नायात्मिका सप्तविंशति-अक्षरात्मिका कमला महा-लक्ष्मी ही प्रधान हैं। इस प्रकार दोनों के योग से आग्नेयात्मिका नवार्ण महा-लक्ष्मी बनती हैं। महा-लक्ष्मी अठारह भुजा की हैं। इनके आयुध (बगलामुखी के ८ आयुध एवं कमला महा-लक्ष्मी के १० आयुध मिलाकर १८ हुये) दक्षिण-हस्त से अधः-क्रमानुसार—'अक्षमाला-चक्र-कमलं वाणौ असि कुलिशं गदा। त्रिशूलं परशुः चक्र-शंखौ घंटा च पाशकः। शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पान-पात्रं कमण्डलुः।'

उत्तम चरित को भी विद्वज्जन प्रथम और मध्यम चरित के सदृश्य ही समझ लेवें। महासरस्वती इसकी वायव्याम्नायात्मिका नायिका हैं। यह पश्चिमाम्नाय एवं उत्तराम्नाय के योग से बनती हैं। वायव्याम्नायात्मिका महा-सरस्वती में नैऋत्याम्नायात्मिका चामुण्डा भद्र-काली अन्तर्लीन व अन्तर्भूत हैं। दक्षिणाम्नायात्मिका तारा, पश्चिमाम्नायात्मिका मोहिनी मातंगी सरस्वती ये दोनों मिलकर नैऋत्याम्नायात्मिका चामुण्डा भद्र-काली हैं, जो महा-सरस्वती से समष्टि होती हैं। ब्राह्मी, वैष्णवी, ऐन्द्री, कौमारी, वाराही, नारसिंही और चामुण्डा ये सात शक्तियाँ हैं।

इसमें जो नवार्ण है, उसकी शक्ति चामुण्डा नवाक्षरी अष्टादश-भुजा, उग्र-चण्डा द्वा-त्रिशदक्षरात्मिका हैं। दश-भुजा कात्यायनी एक-विंशति एवं अष्टादशाक्षरात्मिका हैं। षोडश-भुजा भद्र-काली द्वा-त्रिशद् व अष्टा-विंशति अक्षरात्मिका हैं। श्री-कल्प में उग्र-चण्डा व काली-कल्प में भद्र-काली की पूजा होती हैं। कात्यायनी दुर्गा की दुर्गा-कल्प में पूजा होती है। वैसे ये तीनों दुर्गा ही हैं।

प्रथम चरित—ईशानाम्नायात्मिका

सिद्ध-लक्ष्मी		पञ्च-वक्त्रा		महा-काली—रक्तदन्तिका महा-काली				कुल
११	+	१४	+	७	+	९	=	४१

मध्यम चरित—आग्नेयाम्नायात्मिका

बगला		कमला		महालक्ष्मी		कुल
३४	+	२७	+	९	=	७०

उत्तम चरित—वायव्याम्नायात्मिका

छिन्नमस्ता		भद्र-काली		चण्ड-मातंगी		महा-सरस्वती		कुल
६	+	१४	+	१५	+	९	=	४४

नैऋत—मोहिनी मातंगी सरस्वती तारा दोनों मिलकर—चामुण्डा भद्र-काली						कुल
९	+	१२	+	९	=	३०

पश्चिमाम्नायात्मिका के बाह्य-याग, दक्षिणाम्नाय के अन्तर्याग में नैऋत-आम्नाय की पूजा होती है परन्तु इसमें क्षुद्र-विद्या होने के कारण अन्तर्याग नहीं किया जाता। इसकी समष्टि वायव्याम्नाय में ही होती है। इसी प्रकार दक्षिणाम्नाय के बाह्य-याग, पूर्वाम्नाय के अन्तर्याग, पूर्वाम्नाय के बाह्य-याग, उत्तर के अन्तर्याग, उत्तर के बाह्य-याग और पश्चिम के अन्तर्याग से सप्तशती की पूजा होती है।

अन्तर्याग—बाह्य-याग की सूक्ष्म दिग्दर्शन-विधि

कनिष्ठा—अधराम्नाय, अनामिका—पूर्वाम्नाय, मध्यमा—दक्षिणाम्नाय,
तर्जनी—पश्चिमाम्नाय, अंगुष्ठ—उत्तराम्नाय, मणिबन्ध—ऊर्ध्वाम्नाय।

यथा—पूर्वाम्नाय के अन्तर्याग में, पूर्वाम्नाय के मंत्र के द्वारा पूर्वाम्नाय के चक्रों से प्रारम्भ कर सभी चक्रों में न्यास एवं मन्त्र-चिन्तन करे।

दक्षिणाम्नाय के बाह्य-याग में कर-न्यास, हृदयादि-न्यास, दक्षिणाम्नाय के मंत्र से होगा। तदनन्तर आग्नेयात्मिका नायिका का न्यास एवं ध्यान अधोमुख-मणिपूर में करके पाठ प्रारम्भ किया जाये। इस प्रकार सभी उपाम्नायों का (जो दो आम्नायों से मिलकर बने हैं) न्यास एवं ध्यान करके पाठारम्भ करना चाहिये।

इस चिन्तन से सभी विद्याओं का साक्षात्कार होता है और वे अपनी रहस्य-मय गुत्थियों को सुलझाकर साधक को आगे ले जाती हैं। इन गुत्थियों को सुलझाने के सम्बन्ध में स्वयं भगवती ने गुह्यतम रहस्य को प्रकट किया है।

टिप्पणी—अधोमुख स्वाधिष्ठान ईशानाम्नाय-नायिका का स्थान है एवं अधोमुख मणिपूर-चक्र आग्नेयाम्नाय-नायिका का स्थान है। अधोमुख अनाहत नैऋत्याम्नाय-नायिका का स्थान है। अधोमुख विशुद्ध वायव्याम्नाय-नायिका का स्थान है। इन चारों चक्रों की समष्टि ललना-चक्र में होती है।

—'यति-दण्डैश्वर्य-विधान'

इस प्रकार सप्तशती में ईशानाम्नाय के ४१ मन्त्राक्षर, आग्नेयाम्नाय के ७०, नैऋत्याम्नाय के ३० और वायव्याम्नाय के ४४ हैं। सात-सात शक्तियाँ और उनके मन्त्राक्षर—भ्रामरी, शाकम्भरी, भीमा, नन्दा, रक्त-दन्तिका, दुर्गा, भुवना। इनके अतिरिक्त महामाया, महा-काली, महा-मारी, क्षुधा, तृष्णा, एक-वीरा इत्यादि को रहस्य-त्रयादि में स्पष्ट देखें। इत्यादि सहयोगी देवियों के मण्डल के मन्त्रों के बीजाक्षर मिलकर एक हजार मन्त्राक्षर बनते हैं। इन सभी अक्षरों को भगवान् व्यास जी ने यथावत् तत्-तत् स्थान पर गुप्त रूप से स्थापित किया है। ये तेरह अध्याय सहस्राक्षरा-गर्भित 'सप्तशती' साक्षात् जगदम्बा, पराम्बा एवं चिदम्बा ही हैं।

नवार्ण-वर्णन

इस 'सप्तशती' में नवार्ण मन्त्र की प्रधानता है। प्रथम चरित का 'महाकाली-नवार्ण' कहलाता है। यह नव-अक्षरात्मक है। इसका रुद्र भैरव है, जो षडक्षर-मन्त्रवाला है।

द्वितीय चरित (मध्यम) का 'महालक्ष्मी नवार्ण' है, जो नौ अक्षरों का है। इसका विष्णु भैरव है, जो अष्टाक्षर है।

उत्तम चरित का ब्रह्मा भैरव है, जिसका षडक्षर मन्त्र है। 'महा-सरस्वती नवार्ण' है।

समष्टि-नवार्ण जो उपाम्नायेश्वरी पश्चिमाम्नायात्मिका त्रिशक्ति चामुण्डा है, नौ अक्षरोंवाला है। इसका भैरव भीषण है, जिसका दशाक्षर मन्त्र है।

'सप्तशती' के चार उपाम्नायों में नौ-नौ अक्षर वाले नवार्ण हैं। एक समष्टि-नवार्ण है। इस प्रकार सम्पूर्ण 'सप्तशती' का पैंतालीस अक्षरोंवाला नवार्ण-समष्टि बनता है। विद्वान् साधक **'चरिते-चरिते राजन् ! पठेन्मन्त्रं नवाक्षरम्'** का विचार करते हुये भगवती के उपासकों को यह रहस्य बताकर अनुग्रहीत करें।

इस प्रकार 'सप्तशती' पर संक्षिप्त परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है। विद्वद्-वर्ग इसे ध्यानपूर्वक पढ़कर हमें अपनी अन्वेषणात्मक सम्मति प्रदान करेंगे।

सप्तशती - पाठ

'पुस्तक-पूजा'—पूजा का एक अंग है। यथा—**"पुस्तकं पूजयेद् भक्त्या त्वरित-फल-सिद्धये।"**

सप्तशती-पाठ—इस सम्बन्ध में कोई इस ग्रन्थ के २४, कोई ३० और कोई ५९ अंग मानते हैं। वैसे सप्तशती के पाठ के पूर्व कवचादि* कर मध्य में तेरह अध्यायात्मिका सप्तशती का पाठ कर त्रि-रहस्यादि का पाठ करना ही पाठ-विधि मानते हैं। इस

---

* अर्गलं कीलकं चादौ पठित्वा कवचं पठेत्। जपेत् सप्तशतीं पश्चात् सिद्धि - कामेन मन्त्रिणा ॥—चिदम्बर-संहिता
अर्गला दुरितं हन्ति कीलकं फलदं भवेत्। कवचं रक्षयेन्नित्यं तस्मादेतत् त्रयं पठेत् ॥
कवचं बीजमादिष्टमर्गला शक्तिरुच्यते। कीलकं कीलकं प्राहुः सप्तशत्या महा - मनोः ॥—योग - रत्नावली
रात्रि - सूक्तं जपेदादौ मध्ये सप्तशती - स्तवम्। प्रान्ते तु जपनीयं वै देवी - सूक्तमिति क्रमः ॥

सम्बन्ध में हर-गौरी-संवाद में कहा गया है कि दुर्गा के २४ अंग हैं :—

कवचं ह्यर्गला चैव कीलकं च तथैव च त्रि-सूक्तं त्रि-रहस्यं च आपदुद्धारकं तथा । कुञ्जिका त्रि-दशाध्याया: दुर्गाङ्गानि इमानि वै ।

त्रिशक्ति-चामुण्डा-जप-विधानम्

"शतमादौ शतं चान्ते जपेन्मन्त्रं नवार्णकम् । चण्डीं सप्तशतीं मध्ये सम्पुटोऽयमुदाहृतः ॥"

चरित-त्रय-जप-विधानम्—

"चरिते चरिते राजन् जपेन्मन्त्रं नवाक्षरम् । शतमादौ शतं चान्ते विधानेन तु सुव्रत ॥
बीजं बिना महा-स्तोत्रं न सिद्धयति कदाचन । तस्मात् सर्वं - प्रयत्नेन बीज-युक्तं सदा पठेत् ॥"

"अंग - हीनो यथा देही सर्वं - कर्मसु न क्षमः ।"

यहाँ यह कहना भी अप्रासांगिक नहीं होगा कि गोंडल से प्रकाशित "श्री दुर्गा सप्तशती" (द्वितीय संस्करण संवत् १९९२) में षोडशांगों का विवरण दिया है। उन सभी अंगों का समावेश इस ग्रंथ में दिये गये २४ अंगों में हो जाता है। इसी प्रकार उक्त "श्री दुर्गा-सप्तशती" में सात सौ मंत्रों को दिया है जबकि "श्री दुर्गार्चन-सृति" (प्रकाशित १९३४) में सात सौ मंत्रों को यथावत् न देकर परिशिष्ट में दिया है। "प्रस्तुत ग्रंथ" में उन सात सौ मंत्रों को जहाँ होना चाहिये, वहीं दिया गया है।

अन्तर्याग और बहिर्याग के साथ-साथ प्रत्येक आम्नाय के महा-षोढा-न्यास का विधान भी इस ग्रंथ में दिया गया है, जिसे अवश्य ही किया जाना चाहिये। ये सभी न्यास, न्यासांग में दिये हैं। यथा—"न्यासो ध्याना....सप्तांग-राजमुच्यते।"

इस ग्रंथ में कवच, अर्गला, कीलक, त्रिसूक्त, त्रिरहस्य, आपदुद्धारक, कुञ्जिका, न्यास (महा-षोढा-न्यास सहित), ध्यान, आवाहन, दल, हृदय, उत्कीलन एवं तेरह अध्याय—ये सभी अंग हैं।

पश्चिमाम्नायात्मिका का बहिर्न्यास (३) तथा दक्षिण आम्नाय का न्यास (३) चक्रों में होता है। यह नैऋत्याम्नाय का

एक महा-षोढा-न्यास हुआ। इसी प्रकार अन्य आम्नायों के विषय में समझ लेना चाहिये। प्रत्येक आम्नाय में तीन-तीन अन्त-र्बाह्य न्यास किये जाने चाहिये।

न्यासो ध्यानावाहने च नाम - सूक्तानि चाप्यनु। दलं च हृदयं चैव कवचार्गल - कीलकम्॥
दशांगमेतद् विज्ञेयमिति ग्राह्यं सनातनम्। दशांगानि च जप्त्वा तु पश्चात् सप्तशतीं पठेत्॥
स्वाम्यमात्यश्च राष्ट्रं च दुर्गं कोशो बलं सुहृद्। परस्परोपकारीदं सप्तांग राज्यमुच्यते॥

अतः पाठ-क्रम इस प्रकार होना चाहिये—१ संकल्प, २ शापोद्धार, ३ उत्कीलन, ४ न्यास, ५ कवचार्गला-कीलक, ६ नवार्ण, ७ रात्रि-सूक्त, ८ दल, ९ हृदय, १० तेरह अध्याय सप्तशती, ११ देवी-सूक्त, १२ रहस्य-त्रय, १३ क्षमा-याचना।

इस सप्तशती के मूल सात सौ श्लोकों के सात सौ बीज-मन्त्र व सात सौ नाम भी प्राप्त हैं, जो संभवतः हवन के समय प्रत्येक श्लोक के साथ जोड़कर प्रयोग में लाये जाते हैं।

सप्तशती के पाठ में ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यासियों के लिए सृष्टि-क्रम पाठ, स्थिति-क्रम पाठ, लय-क्रम पाठ आदि क्रम से पाठ करने की भी व्यवस्था है।* (निगमागमानुसंधान-केन्द्र के अन्वेषण में सब वहाँ प्राप्त हैं।)

---

*सृष्टि-क्रम—

सावर्णिः सूर्य्य-तनयो सावर्णिर्भविता मनुः।

स्थिति-क्रम—

पुरा शुम्भ-निशुम्भाभ्याम् यथा-वत् कथयामि ते।

लय-क्रम—

सावर्णिर्भविता मनुः सावर्णिः सूर्य्य-तनयो।

सृष्टि-क्रम ब्रह्मचारी के लिये, स्थिति-क्रम गृहस्थ के लिए, लय-क्रम वानप्रस्थ के लिये एवं संन्यासियों के लिये। तीनों क्रम से पाठ करनेवालों को प्रातःकाल में सृष्टि, मध्याह्न में स्थिति, सायंकाल में लय-क्रम से पाठ करना चाहिये।

इस प्रकार 'सप्तशती' में सभी महाविद्या, सिद्ध विद्या, उपविद्या एवं अन्तरंग शक्ति व उनके उत्कर्ष, गौरव, बल, प्रताप, करुणादि मातृ-गुण-गणों का शास्त्रीय विधि से परिचय दिया गया है, जिसके पूजा-पाठ से भक्त-गण स्वयं निर्भय हो स्वयं को चतुर्विध पुरुषार्थ का अधिकारी मानता है।

'सप्तशती' को गुरु से दीक्षा प्राप्त कर गुरु-मुख से पढ़े, तदनन्तर पाठारम्भ करे। 'सप्तशती'-पाठ में 'इति', 'वध', 'आदि' और 'अध्याय' बोलने का निषेध किया गया है।

इति शब्दो हरेल्लक्ष्मीं वधः कुल - विनाशकः। अध्यायो हरते प्राणान् मार्कण्डेयादिकं वदेत् ॥

एतदतिरिक्त 'सप्तशती' से सम्बन्धित अनेक बातें हैं, जो निगमागमानुसंधान-केन्द्र से ज्ञातव्य हैं तथा गुरु-मुख-गम्य एवं अनुभव-गम्य हैं।

प्रस्तुत 'सप्तशती' में सर्व-प्रथम मार्कण्डेय उत्तर-पुराणोक्त सात सौ पचपन मूल श्लोकों को उद्धृत किया गया है। चण्डी-कवच, काली, दुर्गा, सरस्वती, लक्ष्मी-कवच आदि अन्वेषणात्मक भूमिका के साथ दिये गये हैं। त्रिसूक्त+परा-सूक्तादि से विभूषित इस संस्करण का प्रकाशन स्वयमेव एक विशिष्टता है। इस 'सप्तशती' में जो आद्योपान्त पाठ-क्रम निर्दिष्ट है, वह सद्यः अभीष्ट फल-प्रद है। अनेक भक्तों, साधकों द्वारा अनुभूत यह प्रयोग चमत्कारी सिद्ध हुआ है।

भगवती महामाया चिदम्बा की प्रेरणा से ही प्रेरित हो इसकी संक्षिप्त भूमिका आपके समक्ष प्रस्तुत की गई है। स्वयमेव यह ग्रन्थ वाञ्छा-कल्पतरु, शाक्तों का सर्वस्व, भक्तों का प्राण, सन्तों का संरक्षक, आर्तों का त्राता, अनाथों का नाथ, भव-बन्धन में बद्धों का मुक्ति-दाता, प्रशस्त, शान्त, प्रमोदात्मिका महामाया भगवती ही तो हैं—

या माया मधु-कैटभ-प्रमथिनी या माहिषोन्मूलिनी,
या धूम्रेक्षण-चण्ड-मुण्ड-शमनी या रक्त-बीजाशनी।
या शुम्भ-निशुम्भ-दैत्य-दमिनी या सिद्ध-लक्ष्मीः परा
सा चण्डी नव-कोटि-मूर्ति-सहिता मां पातु विश्वेश्वरी ॥

यत्रास्ति भोगो नहि तत्र मोक्षो, यत्रास्ति मोक्षो नहि तत्र भोगः ।
श्रीसुन्दरी - सेवन - तत्पराणां, भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव ॥

विनीत
स्वामी तत्त्वबोधाश्रमः

एक निवेदन

एक दिन प्रातःकाल मन में यह संकल्प उठा कि 'दुर्गा सप्तशती' के पाठ का शास्त्रोक्त एवं सही विधान क्या है ? इसी जिज्ञासा की पूर्ति हेतु तत्काल ही स्वामीजी के श्रीचरणों में उपस्थित हुआ । अन्य चर्चाओं के बीच ही मेरा जिज्ञासु मन यह प्रश्न कर ही बैठा । परम पूज्य स्वामीजी ने तत्क्षण ही 'सप्तशती' के स्वरूप एवं उसके पाठ के अंगोपांगों का विस्तृत विवेचन करते हुये कहा कि आजकल 'सप्तशती' के जो संस्करण उपलब्ध हैं तथा उनमें उसके पाठ का जो विधान निर्दिष्ट है, वह अपूर्ण-सा है । यही कारण है कि साधकों को अभीष्ट की प्राप्ति नहीं होती ।

यद्यपि विगत वर्षों में 'सप्तशती' के विभिन्न संस्करण विभिन्न स्थानों से प्राप्त हुए हैं, उनमें पूरे ७०० श्लोक नहीं मिलते, जब कि मार्कण्डेय-पुराण में पूरे ७०० श्लोक उपलब्ध हैं । पाठ के आदि-अन्त में जो अनिवार्य रूप से पठनीय सूक्त एवं ध्यान आदि हैं, उनका बिल्कुल ही लोप-सा हो गया है । तान्त्रिक ग्रन्थों के अनुसार 'सप्तशती' का जैसा पाठ किया जाना चाहिये, वह आज नहीं किया जाता । 'सप्तशती'-पाठ में आम्नायों का बहुत महत्त्व है :—

मम पञ्च-मुखेभ्यश्च पञ्चाम्नायाः समुद्-गताः, पूर्वश्च पश्चिमश्चैव दक्षिणश्चोत्तरस्तथा, ऊर्ध्वाम्नायश्च पञ्चैते मोक्ष - मार्ग - प्रदायकाः ।

× × ×

पूर्वाम्नायः सृष्टि-रूपः स्थिति-रूपश्च दक्षिणः, संहारः पश्चिमो ज्ञेयो ह्यन्तर्लीनस्तथोत्तरः, ऊर्ध्वश्चानुग्रहो ज्ञेयश्चाधो विश्रान्तिको भवेत् ।

पूर्वाम्नाय तथा उत्तराम्नाय से मिलकर जो मन्त्र व ध्यान निकला, उससे ईशानाम्नाय-नायिका का ध्यान व मन्त्र बना— इसी तरह अन्य का। (विस्तृत विवरण 'सप्तशती-परिचय' में देखिये)।

तदनन्तर स्वामीजी ने कहा—मैं इस विधि-विधान से युक्त 'दुर्गा-सप्तशती' का नूतन संस्करण दुर्गा-पाठियों के हितार्थं प्रकाशित कराना चाहता हूँ। यदि आप इस विधि-विधान पर आधारित 'सप्तशती' की मुद्रण-प्रतिलिपि तैयार कर सकें, तो यह सम्भव हो सकता है।

इतने में ही वहीं विराजमान अपर दण्डी स्वामीजी श्री तत्वबोधाश्रम जी महाराज ने कहा—स्वामी जी महाराज द्वारा प्रतिपादित, मेरे द्वारा अनुभूत 'सप्तशती' का यह स्वरूप मेरे पास विद्यमान है। उसकी शुद्ध प्रतिलिपि करके उसे प्रकाशित कराना है।

स्वनाम-धन्य स्वामीजी महाराज ने (जो कभी-कभी शोडाला रोड, जयपुर, मित्तल फैक्ट्री में विराजते हैं) विगत दशकों में इस साधना-पद्धति पर जो अन्वेषण एवं निदिध्यासन किया है, उससे प्रेरित होकर स्वामीजी के इस निर्देश को शिरोधार्य कर मैं तत्काल ही इस कार्य को सम्पन्न करने में प्रवृत्त हुआ। ७ दिन के सतत अध्यवसाय से इसी स्थान पर इस मुद्रण-प्रतिलिपि को तैयार कर सका हूँ।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस विधि से किया गया दुर्गा-पाठ, इस मार्ग पर प्रवृत्त संसाधकों के लिये निश्चित ही श्रेयस्कर होगा। इसी अभिलाषा के साथ, इसी पथ का एक विनीत पथिक :—

"पद्म" शास्त्री
१२८ मुक्तानन्द नगर
गोपालपुर रोड
जयपुर—१५

प्रशस्ति

'श्री सप्तशती' भगवती परा-विद्या का वाङ्मय-वपु हैं। 'विद्या सा भगवती, त्रयं ब्रह्म, त्रयी विद्या, त्रयो वेदाः'—ये सभी नाम अभिन्नार्थक हैं। अतः यह वेदात्मिका, ब्रह्म-विद्या होने से महा-विद्या-स्वरूपिणी ही है।

महा - विद्या महा - वाणो भारती वाक् सरस्वती। आर्य्या ब्राह्मी काम - धेनु वेद - गर्भा चाधीश्वरी ।।४।१६।

एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे। सर्व-सत्व-मयी देवी। निराकारा च साकारा सैव नानाभिधान-भृत्।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह महामाया शक्ति ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्यादि-पुरुष-स्वरूपिणी है।

सर्व-स्वरूपे सर्वेशे, सर्व-शक्ति-समन्विते !

अपने अस्तित्व का बोध, शब्द-ब्रह्म द्वारा स्वयं भगवती दुर्गा ने भगवान् व्यास की सहस्रों वर्षों की तपस्या से प्रसन्न हो परा-पश्यन्ती के माध्यम से कराया है। स्वयं भगवती ने कहा है कि मैं मनुजादि चराचर को पावन करनेवाली, समस्त ब्रह्माण्ड-नायिका, सर्वाराध्या, सर्व-फल-प्रदा शक्ति हूँ—यह उद्घोष करने के लिये ही तो महा-माया ने वैखरी का रूप धारण कर निराकार से साकार 'सप्तशती' का स्वरूप धारण किया है।

प्राण-प्रतिष्ठित, पूजित, पठित 'सप्तशती' का दर्शन साक्षात् भगवती का दर्शन है। 'सप्तशती' की पूजा महा-माया की पूजा है। उसका विधिवत् उच्चारण उससे आत्मीयता प्राप्त करना, उसको समझना ब्रह्म को समझना, सप्तशती के रहस्य को जानना ब्रह्माण्ड के ज्ञान-विज्ञान को जानना, अन्तर्भूत देवी-देवताओं को जानना स्वयं को देवत्व प्राप्त कराना, उसके अक्षरों को जानना सम्पूर्ण अक्षर-ब्रह्म को वशवर्ती करना, 'सप्तशती' के अर्थ को जानना भगवती के आकारात्मक होना, उसके माहात्म्य को जानना महा-महिमावान् बनना एवं 'सप्तशती' की कृपा को पाना पूर्ण अन्तर्विमर्श पाना नहीं तो और क्या है?

अनन्त-श्री-विभूषित १००८ श्री दण्डी स्वामीजी महाराज, जो साकार सप्तशती ही हैं, उनके द्वारा प्रकाशित 'सप्तशती' अपना एक विशिष्ट स्थान रखती है। विद्वान्, मननशील, तपस्वी, विश्वासी, श्रद्धालु, कर्मठ, विधिज्ञ, निश्छल, निर्भान प्रेमी भक्तों

के लिए यह अभीष्ट फल-प्रद है। जो 'सप्तशती' के साधारण भक्त हैं, वे भी इस 'सप्तशती' के पाठ-मात्र से इच्छित फल प्राप्त करेंगे, यह मेरा दृढ़ विश्वास है।

विनीत
गोविन्द मिश्र
राजपण्डित
तन्त्रतारक, मन्त्रमर्मज्ञ; दो
दैशिक, कर्मकाण्ड-कोविद्
भरतपुर।

विचारात्मक–भूमिका

अनन्त-श्री-विभूषित, महा-महिम १००८ श्री दण्डी स्वामीजी महाराज, जिनके जीवन का प्रत्येक क्षण पराम्बा, महामाया के ही स्थूल, सूक्ष्म, सूक्ष्मतर विग्रहों के अभिनव रमणीय नित्य-लीला-विलास के स्वर-रसामृत के पावन मधुकर हैं, चिदम्बा के लाड़ले वत्स हैं, उनकी अन्वेषणात्मक गौरवान्विती दृष्टि द्वारा परिमार्जित, अनुभवात्मिका यह 'सप्तशती' विश्वकल्याण-कारिणी न हो, यह कदापि सम्भव नहीं।

प्रचलित सप्तशतियों में, जिनका पाठ नब्बे प्रतिशत विद्वान्, भक्त, स्मार्त, गाणपत्य, शाक्त, शैव, सौर, वैष्णवादि नित्य कर रहे हैं, क्रमशः प्रथम अध्याय से त्रयोदशाध्याय तक १०४ + ६९ + ४४ + ४२ + १२९ + २४ + २७ + ६३ + ४१ + ३२ + ५५ + ४१ + २९ कुल योग ७०० होता है। मूल श्लोक ५३५, उवाच ५७, अवदान ६६, अर्द्ध ४२ हैं। यह सप्तशती मार्कण्डेय-पुराण में भगवान् व्यास की वाणी है। यदि प्रचलित मार्कण्डेय-पुराण पर दृष्टिपात किया जाय, तो अठहत्तरवें अध्याय से नब्बे अध्यायों में 'सप्तशती' का वर्णन प्राप्त होता है, जो प्रथम अध्याय से त्रयोदशाध्याय तक इस प्रकार है :—

७८ + ७० + ४४ + ६६ + ७८ + २० + २८ + ६१ + ३८ + २७ + ५१ + ४२ + १७ इस प्रकार कुल श्लोक-संख्या ५८३ होती हैं, उवाच आदि अर्द्ध-श्लोक नहीं हैं।

मार्कण्डेय-पुराण में प्रथम अध्याय से त्रयोदश अध्याय तक इस प्रकार संख्या निर्धारित है—१०८ + १२८ + ६६ + ४२ + ७८ + २० + २६ + ६१ + ३८ + २७ + ४१ + ३८ + १७, जिनका योग ७०० हो जाता है। प्रथम में १०८, मध्यम में २३९ तथा उत्तम में ३५६ = कुल ७५५ श्लोक भी मिलते हैं।

मूल मार्कण्डेय, उत्तर पुराण सम्पूर्ण उपलब्ध नहीं है। यह 'सप्तशती' किस अध्याय से किस अध्याय तक है, यह स्पष्ट नहीं है। इस ७०० मूल-श्लोकात्मिका 'सप्तशती' की प्राचीन हस्तलिखित पाण्डुलिपियों में उपलब्धि होती है। विद्वानों द्वारा दो बार इसका प्रकाशन भी किया गया है।

चरितों की मूल कथाओं से तारतम्य रखनेवाले श्लोक हमें प्राप्त हैं। भगवती की विशेषताओं से सम्बन्धित अन्य साहित्य भी हमें प्राप्त है। **"अधिकस्य अधिकं फलम्"** इस भावुक दृष्टि से इस 'सप्तशती' का, जिसमें सम्पूर्ण ७०० श्लोक हैं, पाठ करना चाहिये।

इस 'सप्तशती' में ७०० श्लोक हैं, ५५ श्लोक और हैं, जो तत्तद्-स्थानों में अङ्कों द्वारा सूचित हैं और परिशिष्ट में तदनुसार उद्धृत हैं।

विद्वान् साधकों से भी एतदर्थ निवेदन है कि वे अपने विचारों से हमें अवगत करावें।

इस नूतन प्रकाशन में 'सप्तशती' से पूर्व ४ कवच (१ दुर्गा-कवच, २ काली-कवच, ३ लक्ष्मी-कवच, ४ सरस्वती-कवच) विशेष रूप से दिये गये हैं।

जो महामाया सर्व-तन्त्र-स्वतन्त्र है, स्वात्म-क्रीड़ा में लीन महामाया-स्वरूपिणी है, समस्त ब्रह्माण्ड को आत्म-सात् कर सच्चिदानन्दमयी है, **"किं वर्णयामि तव रूपमचिन्त्यमेतत्"**—जिसका निर्विकल्प समाधि में भी साक्षात्कार नहीं होता, वह महामाया ब्रह्मेच्छा-स्वरूपिणी ज्ञान-क्रिया-रूप से महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती के रूप में अवतीर्ण हो त्रिगुणात्मिका बन कर साकार विग्रह में दृष्टिगोचर होने लगती है।

हेतुः समस्त - जगतां त्रिगुणाऽपि दोषैर्न ज्ञायते हरि-हरादिभिरप्यपारा।

कर्तृत्व-प्रधान होने से अखिल विश्व-ब्रह्माण्ड की सृष्टि, स्थिति, लय, निग्रह, अनुग्रह आदि पञ्चकृत्य के विलास के स्व-रस में स्वयमेव रमण करती हुई सुशोभित हो रही है—

सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंश - भूतमव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ।

यही आद्या सर्वाश्रया भगवती स्थूल, सूक्ष्म, सूक्ष्म-तर रूप धारण करती है। यही महा-विद्या ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि पुरुष बनकर, चराचरात्मिका स्वयं जड़, स्वयं चेतनात्मिका बनकर अनेक रूपों को धारण करती है। यह माधुर्याधिष्ठात्री महामाया अपने स्मित से ज्ञानियों को भी मुग्ध कर देती है। अतः आत्म-शक्ति की उपासना शक्ति-शाली ही कर सकता है।

साधक में उस महा-माया के अलौकिक तेज को, आभा व इंगित को समझने व माधुर्य को धारण करने की क्षमता होनी चाहिये। यह सब भी उसी की कृपा पर अवलम्बित है।

श्रेष्ठ गुरु जिस देवी-देवता की उपासना करते हैं, वे उसी देवता के कवच का दश सहस्र पुरश्चरण करा देते हैं। **"कवचं देवता-गात्रं"**—इससे देवता के गात्र का तेज अपने गात्र में प्रवेश कर उस गात्र के नाड़ी-संस्थान को विशुद्ध कर देता है और वह समर्थ साधक बन जाता है। इसी दृष्टि से 'सप्तशती' की प्रधान देवियों के चारों कवच इसमें दिये गये हैं, जिनके पुरश्चरण के पश्चात् ही साधक 'सप्तशती' के पाठ का अधिकारी बनता है। यद्यपि एक पाठ करने से भी साधक का कुछ-न-कुछ हित होगा ही। 'सप्तशती'-पाठ के पूर्व **'देव्या कवच'** अत्यन्त आवश्यक है। तद्वत् ये कवच भी अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। ये कवच बीज-मन्त्रात्मक हैं, अतः साधकों के हित की दृष्टि से ही लिखे गये हैं।

नवार्ण—प्रचलित सप्तशतियों में एकादश न्यास के बाद केवल समष्टि नवार्ण मात्र प्राप्त है। उसके भीषण भैरव का बहुत कम ज्ञान है, जो दशाक्षरी है। महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती का नवार्ण एवं उसके ब्रह्मा, विष्णु, शिव, भैरव का मन्त्रोद्धार आदि देकर इस प्रकाशन को अतीव सुन्दरतर बना दिया है। साधकों के समक्ष एक लुप्त-प्राय प्रकरण को पुनरुद्घाटित किया है।

ध्यान—प्रत्येक अध्याय पर जो आम्नायाधिष्ठात्रियों के ध्यान दिये गये हैं तथा जिनसे मन्त्रोद्धार प्रकट होता है, वह भी श्रेष्ठ साधकों के लिये मौलिक वस्तु की प्राप्ति ही है। शास्त्रीय ध्यान कर अन्तर्याग के रसास्वादन का आनन्द और उसका अभीष्ट-फल भी प्राप्त होता है। ये ध्यान विद्वानों के लिए दृष्टव्य हैं, जो किसी भी प्रकाशित 'सप्तशती' में दृष्टिगोचर नहीं होते। शास्त्रीय अन्तर्याग

बुद्धि को शुद्ध एवं पवित्र करता है, भाव-शक्ति को बलवती बनाता है एवं नाड़ी-संस्थान को सबल करता है।

ध्यानों में कहीं-कहीं आवश्यक प्रयोगात्मक होने के कारण दो-दो ध्यान लिख दिये गये हैं। जिस पर चिह्न लगा है, वह सामान्य ध्यान है, दूसरा विशेष। 'सप्तशती'-परक २८ ध्यान ही प्रधान हैं, जो इस पुस्तक में उपलब्ध हैं।

'चण्डिका-दल' एवं 'चण्डिका-हृदय' का पाठ महामाया के पूर्णोत्कर्ष का स्तवन है, जो मन्त्रात्मक है तथा अन्य पुस्तकों में उपलब्ध नहीं है।

दलं च हृदयं चैव कवचार्गल - कीलकम्, दशाङ्गानि च जप्त्वा तु पश्चात् सप्तशतीं पठेत् ॥

इस प्रकाशन में 'आपदुद्धार-स्तोत्र' भी दिया गया है, जो 'सप्तशती' के चौबीस अंगों में सम्मिलित है। यह क्या है?

एक 'आपत्' नामक असुर पैदा हुआ। उसने तपस्या कर ब्रह्मा जी से यह वर माँगा कि 'मैं कभी न मरूँ।' ब्रह्मा जी ने कहा कि 'मृत्युलोक में यह सम्भव नहीं है।' तब राक्षस ने कहा कि 'यदि मैं मरूँ, तो ५ वर्ष के बच्चे से मरूँ।' ब्रह्मा जी ने 'तथाऽस्तु' कहा।

'आपत्' ने विचार किया कि बच्चों को तो मैं मुँह में रखकर ही भक्षण कर डालूँगा और वह निश्चिन्त होकर समस्त ब्रह्माण्ड को त्रास देने लगा। वह जहाँ भी जाता, वहाँ की जल, वायु, पृथ्वी, आकाश सभी कुछ आपद् (दुःख-प्रद) बन जाते थे।

ऐसा देखकर देवी-देवताओं ने अपनी-अपनी शक्ति प्रकट की। उस शक्ति से तेज उत्पन्न हुआ और उस तेज से आपदुद्धार वटुक जी का जन्म हुआ। उन्होंने ही इसका वध किया। वध के उपरान्त सभी देवी-देवताओं ने उनसे वर माँगने को कहा। उन्होंने यह वर माँगा कि 'मेरी पूजा-स्मरणादि किये बिना किसी भी देवी-देवता की पूजा सफल न होगी।' ये 'प्रभविष्णु' हैं। सभी सम्प्रदायों में अनेक नामों से पूजित हैं। 'सप्तशती' के आदि और अन्त में 'आपदुद्धार स्तोत्र' का पाठ करने से 'सप्तशती' शीघ्र फल-दात्री बन जाती है।

इस 'सप्तशती' में तीन 'सूक्त' हैं। ये तीनों सूक्त मार्कण्डेय पुराण के ही हैं और यह भगवान् की ही वाणी है। इसकी फल-स्तुति में स्पष्ट उल्लेख है **"मातृ-गामी स विज्ञेयः"**—जो इन सूक्तों का पाठ नहीं करता, उसे मातृ-गामी जाना जाये तथा उसे 'सप्त-शती'—पाठ का फल भी प्राप्त नहीं होता है। अन्य प्रकाशित सप्तशतियों में ये सूक्त नहीं हैं।

इस पुस्तक मे जो 'कुञ्जिका स्तोत्र' है, वह भी 'सप्तशती' का एक प्रमुख अंग है, जिसकी अधिष्ठात्री देवी पश्चिमाम्नायात्मिका कुञ्जिका है। 'सप्तशती' के चौबीस अंगों में इसे अन्तिम अंग माना गया है।

'पर-देवी-सूक्त' भी मार्कण्डेयोत्तर पुराण का है। 'पर-देवी' क्या है ?

पराऽस्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते, स्वाभाविकी ज्ञान - बला क्रिया च।

यह सब शक्तियों का मूल और आधार है। इसी से **'ज्ञान-शक्ति, इच्छा-शक्ति, क्रिया-शक्ति, कुण्डलिनी-शक्ति, मातृका-शक्ति'** आदि का उद्गम होता है। इसके पाठ का माहात्म्य तो पराम्बा ही बतायेंगी। मैं इस पर मौन हूँ। इस 'सप्तशती' में यह सब प्रकाशित कर भक्तों को कृत-कृत्य कर दिया है—मैं इतना ही कह सकता हूँ।

इस पुस्तक में अध्याय के बाद हवन-वस्तु-प्रयोग-विधि, शत-चण्डी-प्रयोग, सहस्र-चण्डी, सार्ध-नव-चण्डी-प्रयोगादि की जानकारी दे देने से सोने में सुगन्ध का कार्य किया है।

इसमें जो 'सप्तशती-परिचय' लेख है, वह विद्वान् साधकों द्वारा दृष्टव्य है और सद्-गुरुदेवों द्वारा ज्ञातव्य है। हमारे देश में नित्य-प्रति लाखों 'सप्तशती'-पाठ हो रहे हैं। परिणाम में भय, शोक, घृणा, दैन्य, निरुत्साह, आडम्बर, व्यग्रता, अभाव, प्रमाद, स्वार्थ, अविश्वास, आदि विनाशकारी गतिविधियाँ बढ़ रही हैं। इसका प्रधान कारण विधि-हीन तामसी पाठ-प्रक्रिया ही है।

सर्वा - बाधा - विनिर्मुक्तो धन - धान्य - सुतान्वितः। मनुष्यो मत् - प्रसादेन भविष्यति न संशयः॥

मेरा भक्त मुक्ति-भुक्ति का अधिकारी है। वह निर्भय रहता है। जो मेरी जैसी उपासना करता है, मैं उसे वैसा ही फल प्रदान करती हूँ। मैं जब अत्यन्त प्रसन्न होती हूँ, तो अपनी प्रसन्नता का विधि-विधानात्मक ज्ञान भी प्रदान करती हूँ।

ददामि बुद्धि - योगं ते येन मामुपयान्ति ते।

जिससे जीव मेरा सान्निध्य प्राप्त कर मदाकार ही बन जाता है। मैं महापुरुषों की वाणी से ही प्रकट होती हूँ। मेरे विषय में ज्ञान भी सद्गुरुओं की कृपा से ही होता है। मेरे विधि-विधान को जानकर भी जो प्रमादवश पाठ नहीं करता, वह मेरा अपराधी ही है। अज्ञानी को ज्ञान प्राप्त होना मेरी कृपा का ही फल है।

'निगमागमानुसन्धान-केन्द्र' द्वारा यह कार्य श्री जगदम्बा की कृपा से ही हो रहा है। अनन्त-श्रीविभूषित १००८ श्री दण्डी

स्वामी जी महाराज के हम चिर-ऋणी हैं, जिन्होंने भगवती 'सप्तशती'-सम्बन्धी गवेषणात्मक, अनुभवात्मक, प्रयोगात्मक साहित्य उपलब्ध किया। आगे भी 'सप्तशती'-दीपदान, प्रत्येक मन्त्र की पृथक्-पृथक् उपासना, ध्यान, हवन-विधि, आवरण-पूजा, पंचाङ्गादि, नाम-मन्त्रादि प्रकाशित कर अनुग्रहीत करेंगे—ऐसी आशा है।

यह 'सप्तशती' अनुभूति के आधार पर प्रस्तुत की गई है। यह भक्तों को अभीष्ट प्रदान करेगी—ऐसा मेरा निजी अनुभव है।

चरण-रेणु
बाबूराम वशिष्ठ
हि० साहित्याचार्य, साहित्य-भूषण,
डीग, भरतपुर

मंगलाचरणम्

सर्वं - मङ्गल - माङ्गल्ये ! शिवे ! सर्वार्थं - साधिके ! शरण्ये ! त्र्यम्बके ! गौरि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१॥
शरणागत - दीनार्तं - परित्राण - परायणे ! सर्वस्यार्ति - हरे देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥२॥

॥ ॐ नमश्चण्डिकायै ॥

अथ प्रयोग-विधिः

ॐ गणाधिपतये नमः। अथ प्रयोगान्तराणि कात्यायनी-तन्त्रोक्तानि प्रति-श्लोकमाद्यन्तयोः 'प्रणवं' जपेन्मन्त्र-सिद्धिः ॥१॥ अग्रे सर्वत्र श्लोक - पदं मन्त्रोपलक्षणं स-प्रणवमनुलोम-व्याहृति-त्रयमादौ अन्ते तु विलोमं तदित्येवं

प्रति-श्लोकं कृत्वा शतावृत्ति-पाठेऽति-शीघ्रं सिद्धिः ।।२।। प्रति-श्लोकमादौ 'जात-वेदस' इत्यृचं पठेत् सर्व-कार्य-सिद्धिः ।।३।। अपमृत्यु-वारणाय 'त्र्यम्बक्'-मन्त्रं पठेत् । आदावन्ते च शतमित्यर्थः प्रति-श्लोकं तन्मन्त्र-जप इत्यन्यत्र ।।४।। प्रति-श्लोकं 'शूलेन पाहि नो देवी'ति पाठादपमृत्यु-नाशः । अस्य केवलस्यापि श्लोकस्य लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपे अप-मृत्यु-वारणम् ।।५।। प्रति-श्लोकं 'शरणागत-दीनार्ते'ति श्लोकं पठेत् सर्व-कार्य-सिद्धिः ।।६।। प्रति-श्लोकं 'करोतु सा नः शुभे'त्यर्धं पठेत् सर्व-कार्य-सिद्धिः ।।७।। स्वाभीष्ट-वर-प्राप्तये 'एवं देव्या वरं लब्ध्वे'ति श्लोकं पठेत् ।।८।। सर्वापत्ति-वारणाय अस्य केवलस्यापि श्लोकस्य कार्यानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपेत् ।।९।। 'सर्व-बाधे'त्यस्य लक्ष-जपे प्रति-श्लोकं पाठे वा श्लोकोक्तं फलम् ।।१०।। 'इत्थं यदा-यदा बाधे'ति श्लोक-जपे महामारी-शान्तिः ।।११।। 'ततो वव्रे नृपो राज्यमि'ति मन्त्र-त्रये जपे पुनः स्वराज्य-लाभः ।।१२।। 'हिनस्ति दैत्य-तेजांसी'त्यनेन सदीप-बलिदाने घण्टा-बन्धने च बाल-ग्रह-शान्तिः ।।१३।। आद्यावृत्तिमनुलोमेन पठित्वा ततो विपरीत-क्रमेण द्वितीयामनुलोमेन तृतीयामित्येवमावृत्ति-त्रयेण शीघ्रं कार्य-सिद्धिः ।।१४।। सर्वापत्ति-वारणाय 'दुर्गे स्मृते'त्यर्द्धं ततो 'यदन्ति यच्च दूरके' इत्यृचं तदन्ते 'दारिद्र्य-दुःखे'त्यर्द्धमेव कार्यानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपेत् ।।१५।। 'कांसोस्मी'त्यृचं प्रति-श्लोकं पठेल्लक्ष्मी-प्राप्तिः ।।१६।। प्रति-श्लोकमनृणा अस्मिन्नित्यृचं पाठेन परिहारः ।।१७।। मारणार्थ'मेवमुक्त्वा समुत्पत्ये'ति श्लोकं प्रति-श्लोकं पठेत् मारणोक्तावृत्तिभिः फल-सिद्धिः ।।१८।। 'ज्ञानिनामपि चेतांसि' इति श्लोक-जप-मात्रेण सद्यो मोहनमित्यनुभव-सिद्धं, प्रति-श्लोकं तच्छ्लोक-पाठे तु अवश्यम् ।।१९।। 'रोगानशेषानि'ति श्लोकस्य प्रति-श्लोकं पाठे सकल-रोग-नाशः तन्मन्त्र जपेऽपि सः ।।२०।। 'इत्युक्त्वा सा तदा देवी गम्भीरे'ति श्लोकस्य प्रति-श्लोकं पाठे पृथक्-जपे विद्या-प्राप्तिर्वाग्वैकृति-नाशश्च ।।२१।।

'भगवत्या कृतं सर्वं'मित्यादि द्वादशोत्तर-शताक्षरो मन्त्रः सर्व-कामदः सर्वापत्ति-वारणश्च ॥२२॥ 'देवि ! प्रपन्नार्ति-हरे' इति श्लोकस्य यथा-कार्यं लक्षायुत-सहस्र-शतान्यतम-संख्यया जपे प्रति-श्लोकं पाठे वा सर्वापन्निवृत्तिः सर्व-कामाप्तिश्च । एषु प्रयोगेषु प्रति-श्लोकं दीपाग्रे केवलमेव नमस्करणेऽति - शीघ्रं सिद्धिः ॥२३॥ प्रति-श्लोकं 'कामबीज'-सम्पुटितस्य एक-चत्वारिंशद् दिन-त्रिरावृत्तौ सर्व-काम-सिद्धिः । एक-विंशति-दिन-पर्यन्तमुक्त-रीत्या प्रत्यहं द्वादश-वृत्तौ वशीकरणम् ॥२४॥ माया-बीज-सम्पुटितस्य तस्य वट-पल्लव-सहितस्य सप्त-दिन-पर्यन्तं त्रयोदशावृत्त्या उच्चाटन-सिद्धिः ॥२५॥ तादृश्यामेव दिन-चतुष्टयमेकादशावृत्तौ सर्वोपद्रव-नाशः ॥२६॥ एकोन-पञ्चाशद्-दिन-पर्यन्तं प्रति-श्लोकं श्री-बीज-सम्पुटस्य पञ्च-दशावृत्तौ लक्ष्मी-प्राप्तिः ॥२७॥ प्रति-श्लोकं वाग्बीज-सम्पुटितस्य शतावृत्या विद्या-प्राप्तिः ॥२८॥

अथ शत–चण्डी विधिः

शंकरस्य भवान्या वा प्रासाद - निकटे शुभम् । मण्डपं द्वार - देशाख्यं कुर्यात् स - ध्वज - तोरणम् ॥१॥
तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोऽपि वा । स्नात्वा नित्य - क्रियां कृत्वा वृणुयाद् दश - वाडवान् ॥२॥
जितेन्द्रियान् सदाचारान् कुलीनान् सत्य-वादिनः । वाडवा ब्राह्मणाः व्युत्पन्नाँश्चण्डिका-पाठ-रतान् लज्जा-दया-वतः ॥३॥
मधुपर्क - विधानेन स्वर्ण - वस्त्रादि - दानतः । जपार्थमासनं मालां दद्यात् तेभ्योऽपि भोजनम् ॥४॥
ते हविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थ - गत - मानसाः । भूमौ शयानाः प्रत्येकं जपेयुश्चण्डिका - स्तवम् ॥५॥
मार्कण्डेय - पुराणोक्तं दश - कृत्वः सचेतसः । नवार्णं चण्डिका - मन्त्रं जपेयुश्चायुतं पृथक् ॥६॥

पृथक्-सम्पुटीकरणादिति शेषः प्रत्येकं ब्राह्मणैरयुत-जपः कार्यः । अष्टमी-नवमी-चतुर्दशी-पौर्णमासीषु यथा

शतावृत्ति-समाप्तिर्भवति तथारम्भं कर्तव्यम् इति साम्प्रदायिकाः। यजमानः पूजयेच्च कन्याया नवकं शुभम्। द्वि-वर्षादादशान्ताः कुमार्यः परि-पूजयेत्। तासां क्रमेण नामानि—१. कुमारी, २. त्रिमूर्ति, ३. कल्याणी, ४. रोहिणी, ५. कालिका, ६. शाम्भवी, ७. दुर्गा, ८. चण्डिका, ९. सुभद्रा—इति नाम-मन्त्रैस्तासां पूजा। तत्र हीनाधिकांगी, कुष्ठ-व्रण-युता, अन्धा, काणा, कुरूपा, केकरा, कूबरी, लोम-युग्-देहा, दासीजा, रोगिणीत्येवमाद्या वर्ज्याः। विप्रां सर्वेष्ट-संसिद्ध्यै यशसे क्षत्रियोद्भवाम्। वैश्यजां धन-लाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत्॥ गन्ध-पुष्प-धूप-दीप-भक्ष्य-भोज्यैर्यथा-शक्तिर्वस्त्राभरणैश्च पूजयेत्। द्वि-वर्षा सा कुमार्युक्ता, त्रिमूर्ति हायन-त्रिका, चतुरब्दा तु कल्याणी, पञ्च-वर्षा तु रोहिणी। षडब्दा कालिका प्रोक्ता, चण्डिका (सप्त-हायना) सुभद्रा दश-वर्षोक्ता, नाम-मन्त्रैः प्रपूजयेत्। तासामा-वाहने मन्त्रः प्रोच्यते शंकरोदितः।

अष्टवर्षा शाम्भवी स्यात् दुर्गा तु नव हायना

मन्त्राक्षर - मयीं लक्ष्मीं मातृणां रूप - धारिणीम्। नव - दुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम्॥

कुमारिकादि-कन्यानां पूजा-मन्त्रान् ब्रुवेऽधुना—

जगत्-पूज्ये! जगद्-वन्द्ये! सर्व-शक्ति-स्वरूपिणि! पूजां गृहाण कौमारि! जगन्मातर्नमोऽस्तु ते॥१॥

त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्णां ज्ञान - रूपिणीम्। त्रैलोक्य - वन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम्॥२॥

कलात्मिकां कलातीतां कारुण्य - हृदयां शिवाम्। कल्याण - जननीं देवीं कल्याणीं पूजयाम्यहम्॥३॥

अणिमादि - गुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम्। अनन्त - शक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम्॥४॥

काम - चारीं शुभां कान्तां काल-चक्र-स्वरूपिणीम्। कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम्॥५॥

सदानन्द - करीं शान्तां सर्व - देव - नमस्कृताम्। सर्व - भूतात्मिकां लक्ष्मीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम्॥६॥

दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भव - दुःख - विनाशिनीम् । पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गति - नाशिनीम् ॥
चण्ड - वीरां चण्ड-मायां चण्ड-मुण्ड-प्रभञ्जनीम् । पूजयामि सदा देवीं चण्डिकां चण्ड - विक्रमाम् ॥
सुन्दरीं स्वर्ण - वर्णाभां सुख - सौभाग्य-दायिनीम् । सुभद्र - जननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम् ॥

एतैर्मन्त्रैः पुराणोक्तैस्ताः कन्याः समर्चयेत् ।

श्री कुमारिकाणाम् पूजनं

वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्र - मण्डले । घटं संस्थाप्य विधिना तत्रावाह्यार्चयेच्छिवाम् ॥
तदग्रे कन्यकाश्चापि पूजयेद् ब्राह्मणानपि । उपचारैस्तु विविधैर्नवान्याभरणैरपि ॥
ॐकारं प्रथमं पीठं पूर्ण - पीठमतः परम् । तृतीयं काम - पीठं च पूजयेत् सम्प्रदायतः ॥
पर्वादि - दिक्षु पीठस्य गणेशादि-चतुष्टयम् । गणेश - क्षेत्रपालौ च पादुके वटुकास्त्रयः ॥
आग्नेयादि-चतुर्दिक्षु पूज्यं देवी - चतुष्टयम् । जया च विजया चैव जयन्ती चापराजिता ॥

पूर्वोक्त-मन्त्रैः पूर्व-कोणे सरस्वती-सहितो ब्रह्मा, श्री-सहितो विष्णुर्नैऋत्यामुमया शिवो; वायव्यां षट्-कोण-मध्यस्थ-मध्य-बीजे श्रीं महालक्ष्मी ह्रीं महाकाली ऐं महासरस्वती; दक्षिण-वामयोः उदकू सिंहो, दक्षिणे महिषः; षट्-कोणेषु नन्दजा, रक्त-दन्तिका, शाकम्भरी, दुर्गा, भीमा, भ्रामर्यः; सा विष्णुर्नामाद्य-वर्ण-ताराद्या चासां नाम-मन्त्रः पूजादौ तारः प्रणव; अष्ट-त्रयेषु ब्रह्माणी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, नारसिंह्य न्द्री चामुण्डा उक्त-रीत्या नाम-मन्त्रैः पूज्याः । ततो विष्णुमायादि-चतुर्विशति-देवताः प्रागादि-क्रमेण केसरेषु पूज्याः । प्रति-पत्रं च केसर-त्रयम् ताश्च विष्णुमाया १, चेतना २, बुद्धि ३, निद्रा ४, क्षुधा ५, छाया ६, शक्ति ७, तृष्णा ८, क्षान्ति ९, जातिः १०, लज्जा ११, शान्ति १२, श्रद्धा १३, कान्ति १४, लक्ष्मी १५, धृति १६, वृत्ति १७, स्मृति १८, दया १९, तुष्टि २०, पुष्टि २१, मातृ २२, भ्रान्ति २३, चिति २४, रूपा एतावत्यः सप्तशती-स्तवे पञ्चमेऽध्याये आसां चतुर्विंशतीनां न पाठ, इति न भ्रमितव्यम्, कात्यायनी-तन्त्र-विरोधात् ।

नाल - मूले तु सम्पूज्य माधवादि-चतुष्टयम् । आधारः कूर्म - शेषौ च चतुर्थी पृथिवी नृप ॥
गृह-कोणेषु गणेशः क्षेत्रपालौ वटुको योगिन्यः । प्रागादि - दिक्षु इन्द्राद्या चेति एवं चतुर्दिनं ॥
कुर्यात् तत्र प्रथमेऽह्नि एकावृत्ति द्वितीये द्वे । तृतीये तिस्रश्चतुर्थे चतस्रः इति पञ्चमे होमः ॥
होम-द्रव्याणि पायसान्नैस्त्रि-मध्वक्तैर्द्राक्षा-रम्भा-फलादिभिः ।
मातुर्लिगैरिक्षु-दण्डैर्नारिकेलि - युतैस्तिलैः । जाती-फलैराम्र - फलैरन्यैर्मधुर - वस्तुभिः ॥
सप्तशत्या दशावृत्या प्रति-मन्त्रं हुतं चरेत् । अयुतं च नवार्णेन स्थापितेऽग्नौ विधानतः ॥
कृत्वा वरण - देवानां होमं तन्नाम-मन्त्रशः । कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग् देवमग्निं विसृज्य च ॥
अभिषिञ्चेच्च यष्टारं विप्रौघः कलशोदकैः । निष्कं सुवर्णमथवा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत् ॥
भोजयेच्च शतं विप्रान् भक्ष्य-भोज्यैः पृथग्विधैः । तेभ्योऽपि दक्षिणां दत्वा ग्रहणीयादाशिषस्तथा ॥
एवं कृते जगद् वश्यं सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ।

॥ श्री शतचण्डी-विधिः । श्रीरस्तु ॥

अथ सहस्र-चंडी-विधानम्

एतद्दश-गुणमिति ॥ शत-चण्डी-विधान-दश-गुणां सहस्र-चण्डी-विधानमित्यर्थः । तत्र शतं विप्र-वरणम् । ते शत विप्राः प्रत्येकं दश-दश सप्तशती-पाठान् कुर्युः—अयुतमयुतं नवार्ण-जपं च कुर्युः । सत्-कन्याश्च भोज्याः एवं दश-दिनेषु सम्पाद्य एकादशेऽह्नि सप्तशती-शतावृत्याः प्रति-श्लोकं तल्लक्ष-संख्यं नवार्णेन च होमः । ऋत्विग्भ्योऽपि दश-दश निष्क-मितं सुवर्ण-दक्षिणां प्रत्येकं दद्यात् । शेषं पूर्वोक्तवत् ।

श्री सहस्र-चण्डी-विधिः ॥ श्रीरस्तु ॥

अथ नव-चण्डी-विधिः

अथाश्विन-शुक्ल-प्रतिपदादि साधकः कृत-नित्य-क्रियः सुसंवृते शुभे स्थाने सुरम्ये गृहे तोरण-वितानाद्यलङ्कृते धूम-धूपिते दीप-प्रकर-शोभिते । तत्र स्वासने प्राङ्मुखः समुपविश्य प्राग्वत् तिथ्युल्लेखानन्तरं **'अमुक-कामनया चण्डी-विधानमहं करिष्ये ।'** इति संकल्पः ॥

पूजा-गृहे पूर्वस्यां दिशि कादम्बरीं गज-वाहनां ध्यात्वा **'ॐ कादम्बरि ! देवि ! इहागच्छ'** इति क्वचित्-पीठे आवाह्य संस्थाप्य । **ॐ श्रीकादम्बरि ! एष ते गंधो नमः । एवं इमानि ते पुष्पाणि वौषट् । एष ते धूपो नमः । एष ते दीपो नमः'** इति सम्पूज्य तदग्रे पात्रान्तरे घृत-शर्करा-सहितं पायसं नाना-व्यञ्जन-सहितमन्नं च निधाय । **'ॐ श्री कादम्बरि ! एष ते बलिर्नमः'** इति बलिमुत्सृज्य **'क्षमस्वेति'** प्रणमेत् । एवमाग्नेय्यामुल्कामज-वाहनं सम्पूज्य बलिं प्राग्वद्दद्यात् । एवं दक्षिणे महिषारूढ़ां करालीम् । नैर्ऋते प्रेत-वाहनां रक्ताक्षीं, पश्चिमे मकर-वाहनां श्वेतां । वायव्ये मृगवाहनां हरितां । उत्तरे सिंह-वाहनां । दक्षिणे ईशाने वृष-वाहनां कङ्कालीम् । इन्द्रेशानयोर्मध्ये हंस-वाहनां सुर-ज्येष्ठाम् । निर्ऋति-वरुणयोर्मध्ये अहि-वाहनां सर्प-राज्ञीम् । स्व-स्व-स्थाने पृथक्-पृथक् सम्पूज्य बलिं दत्वा । सूर्यादि-नव-ग्रहान्, विनायकं, दुर्गां, वायुं, आकाशं, अश्विनौ च सम्पूज्य । स्वे स्वे दिक्षु क्रमेणेन्द्रादि-दिक्पालानपि सम्पूज्य प्राग्वन्मध्ये कुम्भं संस्थाप्य द्वार-पूजादि-पुरस्सरं तत्र कुम्भे महालक्ष्मीं समावाह्य नानाविधैरुपचारैरभ्यर्च्य तदग्रे प्राग्वत् स-रहस्यं देवी-माहात्म्यं चरित-त्रय-रूपं पठित्वा कुमारिकामेकामेकं ब्राह्मणं च सम्पूज्य भोजयित्वा ताम्बूल-दक्षिणा-नमस्कारैः संतोषयेदिति । एवं द्वितीयायां द्विगुणं, तृतीयायां त्रिगुणमिति क्रमेण नवम्यन्तं नव-गुणं यथा भवति, तथा पूजा, चण्डी-पाठ, कुमारी-ब्राह्मण-भोजनादिकं च यथा-विभव-विस्तरं नवम्यन्तं महोत्सवं कुर्यादिति । अत्राप्येकाहार-व्रतिको नियमः कर्तव्यः । ततो नवमे दिने कृत-चण्डिका-पाठ-दशांशतः प्रागुक्त-द्रव्यैर्होमं कृत्वा सर्व-विधिवत् समापयेत् । यद्याचार्य-द्वारा कारयति तदा तस्मै वित्त-शाठ्य-रहितां दक्षिणां दत्वा प्रणम्य समापयेदिति । एवं कृते सर्वे कामाः प्रपद्यन्ते ।

॥ श्रीनव-चण्डी-महोत्सव-विधिः ॥ श्रीरस्तु ॥

आपदुद्धारक बटुक का चण्डी में पाठ-क्रम

(‘चण्डी’ पत्रिका, प्रयाग से साभार उद्धृत)

चण्डी-पाठ प्रयोग

यथा-शीघ्रं सकल-कामना-सिद्धये मैथिलोक्त-चण्डी-पाठ-घटित-आपदुद्धारक-बटुक-स्तोत्र-पाठ प्रकारः । यामले—

मैथिलस्य मतेनाऽयं प्रकाशे वांछिताप्तये । पठेत् पूर्वमेक - वारमापदुद्धारकं स्तवं ॥१॥
ततः शक्रादि-स्तुत्यन्तां पठेच्चण्डीं च साधकः । आपदुद्धारक - स्तोत्रं पठेद् वै साधकस्ततः ॥२॥
उर्वरीतान् नवाध्यायान् पठेद् वैं साधकस्ततः । आपदुद्धारक - स्तोत्रं पुनश्च प्रपठेत् सुधीः ॥३॥
प्राप्नोति तेन सकलान् कामान् वै साधकोत्तमः । प्रथमान्ते मध्यमान्ते उत्तरान्ते च साधकः ॥४॥
एकैकावर्तनं कुर्यात् स्तव-राजस्य साधकः । सकलान् मानसान् तेन कामनाप्नोति निश्चितं ॥५॥
अध्यायान् ते पठेत् स्तोत्रं महदापन्निवृत्तये । उवाच मन्त्रा यावन्तः सप्त-पञ्चा वसन्ति हि ॥६॥
तत् - तदन्तं पठेत् स्तोत्र महदापन्निवृत्तये । मैथिलानामुपायोऽयमापदुद्धारणे मतः ॥७॥

१. प्रथम **‘आपदुद्धारक-बटुक-स्तोत्र’** का पाठ करे। फिर प्रथम अध्याय से चतुर्थ अध्याय के अन्त तक पाठ करे। फिर स्तव-राज का पाठ कर शेष ५ से १३ तक ९ अध्याय का पाठ करे। फिर **‘आपदुद्धारक-बटुक-स्तोत्र’** का पाठ करे, तो सभी कामनाओं की पूर्त्ति हो जायेगी।

२. इसी तरह प्रथम, मध्यम तथा उत्तम चरित के अन्त में **‘आपदुद्धारक-बटुक-स्तोत्र’** का पाठ करे, तो सभी कामनायें पूर्ण होंगी।

३. प्रत्येक अध्याय के अन्त में **‘स्तोत्र’** का पाठ करने से महान् आपत्ति का निवारण होता है।

४. सत्तावन **‘उवाच’** मन्त्रों के अन्त में **‘स्तोत्र’** का पाठ करने से महान् आपत्ति का निवारण होता है।

सार्ध-नव-चण्डी प्रयोग

चन्द्र-तारा-नक्षत्रादि के अनुकूल होने पर शुभ मुहूर्त में अथवा कृष्णाष्टमी, नवमी, चतुर्दशी तिथियों में किसी दिन विधिवत् पूजा कर भगवती से आज्ञा प्राप्त कर निम्न प्रकार संकल्प करना चाहिये। विघ्न-निवारणार्थ स्वस्ति-वाचन के बाद गणेशादि-आह्वानादि-पूर्वक पूजा कर प्रार्थना आदि से भावित कार्य के संकल्प की पूर्ति के लिये प्रार्थना करें।

'ॐ गुरोराज्ञया तत्सद्येत्यादि' देश-काल का कीर्तन कर **'अमुक-गोत्रोत्पन्नोऽहं'** (शर्मा-वर्मेत्यादि) नाम-युक्त राज्य-सेवा, प्रतिष्ठा, श्री-वृद्धि आदि मनोकामना के अनुसार **'एकादश-ब्राह्मण-द्वारा शुक्ल-यजुर्वेदीय षडङ्ग-रुद्रीय-पाठ-सहित-मार्कण्डेय-पुराणान्तर्गत-श्रीचण्डी-चरितस्य श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-दैवतस्य सार्ध-नवक-रूप-पुरश्चर ' कारियष्ये'** ऐसा सङ्कल्प करे।

गन्धाक्षत-कौसुम्भ-सूत्र-वस्त्रादि वरण-सामग्री के सहित संकल्प करता हुआ प्रत्येक ब्राह्मण का पृथक्-पृथक् वरण करे। फिर आचार्य यथा-विधि कलश-स्थापन कर भवानी-शंकर की सोपचार-पूजा करे। इसके अनन्तर पुस्तक-पूजनादि कर प्रत्येक ब्राह्मण के पाठ का सङ्कल्प करके पाठारम्भ करे। पाठ सम्पूर्ण कर नवार्ण-मन्त्र का जप तथा भैरव-नामावली का पाठ श्रीदेवी को समर्पित करे। इसके बाद होम-विधि से कुण्ड या स्थण्डिल में संस्कृत-अग्नि में **'घृत-पायस-तिल'** से एक पाठ का होम करे। फिर तर्पण और मार्जन मूल-मन्त्र से कर ब्राह्मण को भोजन करावे। भोजन-दक्षिणा एवं पाठ की दक्षिणा प्रदान कर प्रसन्नता-पूर्वक यजमान आशीर्वाद ग्रहण करे।

अभीष्ट कर्म की सफलता के लिए उक्त शास्त्रीय विधि का अनुसरण करना चाहिए।

कुण्डलिनी–उत्थापन-सहित सप्तशती–पाठ की विशेष विधि

कुण्डलिन्युत्थापनेन मधु-स्रावणेन डाकिन्यादि-मण्डल-प्लावन-रूपान्तर-कर्माणि सत्येव बाह्यानि यज्ञादि कर्माणि सफलानि भवन्ति। तदभावे तु यस्मिन् काले कर्माणि क्रियन्ते, स काल एव तेषां कर्मणां काल-मृत्यु-रूपो भवतीति।

अर्थात् जो तान्त्रिक योगी 'कुण्डलिनी'-शक्ति के उत्थापन द्वारा अमृत-स्राव करके षट्-चक्रों में स्थित डाकिनी आदि मण्डलों का सिंचन करना जानता है, वही बाह्य कर्म-काण्ड करने से सिद्धि प्राप्त कर सकता है। अन्यथा काल-तत्व मृत्यु-रूप होकर उसका

विनाश कर देता है। उक्त तत्व को 'चन्द्र-ज्ञान-तन्त्र' में निम्न प्रकार से कहा गया है—

अन्तरग्नौ मधु - स्रावं कुर्वतां शिशिरात्मनाम्। इष्टापूर्तादि - कर्माणि फलन्ति किल कालतः ॥
अन्त - स्राव-विहीनानां सदा सन्तप्त-चेतसाम्। कर्माणि क्रियमाणानि कालो ग्रसति तत् क्षणात् ॥
काल-कर्षिणिकैवान्तः करोति मधु वर्षति। इति यो वेद तस्य स्याद् ब्रह्म-रन्ध्रात् सुधा - स्रुतिः ॥

अर्थात् जो शान्त चित्तवाले साधक अन्तराग्नि में मधु-स्राव करना जानते हैं, उनके किये हुये इष्टापूर्तादि कर्म काल द्वारा सफल होते हैं। अन्तः-स्राव-विहीन सन्तप्त चित्तवाले पुरुषों द्वारा किये गये कर्म को काल तत्क्षण ही ग्रस लेता है। **'काल-कर्षिणिका शक्ति'** ही यह अन्तर-कार्य सम्पन्न करती है। ऐसा रहस्य जो जानता है, उसके ब्रह्म-रन्ध्र से सुधा की स्रुति होती है।

'कुण्डलिनी'-जागरण एवं मधु-स्राव एक कठिन कार्य है, जो क्रिया-कुशल सिद्ध योगी ही करने में कृत-कार्य हो सकते हैं, सबको सुलभ नहीं है। **'काल-कर्षिणिका-अनुष्ठान'** सर्व-प्रथम करके अनुष्ठान करना चाहिये। यह एक सुलभ कार्य है क्योंकि योग-द्वारा जो क्रिया सम्पन्न होती है, उसे **'काल-कर्षिणिका शक्ति'** सम्पादन कर देती है। अतः सिद्धि में कोई सन्देह नहीं रहता।

स्वप्न-विद्या द्वारा देव की आज्ञा प्राप्त करके कार्यारम्भ करने से सिद्धि अवश्य ही प्राप्त होती है। प्रत्येक अनुष्ठान में उक्त क्रियाओं का करना आवश्यक है क्योंकि कर्मानुष्ठान की पूर्व-सूचना इनसे प्राप्त होती है।

कुछ अनुष्ठान ऐसे भी होते हैं, जिनमें उक्त क्रियाओं को करें या न करें, तब भी उनसे सिद्धि अवश्यम्भावी है। अनेक बार इसका अनुष्ठान भिन्न-भिन्न अवसरों पर किया गया है, जिसका फल प्रत्यक्ष देखा गया है। वह है **'सार्ध-नव-चण्डी प्रयोग'**। 'सप्तशती' द्वारा इसका प्रयोग होता है। इस प्रयोग के करने में ९ ब्राह्मण 'सप्तशती' के पूरे पाठ करने के लिये वरण किये जाते हैं। एक आधा पाठ करनेवाला और एक शुक्ल-यजुर्वेदीय षडङ्ग-रुद्रीय एवं भैरव-नामावली का पाठ करनेवाला होता है। कुल एकादश ब्राह्मणों द्वारा यह अनुष्ठान सम्पन्न होता है।

नव - सार्धम् जपेद् यस्तु मुच्येत् प्राणान्तकाद् भयात्। राज्य - श्रीः सर्व-सम्पत्तिः सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥
प्रयोगोऽयं महा - गुह्यो देवानामपि दुर्लभः। तत् तेऽहं सम्प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ॥
मधु - कैटभ - नाशं च महिषासुर - घातनम्। शक्रादि - स्तुतिरेवातो देवी - सूक्तं पुनस्तथा ॥
नारायणी - स्तुतिश्चैव फलानुकीर्तनम् तथा। ततो वर - प्रदानं च ह्यर्ध - पाठोऽयमुच्यते ॥

अर्धं - पाठस्त्वयं प्रोक्तः सर्वं - काम - फल - प्रदः। अर्धं - पाठेन रहितं नव - पाठ - फलं नहि ॥

भूत-शुद्धि

श्वास की वायु को पिंगला (वाम-नासिका) से अन्दर खींच कर "मूल-शृङ्गाटकाज्जीव-शिवं परम-शिवे योजयामि स्वाहा।" इस मन्त्र से मूलाधार में स्थित जीवात्मा को सुषुम्णा-मार्ग से ब्रह्म-रन्ध्र तक लाकर परम-शिव के साथ एकीभूत करने की भावना करके इड़ा (दक्षिण-नासिका) से श्वास को छोड़े।

भूत-शुद्धि एक यौगिक क्रिया है। इसमें श्वास-प्रश्वास द्वारा प्राणायाम करते हुये विभिन्न बीजों का जप और भावना होती है। 'राम-तापिनी' में कहा गया है कि—

देवो भूत्वा यजेद् देवं नादेवो देवमर्चयेत्। देवार्चा - योग्यता - प्राप्त्यै भूत - शुद्धि समाचरेत् ॥

अर्थात् देव बनकर देवता की पूजा करे, देवत्व के बिना देव-पूजा न करे। देव-पूजा की योग्यता प्राप्त करने के लिये भूत-शुद्धि करनी चाहिये।

रुद्रयामल आदि में कहा गया है कि—

सर्वासु बाह्य - पूजासु अन्तः - पूजा विधीयते। अन्तः - पूजा महेशानि ! बाह्य - कोटि - फलं लभेत् ॥
भूत - शुद्धि - लिपि - न्यासो विना यस्तु प्रपूजयेत्। विपरीत - फलं दद्यादभक्त्या पूजने यथा ॥

अर्थात् सभी बाह्य-पूजाओं में अन्तः-पूजा की जाती है। हे पार्वति ! अन्तः-पूजा बाह्य-पूजा से करोड़ गुना अधिक फल देती है। भूत-शुद्धि और मातृका-न्यास के बिना जो पूजा करता है, उसे भक्ति के बिना की गई पूजा के समान विपरीत फल प्राप्त होता है।

'यं' बीज को इड़ा से पूरक करते हुये १६ बार तथा कुम्भक में ६४ बार बोलकर **'सङ्कोच-शरीरं शोषय शोषय स्वाहा'** बोले और फिर पिङ्गला-मार्ग से ३२ बार बोलते हुये रेचन करे।

'रं' बीज को पिङ्गला से पूरक करते हुये १६ बार बोलकर कुम्भक में ६४ बार बोले तथा **'सङ्कोच-शरीरं दह दह पच पच स्वाहा'** कहकर इड़ा से ३२ बार बोलते हुये रेचन करे।

'टं' इस बीज-मन्त्र द्वारा उपर्युक्त पद्धति से पूरक और कुम्भक करके उसमें 'चन्द्र-मण्डल' की भावना करे और इडा से पूर्ववत् रेचन करे।

'वं' बीज से पूर्ववत् इडा-मार्ग से पूरक और सुषुम्णा में कुम्भक कर **'परम-शिवामृतं वर्षय स्वाहा'** बोले तथा उस दिव्य शरीर पर सहस्रार-स्थित चन्द्र-मण्डल से झरते हुये अमृत-द्वारा सिक्त होने की भावना कर पिङ्गला से पूर्ववत् रेचन करे।

'लं' बीज से पूर्ववत् इडा से पूरक और कुम्भक कर **'शाम्भव-शरीरमुत्पादयोत्पादय स्वाहा'** कहे तथा जले हुये सङ्कोच-शरीर की भस्म से पुनः दिव्य-शरीर की उत्पत्ति की भावना कर ३२ बार बीज का जप कर पिङ्गला से रेचन करे।

माया-बीज से प्राणायाम कर निम्न मन्त्र बोले—

नित्य-शुद्ध-बुद्धं मुक्तं देवताराधन-योग्यं शिव-शक्ति-मयं शरीरं कुरु कुरु स्वाहा।

'हंसः सोऽहं' बीज से पूर्व-वत् इडा-मार्ग से पूरक और सुषुम्णा में कुम्भक कर **'ॐ अवतर शिव-पदाद् जीव ! सुषुम्णा-पथेन प्रविश मूल-शृङ्गाटकमुल्लसोल्लस ज्वल ज्वल प्रज्ज्वल हंसः सोऽहं स्वाहा'** बोले तथा परम-शिव के साथ एकीभूत जीव को पुनः सुषुम्णा-मार्ग से मूलाधार में स्थापित करने की भावना करे।

प्राण-प्रतिष्ठा

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः मम प्राणाः इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः मम जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः मम सर्वेन्द्रियाणि वाङ्-मनश्चक्षु-श्रोत्र-घ्राण-पदानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

तदनन्तर मूल-मन्त्र से यथा-शक्ति सोलह, दश या तीन बार प्राणायाम करे।

अन्तर्मातृका न्यास

प्राणायाम—'अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं अं आं' से पूरक। 'कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं' से कुम्भक और 'यं रं लं वं शं षं सं हं' से रेचक।

विनियोग—अस्य श्रीअन्तर्मातृका-न्यास-मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। गायत्री छन्दः। अन्तर्मातृका-सरस्वती देवता। हलो बीजानि। स्वराः शक्तयः। अव्यक्तं कीलकं। मम श्रीसप्तशत्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः। यह न्यास लय-क्रम का है।

ऋष्यादि-न्यास—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः अं ब्रह्मणे ऋषये नमः आं शिरसि। ७ इं गायत्री-छन्दसे नमः ईं मुखे। ७ उं सरस्वती-देवतायै नमः ऊं हृदये। ७ एं हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः ऐं गुह्ये। ७ ओं स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः औं पादयोः। ७ अं अव्यक्त-कीलकाय नमः अः अञ्जलौ।

कर-न्यास—७ अं कं खं गं घं ङं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ७ इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां नमः। ७ उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां नमः। ७ एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां नमः। ७ ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ७ अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।

षडङ्ग-न्यास—७ अं कं खं गं घं आं हृदयाय नमः। ७ इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा। ७ उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्। ७ एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुँ। ७ ओं पं फं बं भं मं औं नेत्राभ्याम् वौषट्। ७ अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।

ध्यानम्

आधारे लिङ्ग - नाभौ प्रकटित - हृदये तालु - मूले ललाटे, द्वे पत्ते षोडशारे द्वि - दश-दश - दले द्वादशार्द्धे चतुष्के ॥
वासान्ते वाल - मध्ये डफ-कठ-सहिते कण्ठ - देशे स्वराणां, हक्षौ तत्वार्थ-चिन्त्यं सकल-दल-गतं वर्ण-रूपं नमामि ॥

अब मातृका-वर्णों का चक्रों के दलों में न्यास करे। प्रत्येक वर्ण के अन्त में 'नमः हंसः सोऽहम्' जोड़ ले। यथा—'वं नमः हंसः सोहं'।

मूलाधार के रक्त-वर्ण चतुर्दल कमल के प्रत्येक दल में 'वं, शं, षं, सं।'
लिङ्गस्य स्वाधिष्ठान चक्र के विद्युद्-वर्ण वाले षट्-दल स्वाधिष्ठान-चक्र के कमल के प्रत्येक दल में 'बं, भं, मं, यं, रं, लं'।
नाभि में मणिपूर-चक्र के विद्युद्-वर्ण दश-दल कमल के प्रत्येक दल में 'डं, ढं, णं, तं, थं, दं, धं, नं, पं, फं'।
हृदय के अनाहत-चक्र के रक्त-वर्ण द्वादश-दल कमल के प्रत्येक दल में 'कं, खं, गं, घं, ङं, चं, छं, जं, झं, ञं, टं, ठं'।

कण्ठ के विशुद्ध-चक्र के धूम्र-वर्ण षोडश-दल कमल के प्रत्येक दल में 'अं, आं, इं, ईं, उं, ऊं, ऋं, ॠं, लृं, ॡं, एं, ऐं, ओं, औं, अं, अः'।

भौंह के आज्ञा-चक्र के श्वेत द्वि-दल कमल के प्रत्येक दल में 'हं, क्षं'। चार अधोमुख चक्र भी होते हैं।

मस्तक के ऊपर सहस्रार-चक्र के सहस्र-दल-कमल में, जो सदा खिला हुआ रहता है और नित्य आनन्द-मय तथा सदाशिव-मय है, 'अ'कार से लेकर 'क्ष'कार पर्यन्त मातृकाक्षरों का न्यास करे। फिर 'क्ष'कार से लेकर 'अ'कार पर्यन्त विलोम क्रम से। यथा 'अं नमः हंसः सोहं, आं नमः हंसः सोहं' इत्यादि। 'क्षं नमः हंस सोहं लं नमः सोहं' इत्यादि। इसके बाद ब्रह्म-रन्ध्र में गुरु-पादुका का न्यास-ध्यान कर उसका जप करे। तदनन्तर गुरु-स्तोत्र का पाठ करे। फिर वाग्देवी का ध्यान करे। यथा—

शारद-पूर्णेन्दु-शुभ्रां सकल-लिपि-मयीं लोल-रक्त-त्रिनेत्रां। शुक्लालङ्कार-भूषां शशि-मुकुट-जटा-भार-हार-प्रदीप्ताम्॥
विद्या-स्रक्-पूर्ण-कुम्भान् वरमपि दधतीं शुद्ध-पट्टाभिरामां। वाग्देवीं पद्म-वक्त्रां स्तन-भर-नमितां चिन्तयेत् साधकेन्द्रः॥

ध्यान कर वाग्देवी का मानस-पञ्चोपचारों से पूजन करे। आरोह-अवरोह-क्रम से न्यास किया जाता है। मूलाधार से आज्ञा-पर्यन्त एवं आज्ञा से मूलाधार-पर्यन्त अधो-ऊर्ध्व-क्रमेण न्यास भुक्ति-मुक्ति के लिये है। ऊर्ध्व-मुख न्यास (नीचे से ऊपर जाने वाला) मोक्ष-मार्ग के लिए है। (विशुद्ध से मूलाधार एवं मूलाधार से आज्ञा-चक्र तक ऊर्ध्व-मुख है) इति संप्रदाय।

बहिर्मातृका न्यास

विनियोग—अस्य श्रीबहिर्मातृका-सरस्वती-न्यास-महामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। गायत्री छन्दः। बहिर्मातृका सरस्वती देवता। हलो बीजानि। स्वराः शक्तयः। बिन्दवः कीलकानि। मम श्रीसप्तशत्यङ्गत्वेन बहिर्मातृका-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे न्यासे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—७ अं ब्रह्मणे ऋषये नमः आं शिरसि। ७ इं गायत्री-छन्दसे नमः ईं मुखे। उं सरस्वती-देवतायै नमः ऊं हृदये। ७ एं हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः ऐं गुह्ये। ७ ओं स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः औं पादयोः। ७ अं अव्यक्त-कीलकाय नमः अः अञ्जलौ। यह न्यास लय-क्रम का है।

कर-न्यास—७ अं कं खं गं घं ङं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ७ इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां नमः। उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां नमः। ७ एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां नमः। ७ ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ७ अं

यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।

षडङ्ग-न्यास—७ अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः। ७ इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा। ७ उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्। एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुं। ७ ओं पं फं बं भं मं औं नेत्र-त्रयाय वौषट्। ७ अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः अस्त्राय फट्।

ध्यानम्

पञ्चाशद्-वर्ण-भेदैर्विहित-वदन-दोः-पाद-युक्-कुक्षि-वक्षो - देशां भास्वत्-कपर्दाकलित-शशि-कलामिन्दु-कुन्दावदाताम् ॥
अक्ष-स्रक्-कुम्भ-चिता-लिखित-वरा-करां त्रीक्षणामब्ज-संस्थामच्छाकल्पामतुच्छ-स्तन-जघन-भरां भारतीं तां नमामि ॥

इस प्रकार ध्यान कर पञ्चोपचार-द्वारा मानसिक पूजन करे। मानस-पूजा के बाद मातृकाक्षरों का निम्नलिखित अँगुलियों द्वारा नीचे लिखे अंगों में न्यास करे—

७ अं नमः शिरसि—	मध्यमा+अनामिका	से
७ आं नमः मुख-वृत्ते—	तर्जनी+मध्यमा+अनामिका	से
७ इं नमः दक्ष-नेत्रे—	अँगूठा (तर्जनी वा)+अनामिका	से
७ ईं नमः वाम-नेत्रे	अँगूठा (तर्जनी वा)+अनामिका	से
७ उं नमः दक्ष-कर्णे	,, ,, ,,	से
७ ऊं नमः वाम-कर्णे	,, ,, ,,	से
७ ऋं नमः दक्ष नासा-पुटे	अंगूठा+कनिष्ठा	से
७ ॠं नमः वाम नासा-पुटे	,, ,,	से
७ लृं नमः दक्ष-कपोले	तर्जनी+मध्यमा+अनामिका या केवल मध्यमा	से
७ लॄं नमः वाम-कपोले	,, ,, ,,	से
७ एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे (ऊपर का होंठ)	मध्यमा	से

७ ऐं नमः अधरोष्ठे (नीचे का ओंठ)	,,	से
७ ओं नमः ऊर्ध्व-दन्त-पंक्तौ (ऊपर के दांत)	अनामिका	से
७ औं नमः अधो-दन्त-पंक्तौ (निचले दांत)	,,	से
७ अं नमः जिह्वाग्रे (जीभ)	,,	से
७ अः नमः लम्बिकायां (कण्ठे)	अनामिका व मध्यमा	से
७ कं नमः दक्ष-बाहु-मूले	मध्यमा + अनामिका + कनिष्ठिका	से
७ खं नमः दक्ष-कूर्परे (कुहनी)	,, ,, ,,	से
७ गं नमः दक्ष-मणि-बन्धे (कलाई)	,, ,, ,,	से
७ घं नमः दक्ष करांगुलि-मूले	,, ,, ,,	से
७ ङं नमः दक्ष-करांगुल्यग्रे	,, ,, ,,	से
७ चं नमः वाम-बाहु-मूले	कनिष्ठा + अनामिका + मध्यमा	से
७ छं नमः वाम-कूर्परे (कुहनी)	,, ,, ,,	से
७ जं नमः वाम-मणि-बंधे (कलाई)	,, ,, ,,	से
७ झं नमः वाम-करांगुलि-मूले	,, ,, ,,	से
७ ञं नमः वाम-करांगुल्यग्रे	,, ,, ,,	से
७ टं नमः दक्षोरु-मूले (दाहिना जङ्घा-मूल)	,, ,, ,,	से
७ ठं नमः दक्ष-जानुनि	,, ,, ,,	से
७ डं नमः दक्ष-गुल्फे	,, ,, ,,	से
७ ढं नमः दक्ष-पादांगुलि-मूले	,, ,, ,,	से
७ णं नमः दक्ष-पादांगुल्यग्रे	,, ,, ,,	से
७ तं नमः वामोरु-मूले (वाम-जङ्घा-मूल)	,, ,, ,,	से

७ थं नमः वाम-जानुनि	,, ,, ,,	से
७ दं नमः वाम-गुल्फे	,, ,, ,,	से
७ धं नमः वाम-पादांगुलि-मूले	,, ,, ,,	से
७ नं नमः वाम-पादांगुल्यग्रे	कनिष्ठा + अनामिका + मध्यमा	से
८ पं नमः दक्ष-पार्श्वे	,, ,, ,,	से
७ फं नमः वाम-पार्श्वे	,, ,, ,,	से
७ बं नमः पृष्ठे	,, ,, ,,	से
७ भं नमः नाभौ	अंगुष्ठ + कनिष्ठा + अनामिका + मध्यमा	से
७ मं नमः जठरे (पेट)	अंगुष्ठ + तर्जनी + मध्यमा + अना० + कनि०	से
७ यं नमः त्वगात्मने नमः हृदि (हृदय)	मध्यमा + अनामिका + कनिष्ठिका	से
७ रं नमः असृगात्मने नमः दक्षांशे (दाहिना कंधा)	,, ,, ,,	से
७ लं नमः मांसात्मने नमः ककुदि	,, ,, ,,	से
७ वं नमः मेदात्मने नमः वामांशे	,, ,, ,,	से

७ शं नमः अस्थ्यात्मने नमः हृदादि दक्ष-करांगुल्यन्तम् (हृदय से लेकर दायें कर को अंगुलि पर्यन्त)

७ षं नमः मज्जात्मने नमः हृदादि वाम-करांगुल्यन्तम् (हृदय से लेकर बायें हाथ की अंगुलि पर्यन्त)

७ सं नमः शुक्रात्मने नमः नाभ्यादि-दक्ष-पादान्तम् (नाभि से लेकर दाहिने पैर पर्यन्त)

७ हं नमः जीवात्मने नमः नाभ्यादि-वाम-पादान्तम् (नाभि से लेकर बायें पैर पर्यन्त)

७ ळं नमः परमात्मने नमः हृदादि-पादांगुल्यन्तम् (हृदय से लेकर पैरों की अंगुलियों पर्यन्त)

७ क्षं नमः ज्ञानात्मने नाभ्यादि ब्रह्म-रन्ध्रांतम् (नाभि से लेकर ब्रह्म-रन्ध्र पर्यन्त) *

दुर्गा—सप्तशती के नौ भेद

दुर्गापाठस्य नव नामानि तल्लक्षणानि च । रहस्योक्तानि नामानि ब्रह्मो-भानि वदामिते ॥

(हिन्दी मंत्रमहार्णव :—द्वितीय तरंग पृष्ठ १६३)

देवी के गुप्त नव नामों और लक्षणों को, जिन्हें ब्रह्मा ने कहा था, मैं तुम्हें बता रहा हूँ :—

महाविद्या, महातंत्री, चण्डी, सप्तशतीति च । मृत-संजीवनी-नाम पञ्चमं परिकीर्तितम् ॥१॥

षष्ठं चैव महा-चण्डी सप्तमं रूप-दीपिका । अष्टमं तु चतुःषष्टि-योगिनी नवमी परा ॥२॥

१. महा-विद्या, २. महा-तंत्री, ३. चण्डी, ४. सप्त-शती, ५. मृत-संजीवनी, ६. महा-चण्डी, ७. रूप-दीपिका, ८. चतुःषष्टि-योगिनी, ९. परा-चण्डी—ये देवी के नौ नाम हैं ।

एतानि योऽभिजानाति नामानि नृप-नन्दन । जपं विना भवेत्तस्य चण्डिका वरदा सदा ॥

हे राज-पुत्र ! जो दुर्गा-सप्तशती के इन सभी नामों को जानता है, उसे जप के बिना ही चण्डिका सदा वर देती है ।

पूर्वोक्त नव विद्याओं का स्वरूप वहाँ निम्न प्रकार बताया गया है—

---

* यहाँ पर अन्तर्मातृका-न्यास और बहिर्मातृका न्यास—ये दो न्यास लिखे गये हैं । 'परशुराम-कल्पसूत्र' और नित्योत्सव में केवल एक मातृका-न्यास ही दिया गया है । अतएव यहाँ पर भी बहिर्मातृका-न्यास के भेद नहीं दिये गये ।

वास्तव में बहिर्मातृका-न्यास के सृष्टि, स्थिति और संहार-क्रम से तीन भेद हैं । गृहस्थों के लिए स्थित्यन्त, ब्रह्मचारियों के लिए सृष्ट्यन्त और यति तथा वानप्रस्थों के लिए संहार-क्रमान्त बहिर्मातृका-न्यास करना बताया गया है । जो गृहस्थ विरक्तावस्था में हैं, वे संहार-क्रम से भी करते हैं । जो वानप्रस्थी सपत्नीक हैं, वे स्थिति-क्रम से और जो विद्यार्थी, गृहस्थ अथवा वानप्रस्थाश्रम में हैं, किम्वा यति हैं, वे लोग सृष्टि-क्रम से भी करते हैं ।

विसर्गात्मक सृष्टि-क्रम 'कः', बिन्दु-विसर्ग स्थिति-क्रम—कंः और बिन्दु लय-क्रम कहलाता है—'कं' ।

१—आद्य, द्वितीय, तृतीय चरितानुक्रम से सप्तशती **'महा-विद्या'** सभी तंत्रों में गुप्त रूप से निहित है।
२—आद्य, अन्त्य तथा मध्य चरितानुक्रम से महा-विद्या को **'महा-तंत्री'** कहा गया है।
३—आद्य, मध्य तथा अन्त्य चरितानुक्रम से महा-विद्या को **'चण्डी-महामंत्र'** कहा गया है।
४—मध्य, आद्य तथा अन्त्य चरितानुक्रम से महा-विद्या को **'सप्तशती'** कहा गया है।
५—अन्त, आदि तथा मध्य चरितानुक्रम से महा-विद्या को **'मृत-संजीवनी'** कहा गया है।
६—अन्त्य, मध्य तथा आद्य चरितानुक्रम से महा-विद्या को **'महा-चण्डी'** कहा गया है।
७—**'रूपं देहि जयं देहि'** इस श्लोक को नवार्ण-मंत्र के साथ युक्त करके प्रत्येक श्लोक को उससे संपुटित करके जप करने को **'रूप-चण्डी'** कहा गया है। यह सभी अभीष्टों को देनेवाली है।

८—सप्तशती-मंत्रों से चौसठ योगिनियों का सम्बन्ध होने से महा-विद्या को **'चतुः-षष्टि'** कहते हैं। यह योग-सिद्धि प्रदानं करनेवाली है।

९—परा-वीज के साथ संयुक्त होने के कारण महाविद्या को **'परा-चण्डी'** कहते हैं।

सार-पूर्ण-संकेत

पराशर-नन्दन श्री कृष्ण द्वैपायन व्यास ने बदरी-वन में रह कर दस हजार वर्ष तपस्या के पश्चात् कलि-जन्य दोष से ग्रसित जनता के उद्धार-हेतु परम-पवित्र रस-मय सम्पूर्ण शास्त्रों के फलों के रस के रूप में भगवती परात्म्बा की स्तुति 'सप्तशती' का वर्णन किया है। इसके पाठ एवं प्रयोग मात्र से मानव के त्रयोदश दोष नष्ट होते हैं और विशुद्ध ज्ञान की उत्पत्ति होती है। आगम में भगवती की स्तुति में कादि-हादि-मंत्र-रूपिणी शिवा का अर्थ सादि-कूटात्मक 'सप्तशती' हुई। इसी आदि-कूटात्मक 'सप्तशती' का वर्णन व्यास जी ने किया है। यथार्थ रूप में 'सप्तशती' के पाठ को समझना, काम्य प्रयोग करना गुरु-आज्ञा एवं गुरु-प्रसाद पर निर्भर करता है क्योंकि यह 'सप्तशती' धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष को देनेवाली है। पाठकों के लाभ के लिये मात्र संकेव रूप से यह कुछ लिख दिया गया है, जिसे माँ की प्रेरणा कह सकते हैं।

फल-श्रुति

'दुर्गा शप्तशती' के तेरह अध्यायों के पाठ से विविध प्रकार के दोष दूर होते हैं। यथा—

प्रथम अध्याय — क्रोध
दूसरा अध्याय — भय एवं शोक
तीसरा अध्याय — काम
चौथा अध्याय — मोह
पाँचवाँ अध्याय — विभित्सा
छठवाँ अध्याय — परासुता
सातवाँ अध्याय — मद
आठवाँ अध्याय — लोभ
नौवाँ अध्याय — मात्सर्य
दसवाँ अध्याय — ईर्ष्या
ग्यारहवाँ अध्याय — निंदा
बारहवाँ अध्याय — दोष-दृष्टि
तेरहवाँ अध्याय — कंजूसो, दैन्य भाव

नवार्ण-संस्कार-विधिः

श्रीगणेशाय नमः । अद्य पूर्वोच्चरित एवं गुण-विशेषण-विशिष्टायां शुभ-पुण्य-तिथौ श्रीइष्ट-देवतानुष्टुभ्-मन्त्रस्य छिन्नत्वादि-पञ्चाशद्-दोष-परिहारार्थं आराध्य-कर्मणः मध्ये विघ्न-विच्छेद-जनित-प्रत्यवाय-परिहार-द्वारा श्रीइष्ट-देवता-प्रीत्यर्थं पुनश्च जननादि-दश-विध-संस्काराणि करिष्ये ।

उक्त प्रकार सङ्कल्प कर निम्न जननादि संस्कार करे । प्रत्येक संस्कार के लिए निर्दिष्ट मन्त्र को ताम्र-पात्र में अष्ट-गन्ध से लिखकर उसका षोडशोपचारों से पूजन करे । फिर उसका अष्टोत्तर-शत (१०८) बार जप करे । जहाँ अधिक जप करना है, वहाँ उसका उल्लेख कर दिया है ।

१. शापोद्धार—'स्वाहा'-युक्त नवार्ण-मन्त्र के प्रत्येक अक्षर को 'ह्स्रौं' से पुटित कर लिखे—

ह्स्रौं ऐं ह्स्रौं, ह्स्रौं ह्रीं ह्स्रौं, ह्स्रौं क्लीं ह्स्रौं, ह्स्रौं चा ह्स्रौं, ह्स्रौं मुं ह्स्रौं, ह्स्रौं डा ह्स्रौं, ह्स्रौं यै ह्स्रौं, ह्स्रौं वि ह्स्रौं, ह्स्रौं च्चे ह्स्रौं, ह्स्रौं स्वा ह्स्रौं, ह्स्रौं हा ह्स्रौं । जप-संख्या—अयुत (१०,०००) ।

२. उत्कीलन—पूर्ववत् 'स्वाहा'-युक्त नवार्ण के प्रत्येक अक्षर को 'ह्स्क्लीं' से पुटित कर लिखे । यथा—'ह्स्क्लीं ऐं ह्स्क्लीं' इत्यादि ।

३. चेतनी—ईं ऐं औं क्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा ईं ऐं औं ।

४. आह्लादिनी—ॐ क्लीं नमः ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा ॐ क्लीं नमः ।

५. तेजोद्दीपन—वद वद वाग्वादिनि ऐं ह्रीं क्लीं...स्वाहा वदं वद वाग्वादिनि ।

६. मन्त्राभ्य-जनन—अं आं इं ईं...सं हं लं क्षं ऐं ह्रीं क्लीं...स्वाहा क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं, मं भं बं फं

पं, नं धं दं थं तं, णं ढं डं ठं टं, ञं झं जं छं चं, ङं घं गं खं कं, अः औं ओं ऐं एं ॡं ऌं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं ।

७. सूतक-निवारण—ऐं क्लीं सौः ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा ऐं क्लीं सौः ।

८. उभय-सूतकादि-त्याग (जन्म-मृत्यु आदि निवारण) 'स्वाहा'-युक्त नवार्ण के प्रत्येक अक्षर को प्रणव (ॐ) से सम्पुटित कर लिखें । यथा—'ॐ ऐं ॐ', 'ॐ ह्रीं ॐ' इत्यादि ।

९. मन्त्र-प्रत्यक्ष (सञ्जीवन)—'स्वाहा'-युक्त नवार्ण के प्रत्येक अक्षर को श्री-वीज (श्रीं) से सम्पुटित कर लिखें । यथा—'श्रीं ऐं श्रीं, श्रीं ह्रीं श्रीं' इत्यादि । जप-संख्या—अयुत (१०,०००) ।

१०. प्राण-स्थापन—'स्वाहा'-युक्त नवार्ण के प्रत्येक अक्षर को वाग्वीज (ऐं) से सम्पुटित कर लिखें । यथा—'ऐं ऐं ऐं, ऐं ह्रीं ऐं' इत्यादि ।

११. मन्त्र-स्पन्दन-वह्नि—ॐ ह्रीं ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा ॐ ह्रीं ॐ ।

१२. दीपन—भूर्ज-पत्र पर अष्ट-गन्ध से अधोमुख त्रिकोण अकारादि से क्षकारान्त लिखे । अधोमुख शीर्ष 'अं' से बनाकर वाम-भुजा 'अः' तक लिखकर पूरी करे । ऊर्ध्व-स्थित आधार को 'कं' से प्रारम्भ कर 'थं' तक लिखकर पूर्ण करे । फिर दक्ष-भुजा को 'दं' से प्रारम्भ कर 'हं लं क्षं' तक लिखकर उसे पूरा करे । इस त्रिकोण के मध्य में 'हंसः' से सम्पुटित नवार्ण-मन्त्र लिखे । यथा—

'हंसः ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा हंसः' । जप-संख्या—एक सहस्र (१,०००) ।

१३. ताड़न—ताड़-पत्र के ऊपर निम्न प्रकार अष्ट-गन्ध से मन्त्र लिखकर ताम्र-पात्र में स्थापित करे और

षोडश या पञ्चोपचार-पूजन कर दर्भ-शाखा से जल में एक सहस्र (१,०००) बार जप करते हुए ताड़न करे—

'यं फट् ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा यं फट्'

१४. निबोधन—करवीर-पत्र के ऊपर 'स्वाहा'-युक्त नवार्ण-मन्त्र के प्रत्येक अक्षर को कूर्च-वीज (हूं) से सम्पुटित कर लिखे। यथा—'हूं ऐं हूं, हूं ह्रीं हूं' इत्यादि। फिर पूर्ववत् उसे ताम्र-पात्र में स्थापित कर, पूजन कर, पञ्च-सहस्र (५,०००) जप करे।

१५. अभिषेचन—ताड़ या अश्वत्थ-पत्र पर निम्न प्रकार मन्त्र लिखे—

'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा अभिषिञ्चयामि।'

फिर पूर्ववत् ताम्र-पात्र में स्थापित कर, पूजन कर, उस पर जल-धारा छोड़ते हुए एक सहस्र (१,०००) जप कर उसका अभिषेक करे।

१६. दाहन—ब्रह्म-वृक्ष के तैल या अष्ट-गन्ध से ताम्र-पात्र में निम्न प्रकार मन्त्र लिखे—

श्री श्री श्री श्री श्री

रँ रँ रँ रँ रँ रँ

रँ ऐं रँ॥ रँ ह्रीं रँ॥ रँ क्लीं रँ॥ रँ चा रँ॥ रँ मुं रँ॥ रँ डा रँ॥

रँ रँ रँ रँ रँ रँ

रँ रँ रँ रँ रँ रँ

रँ यै रँ॥ रँ वि रँ॥ रँ च्चे रँ॥ रँ स्वा रँ॥ रँ हा रँ॥

रँ रँ रँ रँ रँ

फिर पूर्ववत् पूजन कर अष्टोत्तर-शत (१०८) जप करे ।

१७. विमलीकरण—ताम्र-पात्र में पूर्ववत् निम्न मन्त्र को लिखे, पूजन कर एक सहस्र (१,०००) जप करे—

ॐ ह्रौं वषट् ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा ॐ ह्रौं वषट् ।

१८. पुनर्जीवन—क्रमांक १७ के समान निम्न मन्त्र का प्रयोग करे—

वषट् ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा वषट् ।

१९. प्रोक्षण—भूर्ज-पत्र पर अष्ट-गन्ध से निम्न प्रकार मन्त्र लिख दण्डवत् कर पूर्ववत् पूजन कर कुश-शाखा द्वारा जल से प्रोक्षण अष्टोत्तर-शत (१०८) बार जप करते हुए करे—

ॐ क्रौं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा ॐ क्रौं ।

२०. आप्यायन—पूर्ववत् ताम्र-पात्र में 'स्वाहा'-युक्त नवार्ण के प्रत्येक अक्षर को 'ह्सौं' से सम्पुटित कर लिखे, फिर पूजन कर एक सहस्र (१,०००) जप करे—'ह्सौं ऐं ह्सौं, ह्सौं ह्रीं ह्सौं' इत्यादि ।

२१. तर्पण—पूर्ववत् ताम्र-पात्र में निम्न मन्त्र लिखकर गो-दुग्ध, गो-घृत और जल से पूर्ण कर यथा-विधि पूजन कर एक सहस्र (१,०००) जप द्वारा तर्पण करे—

स्वधा ऐं क्रीं क्लीं विद्महे तत्-प्रधानाय धीमहि तन्नो देवी चामुण्डायै विच्चे स्वाहा प्रचोदयात्, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महा-सरस्वती-देवताः तर्पयामि ।

२२. पुनर्दीपन—पूर्ववत् ताम्र-पात्र में लिखकर पूजन कर एक सहस्र (१,०००) जप करे—

ॐ क्रीं श्रीं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा ॐ क्रीं श्रीं ।

२३. गोपन—'स्वाहा'-युक्त नवार्ण मन्त्र के प्रत्येक अक्षर को काली-बीज (क्रीं) से सम्पुटित कर पूर्ववत् ताम्र-पात्र में लिख पूजन-पूर्वक एक सहस्र (१,०००) जप करे—यथा 'क्रीं ऐं क्रीं, क्रीं ह्रीं क्रीं' इत्यादि ।

उक्त प्रकार संस्कार कर अन्त में मूल-मन्त्र का एक सहस्र जप करे ।

मूल-मन्त्र है—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा ।

पुरश्चरण के आदि, मध्य और अन्त में इस विधि का पालन करने से प्रत्यक्ष-सिद्धि प्राप्त होती है ।

।। इति बाल-चन्द्रिकायां नवार्ण-जननादि-दश-विध-संस्कारं सम्पूर्णम् ।।

नवार्ण-विधिः

यह विधि आगे प्रकाशित है । कुछ विशेष विधान निम्न प्रकार है, जिसे यथा-स्थान जोड़ लेना चाहिए—

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे महा-काल्यै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं महा-लक्ष्म्यै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं महा-सरस्वत्यै नमः'—इति मूल-मन्त्रेण त्रिराचम्य 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चा०—१६' इति पूरकं, 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चा०—६४' इति कुम्भकं, 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चा०—३२' इति रेचकं प्राणानायम्य ।

सङ्कल्प (पृष्ठ २८-३०), अक्षर-न्यास, व्यापक-न्यास, दिङ्-न्यास (पृष्ठ ३९) वक्ष्यमाण-विधिना कृत्वा अंकुश-मुद्रयाऽऽवाहनं कुर्यात् । यथा—

या सा परापरा सूक्ष्मा, स्वर्गस्था विश्व-रूपिणी । चन्द्र-मण्डल-मध्यस्था, आयाहि मम मण्डलं ।।१।।

श्रीमत्-कुण्डलिनी-स्थिता, शुभ्रा व्यासादि-मुनि-सेविता । आगच्छ वरदे देवि ! वेद-त्रयमुदाहृता ।।

जप-काले च सान्निध्यं प्रसादं कुरु मे सदा ।।२।।

ध्यानं पृष्ठ ३९-४० वत् कृत्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य 'नवार्ण-मन्त्राक्षर-ध्यानं' कुर्यात् । यथा—

वाग्वीजं हि दीप-समान-दीप्तम् । मायाऽति-तेजो द्वितीयार्क-बिम्बम् ॥
कामं च वैश्वानर-तुल्य-रूपम् । प्रतीयमानं तु सुखाय चिन्त्यम् ॥
'चा' शुद्ध-जाम्बू-नद-तुल्य-कान्तिम् । 'मुं' पञ्चमं रक्त-तरं प्रकल्पम् ॥
'डा' षष्ठमुग्रार्ति-हरे सुनीलम् । 'यै' सप्तमं कृष्ण-रिपुघ्नम् ॥
'वि' पाण्डुरं चाष्टममादि-सिद्धिम् । 'च्चे' धूम्र-वर्णं नवमं विशालाम् ॥
एतानि वीजानि नवात्मकस्य । जपात् प्रदध्युः सकलार्थ-सिद्धिम् ॥

इति नवाक्षरैर्ध्यात्वा अष्टोत्तर-शतं मूल-मन्त्रं जपेत् । अथ यन्त्रोपरि बाह्य-पूजां कृत्वा त्रिकोणं च भूपुरं त्रि-षट्-कोणमिन्दु-भूपुरं । अष्ट-पत्र-दलं पद्मं गोलाकारं तु रेखया ॥१॥ त्रयोदश-दलं स्थाप्यं वर्तुलाकारकं बुधैः । त्रिकोणं च कृत्वा चतुष्कोणं त्रि-रेखया । समर्चयेदिदं यन्त्रं चण्डिका वरदा सदा ॥२॥ आदौ पूजा-विधिं कृत्वा गणेशं क्षेत्रपालकम् ॥३॥

'ॐ क्रीं ग्लौं गां गणपतये नमः । ॐ क्रीं क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः क्षेत्र-पालाय नमः'—इति मन्त्राभ्यां पुरस्ताग्रे द्वारपालके सम्पूज्य—'ॐ क्रीं श्रीं तीक्ष्ण-शृङ्गाय महिषाय नमः । ॐ क्रीं वनस्पति-पुत्राय सिंहाय नमः'—इति वाम-दक्षिणयोः सम्पूज्य—

'ॐ क्रीं रुद्राय नमः । ॐ क्रीं ब्रह्मणे नमः । ॐ क्रीं विष्णवे नमः । ॐ क्रीं ब्रह्माण्यै नमः । ॐ ह्रीं वैष्णव्यै नमः । ॐ ह्रीं रुद्राण्यै नमः । ॐ क्रीं कौमार्यै नमः । ॐ क्रीं वाराह्यै नमः । ॐ क्रीं इन्द्राण्यै नमः । ॐ क्रीं

चण्डिकायै नमः। ॐ क्रीं चामुण्डायै नमः। ॐ क्रीं चामुण्डा-मूर्तये नमः। ॐ क्रीं सः महादुर्गे चण्डिके कात्यायिन्यै नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः। ॐ नमः पिशाचिनि! किरि किरि त्रिशूल-खड्ग-हस्ते! सिंहारूढ़े! एह्येहि आगच्छागच्छ पूजां गृह्ण गृह्ण सर्व-सिद्धिं कुरु कुरु चिण्डिकायै नमः। ॐ ह्रीं क्रीं चामुण्डायै विच्चे नमः। श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महा-सरस्वती।'

आसनार्थे पुष्पं दद्यात्—'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे हं हं हं इदं गृहाण स्वाहा'—इति निवेदनम्।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती पाद्यं'—जल-गन्धाक्षतैः पुष्पं दद्यात्।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती अर्घ्यं स्वाहा'—जल-गन्ध-पुष्पाक्षतैः अर्घ्यं शिरसि दद्यात्।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती आचमनीयं स्वधा'-मुखे दद्यात्। 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः श्रीमहाकाली० मधुपर्कं स्वधा'—मुखे दद्यात्। 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः श्रीमहाकाली० स्वधा'—मुखे पुनराचमनं दद्यात्। 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः श्रीमहाकाली० सुगन्धित-तैलं'—पुष्पं दद्यात्।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः श्री० शुद्धोदकं स्नानं'—समर्प्य जलेन आचमनीयं दद्यात्। अंग-प्रोञ्छनं कृत्वा—'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चै नमः श्री० वाससी'—आचमनं दद्यात्।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चै नमः श्री० यज्ञोपवीतं'—आचमनीयं दद्यात्।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै० श्री० छत्र-चामर-पादुकां आदर्श-मुकटाद्यलङ्कार-भूषणं'—स्व-सिंहासने समुपवेश्य यन्त्रोपरि पुष्पं दद्यात् ।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चा० श्री० लं पृथिव्यात्मकं गन्धं'—समर्प्यं; 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चा० श्री० अक्षतं'—समर्प्यं; 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चा० श्री० हं आकाशात्मकं पुष्पं'—समर्प्यं; 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः, ॐ क्रीं विन्ध्य-वासिन्यै नमः, ॐ क्रीं रक्त-दन्तिकायै नमः, ॐ क्रीं शताक्ष्यै नमः, ॐ क्रीं शाकम्भर्यै नमः, ॐ क्रीं दुर्गायै नमः, ॐ क्रीं भीमायै नमः, ॐ क्रीं भ्रामर्यै नमः, ॐ क्रीं चण्डिके धूपं गृह्ण गृह्ण स्वाहा, ॐ श्री० यं वाय्वात्मकं धूपं'—समर्प्यं; 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः, ॐ क्रीं चण्डिके दीपं गृह्ण गृह्ण स्वाहा, श्री० इं वह्न्यात्मकं दीपं'—समर्प्यं । 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चा० श्री० वं अमृतात्मकं नैवेद्यं'—समर्प्यं ।

'मूलं श्रीमहाकाली-पादुकां पूजयामि, मूलं श्रीमहालक्ष्मी-पादुकां पूजयामि, मूलं श्रीमहासरस्वती-पादुकां पूजयामि, ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे, नमः सर्व-शक्ति-पादुकां पूजयामि । ॐ बटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु कुरु बटुकाय क्रीं श्रीं बटुकनाथ-पादुकां पूजयामि । ॐ क्रीं असिताङ्ग-भैरवाय नमः पादुकां पूजयामि । ॐ क्रीं रुरु-भैरवाय नमः पादुकां पूजयामि । ॐ क्रीं चण्ड-भैरवाय नमः पादुकां पूजयामि । ॐ क्रीं क्रोध-भैरवाय नमः पादुकां पूजयामि । ॐ क्रीं उन्मत्त-भैरवाय नमः पादुकां पूजयामि । ॐ क्रीं कपाली-भैरवाय नमः पादुकां पूजयामि । ॐ क्रीं भीषण-भैरवाय नमः पादुकां पूजयामि । ॐ क्रीं संहार-भैरवाय नमः पादुकां पूजयामि'—इति ।

'देवीस्तर्पयामि । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे, ॐ प्राणाय स्वाहा, ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ व्यानाय स्वाहा, ॐ उदानाय स्वाहा, ॐ समानाय स्वाहा'—इति त्रिधा मन्त्र-जल-निवेदनम् ।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः, गङ्गा-तोय-समा नित्यं सुवर्ण-कलशं धृतं । अग्रे देवी देवेशं आचमनं प्रतिगृह्यतां'—इति आचमनं समर्प्य; 'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः'—इति पुनराचमनं समर्प्यं ।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः, ॐ चण्डिके चामुण्डे श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-महागण-पति-क्षेत्रपाल-महा-सुर-सहिते सर्व-कार्य-सिद्धि कुरु कुरु, सर्व-शत्रु-सैन्यं स्तम्भय स्तम्भय, विष-शस्त्रादि-सिंह-व्याघ्र-सर्पादि-भय-निवारणं कुरु कुरु, शत्रु-सैन्य-पराजयं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा'—इति मन्त्रेण त्रिधा आचमनं, बलि-समर्पणम् ।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ताम्बूलं फल-दक्षिणां'—समर्प्य । आरातिकं पुनः मन्त्र-पुष्पाञ्जलिं दद्यात् । प्रदक्षिणां योनि-मुद्रां प्रणम्य नवाक्षरं अष्टोत्तर-शतं जपेत् ।

अथ गायत्री यथा-शक्ति जपेत्—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं विद्महे चामुण्डायै धीमहि तन्नो देवी विच्चे प्रचोदयात् ।

अथ माला-मंत्र-प्रारम्भः

ॐ नमो भगवति ! ऐं ह्रीं क्लीं श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-मूर्ति-त्रय-व्यापिके ! भूतात्मा-परमात्मा-अष्टादश-भुजे ! सर्व-व्यापिनि ! महादेवि, लक्ष्मि, सकल-जन-मनोहारिणि ! सकल-जन-मुख-रुन्धिनि । सकल-शत्रून् संहारय संहारय, लं वं दं हं क्षीं रं क्षीं क्षुं क्षः दुर्गे ! लं वं दं हं डां डीं डूं डः निष्कले ! परमा-देवि ! रक्ष रक्ष, रूपं विधाय, किणि किणि, किङ्किणि किङ्किणि, भूतं हन हन, सर्व-भूतं भासि, चित्रिणि ! वीर-नारायणि ! उग्रे ! दण्ड-हस्ते ! चण्डिके ! माहेश्वरि ! महा-मुखि ! ज्वाला-मुखि ! शंकु-कर्णे ! काल-जंघे ! सकल-भूत-प्रेत-पिशाच-ब्रह्मराक्षस-शाकिनी-डाकिनी-काकिनी-गण-गन्धर्व-ममोच्चाटयोच्चाटय, हन हन, दह दह, महालक्ष्मी-हृदय-जालं

रोषेण रूपेण, त्वं देहि देहि, एहि एहि, मम पुत्र-मित्र-कलत्र-बन्धून् रक्ष रक्ष, हुं फट् स्वाहा । अमुक-दुष्टं ग्रहं नाशय
नाशय, जृम्भय जृम्भय, मोहय मोहय, उठ उठ, शोधय शोधय स्वाहा । ॐ ऐं क्लीं श्रीं देवि दुर्गे ! महा-सरस्वति !
नमो दुर्गे ! हुं फट् स्वाहा । ॐ जय जय चामुण्डे ! त्रिदश-मुकुट-कोटि-निघृष्ट-चरणारविन्दे ! सावित्री-गायत्री-
सरस्वती-महा-गन्धे ! महा-कपाल-धारे ! महा-भैरव-रूप-धारिणि ! प्रकटित-वरानने ! घोर-घोरानने ! ज्वलज्ज्वा-
लान्त-सहस्र-परिवृते ! सच्चिन्महा-ब्रह्म-चलित-दिगन्तरे ! उदितार्क-सम-प्रभे ! काम-रूपे ! तुभ्यं नमो नमः ।
चतुर्दश-विद्या-प्रबोधिनि ! मम अभयं देहि-देहि, शीघ्रं आवेशय आवेशय, हुं फट् स्वाहा ।

इति माला-मन्त्रः । रुद्रयामले हर-गौरि-संवादे श्रीमहालक्ष्मी-पूजनार्चन-विधिः, नवाक्षर-मन्त्रः सम्पूर्णम् । श्री
श्री श्री श्री शुभं भवतु । श्रीकल्याणमस्तु ।

कवच-ध्यानम्

ॐ ह्रां रक्ताम्बरा रक्त - वर्णा रक्त - सर्वाङ्ग-भूषणा । रक्तायुधा रक्त - नेत्रा रक्त - केशाति - भीषणा ।।१।।
रक्त - बाहू - नखा रक्त - दशना रक्त - दण्डिका । पतिं नारि चानुरक्ता देवी - भक्तं भजेज्जनम् ।।२।।
वसुधैव विशाला सा सुमेरु - युगल - स्तनी । दीर्घौ लम्बावति - स्थूलौ तावतीव - मनोहरौ ।।३।।
कर्कशावति - कान्तौ तौ सर्वानन्द - पयोनिधी । भक्तान् सा पालयेद् देवी सर्व-काम-दुघौ स्तनौ ।।४।।
खड्गं पात्रं च मुसलं लांगूलं च विभर्ति सा । आख्याता रक्त - चामुण्डा देवी योगेश्वरीति च ।।५।।
अनया व्याप्तमखिलं जगत् - स्थावर - जङ्गमम् । इमां यः पूजयेत् भक्त्या स व्याप्नोति चराचरम् ।।६।।

अर्गला-स्तोत्र-ध्यानम्

नारायणस्य हृदये भवति यथास्ते, नारायणोऽपि तव हृत् - कमले यथास्ते ।

नारायण त्वमपि शैव तथैव पाति, तौ तिष्ठता हृदि ममापि दयावती श्रीः ॥१॥

ॐ ह्रौं ह्रीं क्लीं ॐ क्लीं महा-लक्ष्म्यै नमः ।

शाकम्भरी नील - वर्णा नीलोत्पल - विलोचना । गम्भीर - नाभिस्त्रिवली - विभूषित - तनूदरी ॥२॥
सु - कर्कश - समोत्तुङ्ग - वृत्त - पीन - घन-स्तनी । मुष्टि - शिलीमुखापूर्णा कमलं कमलालया ॥३॥
पुष्प - पल्लव - मूलादि-फलादि - शाक-सञ्चयान् । काम्यानन्त - रसैर्युक्तान् क्षुद्र - मृत्यु - जरापहान् ॥४॥
कार्मुकं च स्फुरत् - कान्ति विभर्त्ति परमेश्वरी । शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता ॥५॥

कीलक-ध्यानम्

ॐ च्यरि-शङ्ख-कृपाण-खेट-वाणेक्षु - धनुः शूलकः तर्जनी दधाना भवति । महिषोत्तमाङ्ग-संस्था नव-दुर्गा श्रियमातनोति । ॐ ह्रौं ह्रीं क्लीं ॐ क्लीं महा-लक्ष्म्यै नमः ।

शाकम्भरी......दुर्गा प्रकीर्तिता (अर्गला-ध्यान-वत् श्लोक २ से ५)

अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्न - पानादिकं फलं । भीमाऽपि नील - वर्णाभा दंष्ट्रा दशन - भासुरा ॥६॥

प्रथम चरित-ध्यानम्

ॐ स्रंकारं वेद-मूलं जित-रिपु-बहुलं श्यामलं वीर-भद्रं । खंकारं व्योम-केशं घण-घण-निनदं खड्ग-खेटाग्र-हस्तम् ।
ॐकारं भीम-नादं हुतवह-नयनं दह्यमानं खिलांशं । फट्-कारं वज्र-दंष्ट्रं प्रणत-रिपु-जन-प्राण-हन्तारमीडचे ॥१॥

ॐ हुं श्रीं ह्रीं ॐ ह्रीं महा-लक्ष्म्यै नमः ।

त्रिगुणा तामसी देवी सात्विकी या त्रिधोदिता । सा सर्वा चण्डिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यंते । ॥२॥

योग - निद्रा हरेरुक्ता महा - काली तमो - गुणा । मधु - कैटभ - नाशार्थं यां तुष्टावम्बुजासनः ॥३॥
दश - वक्त्रा दश - भुजा दश - पादाञ्जन - प्रभा । विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचन - मालया ॥४॥
स्फुरद् - दशन - दंष्ट्रा सा मसि - रूपाऽपि भूमिपा । रूप - सौभाग्य-कान्तीनां सा प्रतिष्ठा महा-श्रियः ॥५॥
खड्ग - बाण-गदा - शूल-शङ्ख-चक्र - भुशुण्डि-भृत् । परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्च्योतद् - रुधिरं दधौ ॥६॥
एषा सा वैष्णवी माया महा - काली दुरत्यया । आराधिता वशी - कुर्यात् पूजा - कर्तुश्चराचरम् ॥७॥

मध्यम् चरित-ध्यानम्

ॐ स्रंकारं...प्राण-हन्तारमीडचे (प्रथम चरित-ध्यान-वत् श्लोक १) ॐ ह्रुं श्रीं ह्रीं ह्रीं ॐ श्रीं महा-लक्ष्म्यै नमः । सर्व-देव-शरीरेभ्यो......प्रभुर्भवेत् (रहस्य-वत्)

उत्तर-चरित-ध्यानम्

ॐ स्रं कारं......प्राण-हन्तारमीडचे (प्रथमं चरित-वत्, श्लोक १)
चरिते चरिते युग्म-माला-जपं कुर्यात् । प्रत्येक चरितस्य पृथक् नवार्ण-मन्त्रः ज्ञातव्यः । यथा—
[१] ॐ क्रीं ऐं महा-काल्यै विच्चे, [२] ॐ श्रीं ह्रीं महा-लक्ष्म्यै विच्चे, [३] ॐ ऐं क्लीं सरस्वत्यै विच्चे ।

पाठ-विधि

आत्म-शोधन

निम्न चार मन्त्रों द्वारा पहले आत्म-शोधन करें—

ॐ ऐं आत्म - तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा । ॐ ह्रीं विद्या - तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा ।।
ॐ क्लीं शिव - तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्वं - तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा ।।

गुरु-पूजन

आत्म-शोधन के पश्चात् प्राणायाम करके गुरु एवं गणेश का स्मरण करें । यथा—

आनन्दमानन्द-करं प्रसन्नं ज्ञान-स्वरूपं निज-बोध-रूपम् । योगीन्द्रमीड्यं भव-रोग-वैद्यं श्रीमद्-गुरुं नित्यमहं नमामि ।।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार द्वारा गुरु-पूजन करें । यथा—

ॐ गुं गुरुभ्यो नमः लं पृथिव्यात्मकं गन्धं परिकल्पयामि । ॐ गुं गुरुभ्यो नमः हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि ।
ॐ गुं गुरुभ्यो नमः यं वाय्वात्मकं धूपं घ्रापयामि । ॐ गुं गुरुभ्यो नमः रं वह्न्यात्मकं दीपं सन्दर्शयामि ।
ॐ गुं गुरुभ्यो नमः वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि । ॐ गुं गुरुभ्यो नमः सं सर्वात्मकं ताम्बूलं कल्पयामि ।।

इसके पश्चात् नीचे लिखे पद्यों से गणपति का स्मरण करें—

गणेश-पूजन

गजाननं भूत - गणाधि - सेवितं कपित्थ - जम्बू - फल - चारु - भक्षणम् ।
उमा - सुतं शोक - विनाश - कारकं नमामि विघ्नेश्वर - पाद - पङ्कजम् ॥
वक्र-तुण्ड ! महा - काय ! सूर्य - कोटि - सम - प्रभ ! निर्विघ्नं कुरु मे देव ! सर्व - कार्येषु सर्वदा ॥

इसके पश्चात् अपने अभीष्ट कर्म के अनुसार संकल्प करें—

संकल्प

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः । ॐ नमः परमात्मने । श्रीपुराण - पुरुषोत्तमस्य श्रीविष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्याद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीय - परार्द्धे श्रीश्वेत - वाराह - कल्पे वैवस्वत - नाम्नि मन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलि - युगे, कलि - युगस्य प्रथम - चरणे, जम्बू - द्वीपे, भारत - वर्षे, भरत-खण्डे, आर्यावर्तान्तर्गत - ब्रह्मावर्तैक - देशे, पुण्य-प्रदेशे, बौद्धावतारे वर्तमाने यथा - नाम - सम्वत्सरे, अमुकायने, महा - मांगल्य - प्रदे, मासानामुत्तमे मासे अमुक-मासे, अमुक-पक्षे, अमुक - तिथौ, अमुक - वासरान्वितायां अमुक - नक्षत्रे, अमुक - राशि - स्थिते सूर्ये, अमुकामुक-राशि - स्थितेषु चन्द्र - भौम - बुध - गुरु - शुक्र - शनिषु सत्सु, शुभे योगे, शुभे करणे, अमुक - गोत्रोत्पन्नः अमुक-शर्माहं श्रीनव - दुर्गा - प्रसादेन श्रीमहाकाली - महालक्ष्मी - महासरस्वती - देवता - प्रीत्यर्थं शापोद्धार - कवचा-र्गला - कीलक - पाठ - वेदोक्त - रात्रि - सूक्तं तथा दुर्गा - कवच - काली - कवच - लक्ष्मी - कवच - सरस्वती-कवच - पाठान्ते न्यास - विधि - सहित - नवार्ण - जप - सप्तशती - न्यास - ध्यान - सहित - श्रीमहाकाली-

महालक्ष्मी - महासरस्वती - सूक्तं न्यास - ध्यान - सहित - चरित - सम्बन्धी - विनियोग - ध्यान - पूर्वक - सृष्टि-स्थिति - संहार - क्रमेण स्थिति - क्रमेण पंचम - अध्यायं प्रारभ्य, चतुर्थ - अध्याय - पर्यन्तम् दुर्गा - सप्तशती-पाठं, तदन्ते न्यास - विधि - सहित - नवार्ण - मंत्र - जपम् । ततः पर - देवी - सूक्त - पाठं वेदोक्त - देवी-सूक्त-पाठं रहस्य - त्रय-पठनम् आपदुद्धार - बटुक - भैरव - स्तोत्र - कुञ्जिका - स्तोत्र - क्षमा - प्रार्थना - पाठं अहं करिष्ये ।

॥ अथ श्रीसप्तशती - पूजा - विधिः ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ श्रीदुर्गायै नमः ॥ श्रीशिवाम्बायै नमः ॥ ॐ अस्य श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी - महासरस्वती - महाचण्डी - चामुण्डा - महाचण्डी - त्रिगुणात्म - मूर्ति - दुर्गाम्बाया आवाहन - महा-मंत्रस्य ॐ श्रीब्रह्म - विष्णु - महेश्वरा ऋषयः । ॐ गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि । श्रीत्रिगुणात्मक - मूर्ति-दुर्गाम्बा देवता । ॐ प्रणवः बीजं । ॐ ह्रीं दुं दुर्गाम्बा शक्तिः । ॐ स्वाहा कीलकं श्रीत्रिगुणात्मक - मूर्ति - दुर्गाम्बाया आवाहने विनियोगः ॥

ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः तर्जनीभ्यां नमः ।
ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः मध्यमाभ्यां नमः । ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः अनामिकाभ्यां नमः ।
ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः करतल-करपृष्ठाभ्यांनमः ।
ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः हृदयाय नमः । ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः शिरसे स्वाहा ।
ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः शिखायै वषट् । ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः कवचाय हुँ ।

ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः नेत्र - त्रयाय वौषट् । ॐ क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं ॐ नमः अस्त्राय फट् ॥

'ॐ भूर्भुवः स्वरोम्' से दिग्बन्धन कर भगवती दुर्गा का ध्यानादि करें । यथा—

ॐ क्लीं सिंहस्था शशि-शेखरा मरकत-प्रख्या चतुर्भिर्भुजैः । शंखं चक्र-धनुः-शराँश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता ॥
आमुक्तांगद - हार - कंकण - रणत्कांची - रणन्नूपुरा । दुर्गा दुर्गति - हारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्कुण्डला ॥१॥

ॐ क्लीं विद्युद्दाम-सम-प्रभां मृगपति-स्कन्ध-स्थितां भीषणां । कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ॥
हस्तैश्चक्र-गदासि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं । विभ्राणामनलात्मिकां शशि-धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥२॥

ॐ क्लीं ध्यायेन्नित्यां महा-देवीं मूल-प्रकृतिमीश्वरीम् । ब्रह्म-विष्णु-शिवादीनां पूज्यां वन्द्यां सनातनीम् ॥३॥

ॐ क्लीं दुर्गे देवि ! पूजा - ग्रहणार्थं इहागच्छ दुर्गाम्बे ! सुरेश्वरि ॥४॥

ॐ क्लीं एह्येहि देव-देवेशि ! त्रिपुरे ! देव-पूजिते ! परामृत-प्रिये ! शीघ्रं सान्निध्यं कुरु सिद्धिदे ॥५॥

ॐ क्लीं सर्व-देव-देवेशि ! प्रेम-भक्ति-सुलभे ! सर्वावरण-संयुते ! यावत्त्वां पूजयिष्यामि,
प्रथम-मध्यमोत्तम-चरितस्य पारायणेन आराधयामि, तावत्त्वं दुर्गाम्बा सुस्थिरा भव ॥६॥

ॐ क्लीं दुर्गे देवि ! इहागच्छ सान्निध्यमिह कल्पय । पूजा - ग्रहणार्थं त्वं योगिनी - कोटिभिः सह ॥७॥

ॐ क्लीं दुर्गे देवि ! आवाहिता भव ॥ क्लीं स्थापिता भव ॥ क्लीं सन्निरुद्धा भव ॥ ॐ श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी - महासरस्वती श्रीमन्महाकाल - सहिता दक्षिण - कालिका महाचण्डी - चामुण्डा - त्रिगुणात्मक-मूर्ति-दुर्गाम्बा सांगा सपरिवारा सायुधा सवाहना सर्व - शक्ति - सहिता बटुक - भैरव - सहिता क्लीं सुप्रतिष्ठिता भव ॥ क्लीं वरदा भव ॥ क्लीं सुख - शान्तिदा भव ॥

योनि - मुद्रा प्रदर्शित कर प्रार्थना - पूर्वक आवाहन करे—

ॐ क्लीं स्वागतं देव-देवेशि ! मद्भाग्यात्त्वमिहागता। प्राकृतं दृष्ट्वा दुर्गे देवि ! त्वं मां बाल-वत् पुत्रवत्परिपालय ।।८।।
ॐ ह्रीं दुं दुर्गा-देवि ! क्लीं ह्रीं क्लीं ऐं क्लीं मम हृदये चिरं तिष्ठ, चिरं तिष्ठ दुर्गाम्बा-शिवाम्बा सुरेश्वरि !

ॐ क्लीं हे मातरस्यामर्चायां सन्निरुद्धा भवाम्बिके !

ॐ क्लीं दुर्गाम्ब ! बटुक-भैरव-सहिते ! इहागच्छ त्वत्प्राणाश्चाधः
प्राणैः सहाच्युते ! इहागच्छ दुर्गाम्ब ! त्वरितमत्रैव सर्व-शक्तयः ।।६।।

ॐ क्लीं दुर्गाम्ब ! सर्वेन्द्रियाधिदेवतास्ता इहागच्छतु चण्डिके !
इहागच्छतु शिवाम्बा सर्व - शक्ति - सहिता सहेश्वरा ।।१०।।

ॐ क्लीं स्वागतं ते भवत्वंब ! शिव-लोकात् शिव-प्रिये ! प्रसादं कुरु मां भद्र-कालि ! नमोऽस्तु ते ।।११।।
ॐ क्लीं धन्योऽहं कृत-कृत्योऽहं सफलं जीवनं मम । आगतासि यतो मातर्महेश्वरि ! ममालयं ।।१२।।

ॐ क्लीं हस्त-न्यस्त-वराम्बुजाभय-गदां मुक्ताभृतांभोरुहैर्युक्तामम्बुज-पुंज-पिंजर-परां विद्युत्प्रभा-सन्निभाम् ।
प्रातः पूष-मयूख-मंडल-वलद् व्योमानुकारांबरां लक्ष्यालक्ष्य-विलोल-लोचनवतीमावाहयामीश्वरीम् ।।१३।।
ॐ क्लीं बाणाम्भोरुह-पुस्तकाक्ष-वलयैः स्फूर्जत्कराम्भोरुहैर्लाक्षा-कौस्तुभ-शुद्धकाधर-दलैर्विभ्राजतीं शारदाम् ।
वाग्देवीमरविंद - सुंदर - दृशां कर्पूर - कुंदोज्ज्वलां दुग्धांभोनिधि - सुंदराभर - वरामावाहयेद्भारतीम् ।।१४।।

अब पुस्तक-पूजन—'नमो देव्यै महादेव्यै'—आदि मन्त्रों से करे ।

शाप - विमोचनम्

ॐ अस्य श्रीचण्डिकाया ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शाप - विमोचन - मन्त्रस्य वशिष्ठ - नारद-प्रभृतयर्षयः सर्वैश्वर्य - कारिणी श्रीदुर्गा देवता, चरित - त्रयं बीजं, ह्रीं शक्तिः, त्रिगुणात्म - स्वरूप - चण्डिका-शाप - विमुक्तये मम संकल्पित - कार्यं - सिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः ।

ॐ ह्रीं रीं रेतः - स्वरूपिणि ! मधु - कैटभ - मर्दिनि ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥१॥

ॐ श्रीं बुद्धि - स्वरूपिणि ! महिषासुर - सैन्य-नाशिनि ! ब्रह्म-वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥२॥

ॐ रं रक्त - स्वरूपिणि । महिषासुर - मर्दिनि ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥३॥

ॐ क्षुं क्षुधा - स्वरूपिणि ! देव - वन्दिते ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥४॥

ॐ छां छाया - स्वरूपिणि ! दूत - संवादिनि ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥५॥

ॐ शं शक्ति - स्वरूपिणि ! धूम्रलोचन - घातिनि ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥६॥

ॐ तृं तृषा - स्वरूपिणि ! चण्ड-मुण्ड - क्षय - कारिणि ! ब्रह्म - वशिष्ठ-विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥७॥

ॐ क्षां क्षान्ति - स्वरूपिणि ! रक्तबीज - क्षय-कारिणि ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥८॥

ॐ जां जाति - स्वरूपिणि ! निशुम्भ-क्षय - कारिणि ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥९॥

ॐ लं लज्जा - स्वरूपिणि ! शुम्भ-क्षय - कारिणि ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥१०॥

ॐ शां शान्ति - स्वरूपिणि ! देव - स्तुत्यै ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥११॥
ॐ श्रं श्रद्धा - स्वरूपिणि ! सकल - फल - दात्रि ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥१२॥
ॐ कां कान्ति - स्वरूपिणि ! राज - वर - प्रदे ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥१३॥
ॐ मां मातृ - स्वरूपिणि ! अनर्गल - महिम - सहिते ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥१४॥
ॐ ह्रीं श्रीं दुं दुर्गे ! सं सर्वैश्वर्यं - कारिणि ! ब्रह्म - वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥१५॥
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिवे ! अभेद्य - कवच-स्वरूपिणि ! ब्रह्म - वशिष्ठ-विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥१६॥
ॐ क्रीं कालि ! कालि ! फट् स्वाहे ऋग्वेद-स्वरूपिणि ! ब्रह्म-वशिष्ठ - विश्वामित्र - शापाद् विमुक्ता भव ॥१७॥
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं महाकाली - महालक्ष्मी - महासरस्वती - स्वरूपिण्यै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गा - देव्यै नमः ॥१८॥
अस्यैवं हि महा - मन्त्रान् पठित्वा परमेश्वर ! चण्डी - पाठं दिवा - रात्रौ कुर्यादेव न संशयः ॥१९॥
एवं मन्त्रं न जानाति चण्डी - पाठं करोति यः । आत्मानं चैव दातारं क्षीणं कुर्यान्न संशयः ॥२०॥

अथ देव्याः कवचम्

ॐ अस्य श्रीचण्डी - कवचस्य ब्रह्मा ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः । चामुण्डा देवता । अङ्ग - न्यासोक्त - मातरो बीजं । दिग्बन्ध-देवतास्तत्त्वम् । श्रीजगदम्बा - प्रीत्यर्थे सप्तशती - पाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः ।

ॐ नमश्चण्डिकायै

मार्कण्डेय उवाच

ॐ यद् - गुह्यं परमं लोके सर्वं - रक्षा - करं नृणाम् । यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥१॥

ब्रह्मोवाच

अस्ति गुह्य - तमं विप्र ! सर्वं - भूतोपकारकम् । देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महा-मुने ॥२॥

प्रथमं शैल - पुत्री च द्वितीयं ब्रह्म - चारिणी । तृतीयं चन्द्र - घण्टा च कूष्माण्डा च चतुर्थकम् ॥३॥

पञ्चमं स्कन्द - माता च षष्ठं कात्यायनी च । सप्तमं काल - रात्रिश्च महा - गौरी चाष्टमम् ॥४॥

नवमं सिद्धि-दात्री च नव - दुर्गाः प्रकीर्तिताः । उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥५॥

अग्निना दह्यमानस्तु शत्रु - मध्ये गतो रणे । विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः ॥६॥

न तेषां जायते किञ्चिदशुभं रण - संकटे । नापदं तस्य पश्यामि शोक - दुःख - भयं नहि ॥७॥

यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषां वृद्धिः प्रजायते । (ये त्वां स्मरन्ति देवेशि ! रक्षसे तान्न संशयः) ॥८॥

प्रेत - संस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना । ऐन्द्री गज - समारूढ़ा वैष्णवी गरुड़ासना ॥९॥

माहेश्वरी वृषारूढ़ा कौमारी शिखि - वाहना । (लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्म - हस्ता हरि - प्रिया) ॥१०॥

निगमागम शक्ति शोध संस्थान
सिहोरा जबलपुर

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रदीप तमरहाई जबलपुर

(श्वेत - रूप - धरा देवी ईश्वरी वृष - वाहना)। ब्राह्मी हंस - समारूढ़ा सर्वाभरण - भूषिता ॥११॥
(अस्येता मातरः सर्वाः सर्व - योग - समन्विताः)। नानाभरण - शोभाढ्या नाना - रत्नोपशोभिताः ॥१२॥
दृश्यन्ते रथमारूढ़ा देव्यः क्रोध - समाकुलाः । शंखं चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम् ॥१३॥
खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च । कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ॥१४॥
दैत्यानां देह - नाशाय भक्तानामभयाय च । धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानाञ्च हिताय वै ॥१५॥
(नमस्तेऽस्तु महा-रौद्रे ! महा-घोर - पराक्रमे) महाबले ! महोत्साहे ! महा-भय - विनाशिनि ॥१६॥
त्राहि मां देवि ! दुष्प्रेक्षे ! शत्रूणां भय - वर्द्धिनि । प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेयामग्नि - देवता ॥१७॥
दक्षिणेऽवतु वाराही नैर्ऋत्यां खड्ग - धारिणी । प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद् वायव्यां मृग - वाहिनी ॥१८॥
उदीच्यां पातु कौमारी ऐशान्यां शूल - धारिणी । ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेदधस्ताद् वैष्णवी तथा ॥१९॥
एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शव - वाहना । जया मे चाग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः ॥२०॥
अजिता वाम - पार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता । शिखामुद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ॥२१॥
माला - धारी ललाटे च भ्रुवो रक्षेद् यशस्विनी । त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यम - घण्टा च नासिके ॥२२॥
शंखिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वार - वासिनो । कपोलौ कालिका रक्षेत् कर्ण - मूले तु शाङ्करी ॥२३॥
नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च चर्चिता । अधरे चामृत - कला जिह्वायाञ्च सरस्वती ॥२४॥
दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठ - देशे तु चण्डिका । घण्टिकां चित्र - घण्टा च महामाया च तालुके ॥२५॥
कामाक्षी चिबुकं रक्षेद् वाचं मे सर्व - मंगला । ग्रीवायां भद्रकालो च पृष्ठ - वंशे धनुर्धरी ॥२६॥

नील - ग्रीवा बहिः-कण्ठे नलिकां नल - कूबरी । स्कन्धयोः खड्गिनी रक्षेद् बाहू मे वज्र - धारिणी ॥२७॥
हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चांगुलीषु च । नखाञ्छूलेश्वरी रक्षेत् कुक्षौ रक्षेत् कुलेश्वरी ॥२८॥
स्तनौ रक्षेन्महादेवी मनः - शोक - विनाशिनी । हृदये ललिता देवी उदरे शूल - धारिणी ॥२९॥
नाभौ च कामिनी रक्षेद् गुह्यं गुह्येश्वरी तथा । पूतना कामिका मेढ्रं गुदे महिष - वाहिनी ॥३०॥
कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्य - वासिनी । जङ्घे महाबला रक्षेत् (सर्व - काम - प्रदायनी)॥३१॥
गुल्फयोर्नारसिंही च पाद - पृष्ठे तु तैजसी । पादांगुलीषु श्री रक्षेत् पादाधस्तल - वासिनी ॥३२॥
नखान् दंष्ट्रा कराली च केशांश्चैवोर्ध्व - केशिनी । रोम - कूपेषु कौबेरी त्वचं वागीश्वरी तथा ॥३३॥
रक्त-मज्जा-वसा - मांसान्यस्थि - मेदांसि पार्वती । अन्त्राणि काल - रात्रिश्च पित्तश्च मुकुटेश्वरी ॥३४॥
पद्मावती पद्म - कोशे कफे चूड़ामणिस्तथा । ज्वालामुखी नख-ज्वालामभेद्या सर्व - सन्धिषु ॥३५॥
शुक्रं ब्रह्माणी मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा । अहंकारं मनो बुद्धिं रक्षेन्मे धर्म - धारिणी ॥३६॥
प्राणापानौ तथा व्यानमुदानं (च समानकम्)।(वज्र - हस्ता च मे रक्षेत् प्राणं कल्याण - शोभना)॥३७॥
(रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी)।(सत्त्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा)॥३८॥
(आयू रक्षतु वाराही धर्मं रक्षतु वैष्णवी)। यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च धनं विद्याश्च चक्रिणी ॥३९॥
गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके ! शिष्यान् (पुत्रान्) रक्षेन्महालक्ष्मी सिद्धिं (भार्यां) रक्षतु भैरवी ॥४०॥
(पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेम - करी तथा)(राज - द्वारे महालक्ष्मी)विजया सर्वतः स्थिता)॥४१॥

रक्षा - हीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु । तत्सर्वं रक्ष मे देवि ! जयन्ती पाप - नाशिनी ॥४२॥

पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः । कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ॥४३॥
तत्र तत्रार्थ - लाभश्च विजयः सर्व - कामिकः । यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ॥४४॥
निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः । त्रैलोक्ये तु भवेत् पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ॥४५॥
इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् । यः पठेत् प्रयतो नित्यं त्रि - सन्ध्यं श्रद्धयान्वितः ॥४६॥
दैवी कला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः । जीवेद् वर्ष - शतं साग्रमपमृत्यु - विवर्जितः ॥४७॥
नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूता विस्फोटकादयः । स्थावरं जंगमं चैव कृत्रिमं चापि यद्विषम् ॥४८॥
अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्र - यन्त्राणि भूतले । भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः ॥४९॥
सहजा कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा । अन्तरिक्ष - चरा घोरा डाकिन्यश्च महा-बलाः ॥५०॥
ग्रह - भूत - पिशाचाश्च यक्ष - गन्धर्व - राक्षसाः । ब्रह्म - राक्षस - वेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः ॥५१॥
नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते । मानोन्नतिर्भवेद् राज्ञस्तेजो - वृद्धि - करं परम् ॥५२॥
यशसा वर्धते सोऽपि कीर्ति - मण्डित - भूतले । जपेत् सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ॥५३॥
यावद् भूमण्डलं धत्ते सशैल - वन - काननम् । तावत् तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्र - पौत्रिकी ॥५४॥
देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुलर्भम् । प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामाया - प्रसादतः ॥५५॥
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् (लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते-ॐ) ॥५६॥

॥ श्रीदेव्याः कवचं सम्पूर्णम् ॥

अथार्गला - स्तोत्रम्

ॐ अस्य श्रीअर्गला - स्तोत्र - मन्त्रस्य विष्णुः ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः । श्रीमहालक्ष्मीर्देवता । श्रीजगदम्बा-प्रीत्यर्थे सप्तशती - पाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः ।

ॐ नमश्चण्डिकायै

मार्कण्डेय उवाच

ॐ जयन्ती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी । दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ।।१।।
जय त्वं देवि ! चामुण्डे ! जय भूतार्ति - हारिणि । जय सर्व-गते ! देवि ! काल - रात्रि ! नमोऽस्तु ते ।।२।।
मधु - कैटभ - विद्रावि ! विधातृ - वरदे ! नमः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।३।।
महिषासुर - निर्णाशि ! भक्तानां सुखदे ! नमः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।४।।
रक्त - बीज - क्षये देवि ! चण्ड-मुण्ड-विनाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।५।।
शुम्भस्यैव निशुम्भस्य धूम्राक्षस्य च मर्दिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।६।।
वन्दिताङ्घ्रि-युगे ! देवि ! सर्व-सौभाग्य-दायिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।७।।
अचिन्त्य-रूप - चरिते ! सर्व - शत्रु - विनाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।८।।
नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके ! दुरितापहे । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।९।।
स्तुवद्भ्यो भक्ति-पूर्वं त्वां चण्डिके ! व्याधि-नाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।१०।।

चण्डिके ! सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥११॥
देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१२॥
विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१३॥
विधेहि देवि ! कल्याणं विधेहि परमां श्रियम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१४॥
सुरासुर - शिरो - रत्न - निघृष्ट - चरणेऽम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१५॥
विद्या - वन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मी - वन्तं जनं कुरु । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१६॥
प्रचण्ड - दैत्य - दर्पघ्ने ! चण्डिके ! प्रणताय मे । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१७॥
चतुर्भुजे ! चतुर्वक्त्र - संस्तुते ! परमेश्वरि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१८॥
कृष्णेन संस्तुते देवि ! शश्वद् - भक्त्या सदाम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१९॥
हिमाचल - सुता - नाथ - संस्तुते ! परमेश्वरि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२०॥
इन्द्राणी - पति - सद्भाव - पूजिते ! परमेश्वरि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२१॥
देवि ! प्रचण्ड - दोर्दण्ड-दैत्य - दर्प - विनाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२२॥
देवि ! भक्त - जनोद्दाम - दत्तानन्दोदयेऽम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२३॥
सिद्धि (पत्नीं) मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम् । तारिणीं दुर्ग - संसार - सागरस्य कुलोद्भवाम् ॥२४॥
इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महा - स्तोत्रं पठेन्नरः । सा तु सप्तशती - संख्या - वरमाप्नोति सम्पदाम् ॥२५॥

॥ श्रीदेव्या अर्गला - स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अथ कीलकम्

ॐ अस्य श्रीकीलक - मन्त्रस्य शिव ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः । श्रीमहा - सरस्वती देवता । श्रीजगदम्बा - प्रीत्यर्थं सप्तशती - पाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः ।

ॐ नमश्चण्डिकायै

मार्कण्डेय उवाच

ॐ विशुद्ध - ज्ञान - देहाय त्रिवेदी दिव्य - चक्षुषे । श्रेयः - प्राप्ति - निमित्ताय नमः सोमार्द्धं - धारिणे ॥१॥
सर्वमेतद् विजानीयान्मन्त्राणामपि कीलकम् । सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्य - तत्परः ॥२॥
सिद्धयन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि । एतेन स्तुवतां देवी स्तोत्र - मात्रेण सिद्धयति ॥३॥
न मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते । विना जाप्येन सिद्ध्येत् सर्वमुच्चाटनादिकम् ॥४॥
समग्राण्यपि सिद्धयन्ति लोक - शङ्कामिमां हरः । कृत्वा निमन्त्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम् ॥५॥
स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुप्तं चकार सः । समाप्तिर्न च पुण्यस्य तां यथा - वन्नियन्त्रणाम् ॥६॥
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेवं न संशयः । कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥७॥
ददाति प्रति - गृह्णाति नान्यथैषा प्रसीदति । इत्थं रूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम् ॥८॥
यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति संस्फुटम् । स सिद्धः स गणः सोऽपि गन्धर्वो जायते नरः ॥९॥
न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापीह जायते । नापमृत्यु - वशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥१०॥

ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत न कुर्वाणो विनश्यति। ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥११॥
सौभाग्यादि च यत्किञ्चिद् दृश्यते ललना - जने। तत्सर्वं तत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम् ॥१२॥
शनैस्तु जाप्यमानेऽस्मिन् स्तोत्रे सम्पत्तिरुच्चकैः। भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत् ॥१३॥
ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्य - सम्पदः। शत्रु - हानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः ॥ॐ॥

॥ श्रीदेव्याः कीलक - स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अथ वेदोक्तं रात्रि - सूक्तम्

ॐ रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा देव्यक्षभिः। विश्वा अधि - श्रियोऽधित ॥१॥
ओर्वप्रा अमर्त्या निवतो देव्युद्वतः। ज्योतिषा बाधते तमः ॥२॥
निरु स्वसारमस्कृतोषसं देव्यायती। अपेदु हासते तमः ॥३॥
सा नो अद्य यस्या वयं नि ते यामन्न विक्ष्महि। वृक्षेन वर्सातिं वयः ॥४॥
नि ग्रामासो अविक्षत नि पद्वन्तो नि पक्षिणः। नि श्येनासश्चिदर्थिनः ॥५॥
यावया वृक्यं वृकं यवय स्तेनमूर्म्ये। अथा नः सुतरा भव ॥६॥
उप मा पेपिशत्तमः कृष्णं व्यक्तमस्थित। उष ऋणेव यातय ॥७॥
उप ते गा इवाकरं वृणीष्व दुहितर्दिवः। रात्रिस्तोमं न जिग्युषे ॐ ॥८॥

श्रीवेदोक्तं रात्रि - सूक्तं सम्पूर्णम्।

।। अथ चण्डिका-दल-प्रारम्भः ।।

ॐ नमश्चण्डिकायै ।। अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चण्डिका - दलमुत्तमम् । मन्त्रं विना तु जप्त्वा वै तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ।।१।। ॐ नमो भगवति जय जय चामुण्डे चण्डि चण्डेश्वरि चण्डायुधे ! चण्ड-रूप-धारिणि ताण्डव-प्रिये ! कुण्डली-भूत-दिङ्-भूत-दिङ्-नाग-मण्डलीकृत-गण्ड-स्थले समस्त-जगदण्ड-संहार-कारिणि परे अनन्तानन्त-रूपे ! शिवे नर-शिरो-मालालंकृत-वक्ष-स्थले महा-कपाल-भालोज्ज्वलन्मणि-मुकुट-चूड़ावतंस-चन्द्र-खण्डे महा-भीषणे देवि ! महा-माये षोडश-कला-परिवृत्तोल्लासिते महादेवासुर-समर-निहत-रुधिरार्द्रीकृतालम्बित-तनु-कमलोद्भासित-करे ! सम्पूर्ण-रुधिर-शोभित-महा-कपोल-वक्त्र-हासिनि दृढ-तरनि बद्धयमानधर-शोभित-महा-कपोले चन्द्र-भासिनि ! दृढतराबद्ध-महा-नाद-सहिते हेम-काञ्ची-दामोज्वलीकृत-महा-मण्डिते ! महा-शम्भु-रूपे महा-व्याघ्र-चर्माम्बर-धरे ! महा-सर्प-यज्ञोपवीतिनि ! महा-श्मशान-भस्मोद्धूलित-सर्व-गात्रे ! कालि कंकालि महा-कालि कालाग्नि रुद्र-कालि ! काल-संकर्षिणि काल-रात्रि नमो दुष्ट-भक्षिणि ! नाना-भूत-प्रेत-पिशाच-गण-सहस्र-सङ्गिरिणि नाना-व्याधि-प्रशमनि ! सर्व-दुष्ट-प्रमथिनि सर्व-दारिद्र्य-नाशिनि युगे युगे खादित-मांस-खण्डे ! गायत्री-विक्षिप्त-कला-कलायमान-कंकाल-धारिणि ! मधु-मांस-रुधिर-सन्तत-विलासिनि सकल-सुरासुर-गन्धर्व-विद्याधर-किन्नर-किम्पुरुषादिभिः स्तूयमाने सर्व-मन्त्राधिभूताधिकारिणि सर्व-शक्ति-प्रधान ! सकल-लोक-पावनि सकल-दुरित-प्रक्षालिनि सकल-लोक-जननि ! ब्राह्मि माहेश्वरि कौमारि वैष्णवि वाराहि नारसिंहीन्द्राणि चामुण्डे महालक्ष्मी-स्वरूपे ! महा-विद्ये योगिनि योगी-श्वरि चण्डिके महा-माये ! विश्व-रूपिणि सर्वाभरण-भूषिते अतल-वितल-सुतल-महातल-रसातल-पातालादि-

चतुर्दश-भुवनैक-नाथे ! ॐ नमः पितामहाय, ॐ नमो नारायणाय, ॐ नमः शिवाय । एवं सकल-लोकैक-जायमाने ब्रह्म-विष्णु-महेश्वरि ! दण्ड-कमण्डलु-धारिणि, शंख-चक्र-गदा-पद्म-धारिणि ! परशु-शूल-पिनाक-कण्टक-धारिणि सरस्वति पद्मालये ! सावित्रि सकल-जगत्-स्वरूपिणि महा-क्रूरे ! प्रसन्न-रूप-धारिणि सर्व-मंगल-प्रिये ! महिषासुर-मर्दिनि कात्यायनि दुर्गे निद्रा-रूपिणि ! शर-चाप-शूल-कपाल-करवाल-खड्ग-डमरुकांकुश-गदा-परशु-तोमर-भिन्दि-पाल-भुशुण्डी-मुसल-मुग्दर-परिघायुध-दोर्दण्डिनि सहस्र-चन्द्रार्क-वह्नि-नयने ! इन्द्राग्नि-यम-नैर्ऋति-वरुण-वायु-कुबेर-ईशान-प्रधान-शक्ति-भूते ! सप्त-द्वीप-समुद्रोपर्युपरि-महाभ्यासेश्वरि महा-चराचर-प्रपञ्च-तनूदरे ! महा-प्रधाने महा-कैलास-पर्वतोद्यान-वन-क्षेत्र-नदी-तीर-देवताद्यायतनालंकृते मेदिनी-नाथे ! वशिष्ठ-वामदेवादि-मुनि-गण-स्पर्श-चरणार-विन्दे ! द्वि-चत्वारिंशद्वर्ण-सहिते पर्याय-स्थाने वेद-वेदाङ्गानेक-शास्त्र-भूते ! शब्द-ब्रह्म-मये मातृका-देवि ! शिरः संरक्ष रक्ष, मम शत्रून् हुंकारेण नाशय नाशय, भूत-प्रेत-पिशाचानुच्चाटयोच्चाटय, वशी कुरु वशी कुरु, क्षोभय क्षोभय, संक्रामय संक्रामय, विदारय विदारय, द्रावय द्रावय, सकल-चौरान् मूर्ध्नि स्फोटय स्फोटय, सकल-शत्रून् शीघ्रं मारय मारय, हुं फट् स्वाहा ।

श्रीरुद्र-यामले तन्त्रे सप्तशती-दलं सम्पूर्णम् ॥

॥ अथ सप्तशती-हृदय-प्रारम्भः ॥

इसमें नवार्ण के अनुसार न्यास-ध्यान करें ।

ॐ अस्य श्रीचण्डिका-हृदय-माला-मन्त्रस्य त्रिगुणात्मक ऋषिः । विराट् छन्दः । श्रीमहा-चण्डी देवता । ऐं बीजं । ह्रीं शक्तिः । क्लीं कीलकम् । मम अभीष्ट-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

ब्रह्मोवाच—अथातः सम्प्रवक्ष्यामि विस्तरेण यथा - तथम् । चण्डिका-हृदयं गुह्यं शृणुष्वेकाग्र-मानसः ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रुँ ऐं स्त्रीं श्रीं ॐ नमो भगवति जय जयं ज्वाला-मालिनि ! चामुण्डे चण्डिके त्रिदश-मणि-मुकुट-कोटि-निघृष्ट-चरणारविन्दे ! गायत्रि सावित्रि सरस्वति महा-सन्ध्ये महा-बाण-कृताभरणे ! भैरव-रूप-धारिणि प्रकट-सदंष्ट्रोग्र-वदने ! घोरे घोरासने नयनोज्वल-ज्वाल-सहस्र-परिवृते ! महाट्टहास-धवली-कृत दिगन्तरे ! दिवाकर-सहस्र-परिवृते ! काम-रूप-धारिणि ! महा-मणि-द्योतित-शशि-प्रभा-भासित-सकल-दिगन्तरे ! सर्वायुध-परिपूर्णे कपाल-हस्ते गज-गामिन्यौत्तरिण्ये ! भूत-वेताल-परिवृते प्रकम्पित-चराचरे ! मधु-कैटभ-महिषासुर-धूम्रलोचन-चण्ड-मुण्ड-रक्तबीज-निशुम्भ-शुम्भादि-दैत्य-निष्कण्टिके ! कालरात्रि-महामाये शिवे नित्ये त्रिभुवन-धरा-धरे ! वामे ज्येष्ठे वरदे रौद्रि अम्बिके कालि कल-बिकरिणि ! बल-प्रमथिनि सर्व-भूत-दमनि मनोन्मय्य-धारिणि ! ब्राह्मि माहेश्वरि कौमारि वैष्णवि ! वाराहि नारसिंहीन्द्राणि चामुण्डे ! माहेन्द्रि शिव-दूति महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती च त्रि-स्थिते ! नाद-मध्ये स्थिते महोग्र-विषोरग-फणा-फणि-मुकुट-रत्न-ज्वाला-वलि ! महाहि-हार-भूषित-पाद-बाहु-कण्ठोत्तमाङ्गे मालाकुले ! नव-रत्न-निधि-कोशे, शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गन्धाकाश-वाक्-पाणि-पाद-पायूपस्थ-श्रोत्र-त्वक्-चक्षुर्जिह्वा-घ्राण-मध्य-स्थिते ! चक्षुष्मति महा-विषोपविघ्ने महा-ज्वालानले ! महा-भैरव-स्तुते सर्व-सिद्धि-प्रदे ! निर्मले निष्कले नाभ्याधारादि-संस्थिते ! परं-ज्योतिः-स्वरूपे सोम-सूर्याग्नि-मण्डल-परिवृते ! ऊर्ध्वं-विशुद्धान्तक-प्रभे विनिर्गत-ब्रह्म-विष्णु-रुद्र-दैवते ! परे अपरे प्रभा-भासित-चराचरे पंच-विंशति-तत्वावबोधिनि महा-शून्यागमे ! पति-बन्धु-संस्थिते भुक्ति-मुक्ति-प्रदे ! निर्गुणे ऋग्यजुः-सामाथर्वणि पठिते ! एह्येहि भगवति स्थूल-सूक्ष्म-परे हुङ्कार-निरूपिते ! परम-कारुणिके महाज्वाला-मणे महिषोपरि-गन्धर्व-विद्याधरार्च्चिते ! भुजंग-महिमे जृम्भिणि वशीकरिणि जृम्भे मोहे क्षोभे

बीज-पंचक-मध्य-स्थिते ! महा-योगिनि महा-ज्वर-क्षेत्र-नायिके यक्ष-राक्षस-महा-ज्वर-क्षेत्र-विषोप-विघ्ने ! गन्धर्वं-विद्याधराराधिते ॐकार-श्रीङ्कार-हस्ते ! आं क्रीं अग्नि-पात्रे, द्रां शोषय शोषय, प्लुं प्लावय प्लावय, क्लीं ब्रीं सुकुमारय सुकुमारय, प्लुं नाशय नाशय, सीं उन्मादय उन्मादय, ग्लौं मोहय मोहय, ह्लीं आं ह्लीं आवेशय आवेशय, श्रीं प्रवेशय प्रवेशय, स्त्रीं आकर्षय आकर्षय, हुँ हुँ फट् अतीतानागत-वर्तमानान्दिशं विदिशं, ऐं ह्लीं श्रीं श्रावय श्रावय, सर्वं प्रवेशय प्रवेशय, त्रैलोक्यं वश-वर्ति, ऐंकार वशी कुरुष्व, ऐं ह्लीं स्त्रीं द्रावय द्रावय, सर्वं प्रवेशय प्रवेशय, ऐंङ्कारचितां वशं कुरु वशं कुरु, ऐं ह्लीं श्रीं हां हीं हूँ हैं हौं हः, ह्लीं श्रीं स्त्रां स्त्रीं स्त्रूं स्त्रैं स्त्रौं स्त्रः मम सर्व-कार्याणि साधय साधय हुँ फट् स्वाहा ।

एक - विंशति - वारं तु पठेदेवं जपेत्तु वा । राज - द्वारे श्मशाने च विदेशे शत्रु - मण्डले ॥१॥

भूताग्नि-रण-मध्ये च सर्व-कार्याणि साधयेत् । चण्डिका-हृदयं गुह्यं त्रि-सन्ध्यं कीर्तयेद् द्विजः ॥२॥

सर्व-काम-प्रदं नृणां भुक्ति-मुक्ति च विन्दति ॥३॥

श्रीरुद्र-यामले तन्त्रे सप्तशती-हृदयं सम्पूर्णम् ॥

अथ ब्रह्माण्ड-विजयं नाम दुर्गा-कवचम्

नारायण उवाच

श्रृणु देवि ! प्रवक्ष्यामि दुर्गायाः कवचं शुभम् । श्रीकृष्णेनैव यद् - दत्तं गो - लोके ब्रह्मणे पुरा ॥१॥
ब्रह्मा त्रिपुर - संग्रामे शंकराय ददौ पुरा । जघान त्रिपुरं रुद्रो यद् धृत्वा भक्ति - पूर्वकम् ॥२॥
हरो ददौ गौतमाय पद्माक्षाय च गौतमः । यतो बभूव पद्माक्षः सप्त - द्वीपेश्वरो जयी ॥३॥
यद् धृत्वा पठनाद् ब्रह्मा ज्ञानवाञ्छक्तिमान् भुवि । शिवो बभूव सर्वज्ञो योगिनां च गुरुर्यतः ।
शिव - तुल्यो गौतमश्च बभूव मुनि - सत्तमः ॥४॥
ब्रह्माण्ड - विजयस्यास्य कवचस्य प्रजापतिः । ऋषिश्छन्दश्च गायत्री देवी दुर्गति - नाशिनी ॥५॥
ब्रह्माण्ड - विजये चैव विनियोगः प्रकीर्तितः । पुण्य - तीर्थं च महतां कवचं परमाद्भुतम् ॥६॥
ॐ ह्रीं दुर्गति - नाशिन्यै स्वाहा मे पातु मस्तकम् । ॐ ह्रीं मे पातु कपालं च ॐ ह्रीं श्रीं मम लोचने ॥७॥
पातु मे कर्ण - युग्मं च ॐ दुर्गायै नमः सदा । ॐ ह्रीं श्रीं मम नासां मे सदा पातु च सर्वतः ॥८॥
ह्रीं श्रीं ह्रीं मम दन्तानि पातु क्लीमोष्ठ - युग्मकम् । क्रीं क्रीं क्रीं पातु कण्ठं च दुर्गे रक्षतु गण्डकम् ॥९॥
स्कन्धं दुर्गं - विनाशिन्यै स्वाहा पातु निरन्तरम् । वक्षो विपद् - विनाशिन्यै स्वाहा मे पातु सर्वतः ॥१०॥
दुर्गे दुर्गे रक्षिणि च स्वाहा नाभिं सदाऽवतु । दुर्गे दुर्गे रक्ष रक्ष पृष्ठं मे पातु सर्वतः ॥११॥
ॐ ह्रीं दुर्गायै स्वाहा च हस्तौ पादौ सदाऽवतु । ॐ ह्रीं दुर्गायै स्वाहा च सर्वाङ्गं मे सदाऽवतु ॥१२॥

प्राच्यां पातु महा - माया आग्नेयां पातु कालिका । दक्षिणे दक्ष - कन्या च नैर्ऋत्यां शिव - सुन्दरी ।।१३।।
पश्चिमे पार्वती पातु वाराही वायव्यां सदा । कुबेर - माता कौबेर्यामैशान्यामीश्वरी सदा ।।१४।।
ऊर्ध्वं नारायणी पातु अम्बिकाधः सदाऽवतु । ज्ञाने ज्ञान - प्रदा पातु स्वप्ने निद्रा सदाऽवतु ।।१५।।
एवं ते कथितं वत्स ! सर्वं - मन्त्रौघ - विग्रहम् । ब्रह्माण्ड - विजयं नाम कवचं परमाद्भुतम् ।।१६।।
सुस्नाताः सर्वं - तीर्थेषु सर्वं - यज्ञेषु यत् - फलम् । सर्वं - व्रतोपवासे च तत् - फलं लभते नरः ।।१७।।
गुरुमभ्यर्च्यं विधि - वद् वस्त्रालंकार - चन्दनैः । कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ कवचं धारयेत्तु यः ।।१८।।
स च त्रैलोक्य - विजयी सर्वं - शत्रु - प्रमर्दकः । इदं कवचमज्ञात्वा भजेद् दुर्गति - नाशिनीम् ।।१९।।
सप्त - लक्ष - प्रजप्तोऽपि न मन्त्रः सिद्धि - दायकः ।।२०।।
कवचं काण्व - शाखोक्तमुक्तं नारद ! सुन्दरम् । यस्मै कस्मै न दातव्यं गोपनीयं सुदुर्लभम् ।।२१।।

श्रीब्रह्म - वैवर्ते ब्रह्माण्ड - विजयं नाम दुर्गा - कवचम् सम्पूर्णम् । (गणपति - खण्ड ३९/३-२३)

अथ मन्त्र-सहितं काली-कवचम्

नारद उवाच

कवचं श्रोतुमिच्छामि तां च विद्यां दशाक्षरीम् । नाथ ! त्वत्तो हि सर्वज्ञ ! भद्र - काल्याश्च साम्प्रतम् ।।१।।

नारायण उवाच

शृणु नारद ! वक्ष्यामि महा - विद्यां दशाक्षरीम् । गोपनीयं च कवचं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ।।२।।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं कालिकायै स्वाहा च दशाक्षरीम् । दुर्वासा हि ददौ राज्ञे पुष्करे सूर्य - पर्वणि ।।३।।

दश - लक्ष - जपेनैव मन्त्र - सिद्धि कृता पुरा । पञ्च - लक्ष - जपेनैव पठन् कवचमुत्तमम् ॥४॥
बभूव सिद्ध - कवचोऽप्ययोध्यामाजगाम ह । कृत्स्नां हि पृथिवीं जिग्ये कवचस्य प्रसादतः ॥५॥

नारद उवाच

श्रुता दशाक्षरी विद्या त्रिषु लोकेषु दुर्लभा । अधुना श्रोतुमिच्छामि कवचं ब्रूहि मे प्रभो ॥६॥

नारायण उवाच

शृणु वक्ष्यामि विप्रेन्द्र ! कवचं परमाद्भुतम् । नारायणेन यद् - दत्तं कृपया शूलिने पुरा ॥७॥
त्रिपुरस्य वधे घोरे शिवस्य विजयाय च । तदैव शूलिना दत्तं पुरा दुर्वाससे मुनेः ॥८॥
दुर्वाससा च यद् - दत्तं सुचन्द्राय महात्मने । अति गुह्य - तरं तत्त्वं सर्व - मन्त्रौघ - विग्रहम् ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं कालिकायै स्वाहा मे पातु मस्तकम् । क्लीं कपालं सदा पातु ह्रीं ह्रीं ह्रीं मम लोचने ॥१०॥
ॐ ह्रीं त्रिलोचने स्वाहा नासिकां मे सदाऽवतु । क्लीं कालिके रक्ष रक्ष स्वाहा दन्तं सदाऽवतु ॥११॥
ह्रीं भद्र - कालिके स्वाहा पातु मेऽधर - युग्मकम् । ॐ ह्रीं ह्रीं क्लीं कालिकायै स्वाहा कण्ठं सदाऽवतु ॥१२॥
ॐ ह्रीं कालिकायै स्वाहा कर्ण - युग्मं सदाऽवतु । ॐ क्रीं क्रीं क्लीं काल्यै स्वाहा स्कन्धं पातु सदा मम ॥१३॥
ॐ क्रीं भद्रकाल्यै स्वाहा मम वक्षः सदाऽवतु । ॐ क्रीं कालिकायै स्वाहा मम नाभिं सदाऽवतु ॥१४॥
ॐ ह्रीं कालिकायै स्वाहा मम पृष्ठं सदाऽवतु । ॐ रक्तबीज - विनाशिन्यै स्वाहा हस्तौ सदाऽवतु ॥१५॥
ॐ ह्रीं क्लीं मुण्ड - मालिन्यै स्वाहा पादौ सदाऽवतु । ॐ ह्रीं चामुण्डायै स्वाहा सर्वाङ्गं मे सदाऽवतु ॥१६॥
प्राच्यं पातु महा - काली आग्नेय्यां रक्त - दन्तिका । दक्षिणे पातु चामुण्डा नैर्ऋत्यां पातु कालिका ॥१७॥

श्यामा च वरुणे पातु वायव्यां पातु चण्डिका । उत्तरे विकटास्या च ऐशान्यां साट्टहासिनी ॥१८॥
ऊर्ध्वं पातु लोल - जिह्वा मायाद्या पात्वधः सदा । जले स्थले चान्तरिक्षे पात विश्व - प्रसूः सदा ॥१९॥
एवं ते कथितं वत्स ! सर्वं - मन्त्रौघ - विग्रहम् । सर्वेषां कवचानां च सार - भूतं परात्परम् ॥२०॥
सप्त - द्वीपेश्वरो राजा सुचन्द्रोऽस्य प्रसादतः । कवचस्य प्रसादेन मान्धाता पृथिवी - पतिः ॥२१॥
प्रचेता लोमशश्चैव यतः सिद्धो बभूव ह । यतो हि योगिनां श्रेष्ठः सौभरिः पिप्पलायनः ॥२२॥
यदि स्यात् सिद्ध - कवचः सर्वं - सिद्धीश्वरो भवेत् । महा - दानानि सर्वाणि तपांसि च व्रतानि च ।
निश्चितं कवचस्यास्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥२३॥
इदं कवचमज्ञात्वा भजेत् कालीं जगत्प्रसूम् । शत - लक्ष - प्रजप्तोऽपि न मन्त्रः सिद्धि - दायकः ॥२४॥

श्रीब्रह्म-वैवर्ते मन्त्र - सहितं काली - कवचं सम्पूर्णम् । (गणपति - खण्ड ३७/१-२४)

लक्ष्मी - कवचम्

नारद उवाच

आविर्भूय हरिस्तस्मै किं स्तोत्रं कवचं ददौ ? महा-लक्ष्म्याश्च लक्ष्मीशस्तन्मे ब्रूहि तपोधन ॥१॥

नारायण उवाच

पुष्करे च तपस्तप्त्वा विरराम सुरेश्वरः । आविर्बभूव तत्रैव क्लिष्टं दृष्ट्वा हरिः स्वयम् ॥२॥
तमुवाच हृषीकेशो वरं वृणु यथेप्सितम् । स च वव्रे वरं लक्ष्मीशस्तस्मै ददौ मुदा ॥३॥

वरं दत्वा हृषीकेशः प्रवक्तुमुपचक्रमे । हितं सत्यं च सारं च परिणाम - सुखावहम् ॥४॥

श्री मधु-सूदन उवाच

गृहाण कवचं शक्र ! सर्वं - दुःख - विनाशनम् । परमैश्वर्यं - जनकं सर्वं - शत्रु - विमर्दनम् ॥५॥
ब्रह्मणे च पुरा दत्तं संसारे च जल - प्लुते । यद् धृत्वा जगतां श्रेष्ठः सर्वैश्वर्यं - युतो विधिः ॥६॥
बभूवुर्मनवः सर्वे सर्वैश्वर्यं - युता यतः । सर्वैश्वर्यं - प्रदस्यास्य कवचस्य ऋषिर्विधिः ॥७॥
पंक्तिश्छन्दश्च सा देवी स्वयं पद्मालया सुर ! सिद्धैश्वर्यं - जयेष्वेव विनियोगः प्रकीर्तितः ।
यद् धृत्वा कवचं लोकः सर्वत्र विजयी भवेत् ॥८॥
मस्तकं पातु मे पद्मा कण्ठं पातु हरि - प्रिया । नासिकां पातु मे लक्ष्मीः कमला पातु लोचनम् ॥९॥
केशान् केशव - कान्तश्च कपालं कमलालया । जगत्प्रसूर्गण्ड - युग्मं स्कन्धं सम्पत्प्रदा सदा ॥१०॥
ॐ श्रीं कमल - वासिन्यै स्वाहा पृष्ठं सदाऽवतु ।
ॐ श्रीं पद्मालयायै स्वाहा वक्षः सदाऽवतु । पातु श्रीर्मम कङ्कालं बाहु - युग्मं च ते नमः ॥११॥
ॐ ह्रीं श्रीं लक्ष्म्यै नमः पादौ पातु मे सततं चिरम् । ॐ ह्रीं श्रीं नमः पद्मायै स्वाहा पातु नितम्बकम् ॥१२॥
ॐ श्रीं महा-लक्ष्म्यै स्वाहा सर्वाङ्गं पातु मे सदा । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महालक्ष्म्यै स्वाहा मां पातु सर्वतः ॥१३॥
एवं ते कथितं वत्स ! सर्वं - सम्पत्करं परम् । सर्वैश्वर्यं - प्रदं नाम कवचं परमाद्भुतम् ॥१४॥
गुरुमभ्यर्च्यं विधि - वत् कवचं धारयेत्तु यः । कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ स सर्वं - विजयी भवेत् ॥१५॥
महा - लक्ष्मीर्गृहं तस्य न जहाति कदाचन । तस्य छायेव सततं सा च जन्मनि जन्मनि ॥१६॥

इदं कवचमज्ञात्वा भजेल्लक्ष्मीं सुमन्द - धी। शत - लक्ष - प्रजप्तोऽपि न मन्त्रः सिद्धि - दायकः ।।१७।।
श्रीब्रह्म - वैवर्ते इन्द्रं प्रति हरिणोपदिष्टं लक्ष्मी - कवचं सम्पूर्णम् ।

(गणपति - खण्ड २२/१-१७)

सरस्वती - कवचम्

कवचस्यास्य विप्रेन्द्र ! ऋषिरेव प्रजापतिः। स्वयं च बृहती छन्दो देवता शारदाम्बिका ।।१।।
सर्वं - तत्त्व - परिज्ञाने सर्वार्थं - साधनेषु च। कवितासु च सर्वासु विनियोगः प्रकीर्तितः ।।२।।
ॐ ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहा शिरो मे पातुः सर्वतः। श्रीं वाग्देवतायै स्वाहा भालं मे सर्वदाऽवतु ।।३।।
ॐ सरस्वत्यै स्वाहा च श्रोत्रं पातु निरन्तरम्। ॐ श्रीं ह्रीं भारत्यै स्वाहा नेत्र - युग्मं सदाऽवतु ।।४।।
ऐं ह्रीं वाग्वादिन्यै स्वाहा नासां मे सर्वतोऽवतु। ह्रीं विद्याधिष्ठातृ - देव्यै स्वाहा ओष्ठं सदाऽवतु ।।५।।
ॐ श्रीं ह्रीं ब्राह्म्यै स्वाहा च दन्त - पंक्तीः सदाऽवतु। ऐमित्येकाक्षरो मन्त्रो मम कण्ठं सदाऽवतु ।।६।।
ॐ श्रीं ह्रीं पातु मे ग्रीवां स्कन्धं मे श्री सदाऽवतु। श्रीं विद्याधिष्ठातृ - देव्यै स्वाहा वक्षः सदाऽवतु ।।७।।
ॐ ह्रीं विद्या - स्वरूपायै स्वाहा मे पातु नाभिकाम्। ॐ ह्रीं ह्रीं वाण्यै स्वाहा च मम पृष्ठं सदाऽवतु ।।८।।
ॐ सर्वं - वर्णात्मिकायै पाद - युग्मं सदाऽवतु। ॐ रागाधिष्ठातृ - देव्यै सर्वाङ्गं मे सदाऽवतु ।।९।।
ॐ सर्वं - कण्ठ - वासिन्यै स्वाहा प्राच्यां सदाऽवतु। ॐ ह्रीं जिह्वाग्र - वासिन्यै स्वाहाग्नि दिशि रक्षतु ।।१०।।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सरस्वत्यै बुध - जनन्यै स्वाहा। सततं मन्त्र - राजोऽयं दक्षिणे मां सदाऽवतु ।।११।।
ॐ ह्रीं श्रीं त्र्यक्षरो मन्त्रो नैर्ऋत्यां मे सदाऽवतु। कवि - जिह्वाग्र - वासिन्यै स्वाहा मां वरुणोऽवतु ।।१२।।

ॐ सदाम्बिकायै स्वाहा वायव्ये मां सदाऽवतु । ॐ गद्य - पद्य - वासिन्यै स्वाहा मामुत्तरेऽवतु ।।१३।।
ॐ सर्व - शास्त्र - वासिन्यै स्वाहैशान्यां सदाऽवतु । ॐ ह्रीं सर्व - पूजितायै स्वाहा चोर्ध्वं सदाऽवतु ।।१४।।
ॐ ह्रीं पुस्तक - वासिन्यै स्वाहा द्यौ मां सदाऽवतु । ॐ ग्रन्थ - बीज - रूपायै स्वाहा मां सर्वतोऽवतु ।।१५।।
एवं ते कथितं विप्र ! सर्व - मन्त्रौघ - विग्रहम् । इदं विश्व - जयं नाम कवचं ब्रह्म - रूपकम् ।।१६।।
पुरा श्रुतं धर्म - वक्त्रात् पर्वते गन्ध - मादने । तव स्नेहान्मयाख्यातं प्रवक्तव्यं न कस्यचित् ।।१७।।
गुरुमभ्यर्च्य विधि - वद् वस्त्रालंकार - चन्दनैः । प्रणम्य दण्ड - वद् भूमौ कवचं धारयेत् सुधीः ।।१८।।
पञ्च - लक्ष - जपेनैव सिद्धं तु कवचं भवेत् । यदि स्यात् सिद्ध - कवचो बृहस्पति - समो भवेत् । १९।।
महा - वाग्मी कवीन्द्रश्च त्रैलोक्य - विजयी भवेत् । शक्तोऽस्ति सर्वं जेतुं स कवचस्य प्रसादतः ।।२०।।
इदं ते काण्व - शास्त्रोक्तं कथितं कवचं मुने ! स्तोत्रं पूजा - विधानं च ध्यानं वै वन्दनं तथा ।।२१।।

श्रीब्रह्म - वैवर्ते सरस्वती - कवचं सम्पूर्णम् ।

(प्रकृति - खण्ड ४/७१-९१)

महा - षोढा - न्यासम् (उपाम्नायात्मक)

पूर्वाम्नायात्मक महा - षोढा-न्यास के नाम निम्नलिखित हैं—

परापरात्परा - न्यासो परात्परातीता तथा । चित्परा चित्परात्परा सोमे स्वाधिष्ठाने तथा ।
सा चित्परात्परातीता तथेयं भुवनेश्वरी ।

ऐं ह्रीं

पूर्वाम्नाय की अधिष्ठात्री 'भुवनेश्वरी' हैं । इसमें मन्त्र-पुटित मातृका, मातृका-पुटित मन्त्र क्रमशः वाक्, माया,

श्रीं क्लीं ह्रीं श्रीं श्रीं क्लीं

रमा, काम, माया-पुटित रमा, रमा-पुटित काम एवं मूल-मन्त्र आरोह, अवरोह-क्रम से न्यास करना चाहिये। विशेष गुरु-मुख से जान लेना चाहिये।

मणिपुर—दक्षिणाम्नायात्मक महा-षोढा न्यास के नाम निम्नलिखित हैं—

ग्रहाश्च राशि-नक्षत्रे योगः करण एव च। पंच - संवत्सराः काल्याः मनौ भौमे न्यसेत् तथा॥

ये छः दक्षिणाम्नाय के षोढा-न्यास हैं। अनाहत - पश्चिमाम्नाय महाषोढा - न्यास के नाम निम्न हैं—

घोराष्टकं त्रिखण्डा चैवाक्षरो द्वि - पंचकम्। दादि - षष्ठक - न्यासोऽपि षोढा - न्यासमुदाहृतम्॥
ग्रथि - न्यासं तथा घोरं द्वादशांग - षडंगकम्। मालिनीं शब्द - राशि च षड् - दूतं रत्न - पंचकम्॥
नवात्मा नव - घोराश्च षोढाश्चैव त्रिविद्यया। त्रिखण्डं मन्त्र - खण्डं तु मातृ - खण्डं तथैव च॥
रुद्र - खण्डमिति प्रोक्तमनाहते बुध - वासरे।

विशुद्ध—उत्तराम्नायात्मक महाषोढा - न्यास के नाम निम्नलिखित हैं—

उग्र - मातृ - क्रमः काली - कुल - पीठानि योगिनी। देवता - मन्त्र - रूपाणि न्यास्तेऽयं कालिका क्रमे॥

इन चार चक्रों अर्थात् चार आम्नायों के न्यास से सप्तशती सम्बन्धित है। छः न्यासों को महा - षोढा-न्यास कहते हैं। इनमें पूर्वाम्नायात्मक स्वाधिष्ठान-चक्राधिष्ठात्री भुवनेश्वरी के तीन न्यास और उत्तराम्नायात्मक गुह्यकाली के तीन न्यास मिलकर ईशानाम्नायात्मक महा - षोढा - न्यास हुआ। पूर्वाम्नायात्मक भुवनेश्वरी का अर्द्ध - महा - षोढा - न्यास अर्थात् तीन न्यास, दक्षिणाम्नायात्मक दक्षिण काली के तीन न्यास मिलकर आग्नेयाम्नायात्मक महालक्ष्मी का महा - षोढा - न्यास हुआ। उत्तराम्नायात्मक गुह्यकाली के शेष तीन न्यास एवं पश्चिमाम्नायात्मक कुब्जिका के तीन न्यास अर्थात् अर्द्ध - न्यास मिलकर वायव्याम्नायात्मक महा - सरस्वती का

महा - षोढा - न्यास हुआ। पश्चिमाम्नायात्मक कुब्जिका का शेष अर्द्ध - न्यास और दक्षिणाम्नायात्मक दक्षिण काली का शेष अर्द्ध - न्यास मिलकर नैऋत्याम्नायात्मिका चामुण्डा भद्रकाली का महा - षोढा - न्यास हुआ।

यह उत्तम चरित में ही निहित है। सप्तशती का महा - षोढा - न्यास पश्चिमाम्नायात्मिका त्रिशक्ति - चामुण्डा का महा-षोढा - न्यास है।

दो-दो आम्नायों के न्यास को मिलाकर न्यास करने से अधिक शक्तिशाली न्यास बन जाता है।

टिप्पणी—पुस्तक का आकार वृहद् होने के कारज यहाँ पर केवल दिग्दर्शन एवं प्रक्रिया बता दी गई है। शेष पूर्व-वत् गुरु-मुख से जानकर इन न्यासों को करने से सद्यः फल-दायिनी सप्तशती का पाठ होता है। यदि किसी को उपर्युक्त न्यास प्राप्त न हों, तो उनके स्थान में आम्नायात्मक बीजों का न्यास करने से उसकी पूर्ति हो जाती है।

राव - पुटित माया, माया - पुटित राव ईशान; माया - पुटित काली, काली - पुटित माया आग्नेय; राव-पुटित खेचरी, खेचरी - पुटित राव वायव्य; खेचरी - पुटित कालो, काली - पुटित खेचरी नैऋत्य—अनुलोम-विलोम करने से सात न्यास हो जाते हैं। ये सभी न्यास मातृका - न्यास - वत् होते हैं अर्थात् मातृका - स्थानों में न्यास किया जाता है।

नवार्ण विधिः (न्यास)

उपर्युक्त पाठ करके निम्नांकित रूप से नवार्ण मन्त्र के विनियोग, न्यास और ध्यान आदि करें—

श्रीगणपतिर्जयति

ॐ अस्य श्रीनवार्ण - मन्त्रस्य ब्रह्म - विष्णु - रुद्रा ऋषयः। गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि। श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी - महासरस्वत्यो देवताः। ऐं बीजम्। ह्रीं शक्तिः। क्लीं कीलकम्। श्रीमहाकाली - महालक्ष्मी - महा-

सरस्वती - प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

इसे पढ़कर जल गिरायें । तब नीचे लिखे न्यास - वाक्यों में से एक-एक का उच्चारण करके दाहिने हाथ की अँगुलियों से क्रमशः सिर, मुख, हृदय, गुदा, दोनों चरण और नाभि—इन अंगों का स्पर्श करें ।

ऋष्यादि - न्यास

ब्रह्म - विष्णु - रुद्र - ऋषिभ्यो नमः शिरसि । गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् छन्दोभ्यो नमः मुखे । महाकाली - महालक्ष्मी - महासरस्वती - देवताभ्यो नमः हृदि । ऐं बीजाय नमः गुह्ये । ह्रीं - शक्तये नमः पादयोः । क्लीं - कीलकाय नमः नाभौ ।

'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे'

—इस मूल - मन्त्र से हाथों की शुद्धि करके 'कर - न्यास' करें ।

कर - न्यास

'कर - न्यास' में हाथ की विभिन्न अँगुलियों, हथेलियों और हाथ के पृष्ठ - भाग में मन्त्रों का न्यास किया जाता है । इसी प्रकार 'अंग - न्यास' में हृदयादि अंगों में मन्त्रों की स्थापना होती है । मन्त्रों को चेतन और मूर्तिमान मानकर उन अंगों का नाम लेकर उन मन्त्र-मय देवताओं का ही स्पर्श और वन्दन किया जाता है । ऐसा करने से पाठ या जप करनेवाला स्वयं मन्त्र - मय होकर मन्त्र - देवताओं द्वारा सर्वथा सुरक्षित हो जाता है । उसके बाहर-भीतर की शुद्धि होती है, दिव्य बल प्राप्त होता है और साधना निर्विघ्नतापूर्वक पूर्ण तथा परम लाभदायक होती है ।

ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथों की तर्जनी अँगुलियों से दोनों अंगूठों का स्पर्श)

ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः (दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों तर्जनी अँगुलियों का स्पर्श)

ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः (अंगूठों से मध्यमा अंगुली का स्पर्श)

ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः (अनामिका अंगुली का स्पर्श)
ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः (कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श)
ॐ ऐंह्रींक्लीं चामुण्डायै विच्चे करतल - करपृष्ठाभ्यां नमः (हथेलियों से उनके पृष्ठ-भागों का परस्पर स्पर्श)

हृदयादि न्यास

इसमें दाहिने हाथ की पाँचों अँगुलियों से हृदय आदि अंगों का स्पर्श किया जाता है।

ॐ ऐं हृदयाय नमः (दाहिने हाथ की पाँचों अँगुलियों से हृदय का स्पर्श)
ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा (सिर का स्पर्श)
ॐ क्लीं शिखायै वषट् (शिखा का स्पर्श)
ॐ चामुण्डायै कवचाय हुम् (दाहिने हाथ की अँगुलियों से बायें हाथ का और बायें से दाहिने हाथ का स्पर्श)
ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट् (दाहिने हाथ की अँगुलियों के अग्रभाग से दोनों नेत्रों और ललाट मध्य का स्पर्श)
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्

(यह वाक्य पढ़कर दाहिने हाथ को सिर के ऊपर से बायीं ओर से पीछे की ओर ले जाकर दाहिनी ओर से आगे की ओर ले आये और तर्जनी तथा अँगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये।)

चण्डो पंचाक्षर न्यासः

ॐ ह्रीं हृदयाय नमः। ॐ चं शिरसे स्वाहा। ॐ डिं शिखायै वषट्। ॐ कां कवचाय हुम्। ॐ यैं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ह्रीं चण्डिकायै अस्त्राय फट्।

अथ चक्र-न्यासः

ॐ शम्भु तेजो ज्वल ज्वाला - मालिनि पावके ह्रां नन्दायै अंगुष्ठाभ्यां नमः (हृदयाय नमः)। ॐ शम्भु-तेजो ज्वल ज्वाला - मालिनि पावके ह्रीं रक्त - दन्तिकायै तर्जनीभ्यां नमः (शिरसे स्वाहा)। ॐ शम्भु - तेजो ज्वल ज्वाला - मालिनि पावके ह्रूं शाकम्भर्यै मध्यमाभ्यां नमः (शिखायै वषट्)। ॐ शम्भु - तेजो ज्वल ज्वाला-मालिनि पावके ह्रैं दुर्गायै अनामिकाभ्यां नमः (कवचाय हुम्)। ॐ शम्भु - तेजो ज्वल ज्वाला - मालिनि पावके ह्रौं भीमायै कनिष्ठिकाभ्यां नमः (नेत्र - त्रयाय वौषट्)। ॐ शम्भु - तेजो ज्वल ज्वाला - मालिनि पावके ह्रः भ्रामर्यै करतल - करपृष्ठाभ्यां नमः (अस्त्राय फट्)।

अथ माहात्म्य-न्यासः

ॐ मधु - कैटभ - क्षय - माहात्म्याय नमः ब्रह्मरन्ध्रे। ॐ महिषासुर - सैन्य - क्षय - माहात्म्याय नमः सीमान्ते। ॐ महिषासुर - क्षय - माहात्म्याय नमः भ्रू - मध्ये। ॐ शक्रादि - माहात्म्याय नमः नेत्रयोः। ॐ देव्या दूत - संवाद - माहात्म्याय नमः मुखे। ॐ धूम्रलोचन - क्षय - माहात्म्याय नमः कर्णयोः। ॐ चण्ड - मुण्ड - क्षय - माहात्म्याय नमः हृदि। ॐ रक्तबीज - क्षय - माहात्म्याय नमः नाभौ। ॐ निशुम्भ - क्षय - माहात्म्याय नमः लिंगे। ॐ शुम्भ - क्षय - माहात्म्याय नमः मूलाधारे। ॐ स्तुति - माहात्म्याय नमः जानौ। ॐ फल - माहात्म्याय नमः गुल्फयोः। ॐ वरदान - माहात्म्याय नमः पादयोः॥

अथ नवार्ण - विधिः

श्रीगणपतिर्जयति ।। ॐ अस्य श्रीनवार्ण - मन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु-रुद्रा ऋषयः । गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि । श्रीमहाकाली - महालक्ष्मी - महासरस्वत्यो देवताः । नन्दा - शाकम्भरी - भीमाः शक्तयः । रक्त - दन्तिका - दुर्गा-भ्रामर्यो बीजानि । अग्नि - वायु - सूर्यास्तत्वानि । ऋग्यजुः - साम - वेदाः ध्यानानि । श्रीमहाकाली - महालक्ष्मी-महासरस्वती - प्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि न्यासः ।।१।।

ॐ ब्रह्म - विष्णु - रुद्र - ऋषिभ्यो नमः शिरसि । ॐ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् - छन्दोभ्यो नमो मुखे । ॐ महा-काली - महालक्ष्मी - महासरस्वती - देवताभ्यो नमः हृदि । ॐ नन्दा - शाकम्भरी - भीमा - शक्तिभ्यो नमो दक्षिण - स्तने । ॐ रक्तदन्तिका - दुर्गा - भ्रामरी - बीजेभ्यो नमो वाम - स्तने । ॐ अग्नि - वायु - सूर्य - तत्वेभ्यो नमो नाभौ ।

अथवा तन्त्रान्तरे

ऐं बीजम्, ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकम् । ॐ ऐं बीजाय नमो गुह्ये । ॐ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः । ॐ क्लीं कीलकाय नमः नाभौ ।

मूल - मन्त्र से दोनों हाथों को शुद्ध कर नवार्ण के एकादश न्यास करें जिनमें से पहला 'मातृका - न्यास' है । इस प्रथम न्यास के करने से मनुष्य देवी - रूप को प्राप्त होता है ।

सारस्वत न्यासः ॥२॥

इस दूसरे 'सारस्वत न्यास' के करने से जड़ता (मूर्खता) नष्ट होती है—

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कनिष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अनामिकयोः ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मध्यमयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः तर्जन्योः ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अंगुष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कर - तलयोः ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कर - पृष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मणि - बन्धयोः ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कूर्परयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः हृदये ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिरसि । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिखायाम् ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कवचे । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः नेत्रयोः ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अस्त्राय फट् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः पूर्वे ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः आग्नेय्यां । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः याम्याम् ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः नैर्ऋत्ये । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः पश्चिमे ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः वायव्याम् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः उत्तरे ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः ऐशान्यां । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः ऊर्ध्वे ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अधः ॥

मातृका-गण न्यासः ॥३॥

इस तीसरे न्यास के करने से मनुष्य त्रिलोकी को जीतता है—

ॐ ह्लीं ब्राह्मी पूर्वतः मां पातु । ॐ ह्लीं माहेश्वरी आग्नेयां मां पातु ।
ॐ ह्लीं कौमारी दक्षिणे मां पातु । ॐ ह्लीं वैष्णवी नैर्ऋत्यां मां पातु ।
ॐ ह्लीं वाराही पश्चिमे मां पातु । ॐ ह्लीं नारसिंही वायव्यां मां पातु ।
ॐ ह्लीं इन्द्राणी उत्तरे मां पातु । ॐ ह्लीं चामुण्डा ईशान्यां मां पातु ।
ॐ ह्लीं व्योमेश्वरी ऊर्ध्वे मां पातु । ॐ ह्लीं सप्तेश्वरी पाताले मां पातु ॥

षड्-देवी न्यासः ॥४॥

इस चौथे न्यास के करने से मनुष्य वृद्धावस्था तथा मृत्यु को दूर करता है—

ॐ कमलांकुश - मण्डिता नन्दजा - पूर्वाङ्गं मे पातु । ॐ खड्ग - पात्र - करा रक्त - दन्तिका दक्षिणांगं मे पातु । ॐ पुष्प - पल्लव - संयुता शाकम्भरी पृष्ठांगं मे पातु । ॐ धनुर्बाण - करा दुर्गति - हारिणी दुर्गा वामांगं मे पातु । ॐ शिरः - पात्र - करा भीमा मस्तकाच्चरणान्तं मे पातु । ॐ चित्र - कान्ति - भृद् - भ्रामरी चरणाभ्यां शिरः-पर्यन्तं मे पातु ॥

ब्रह्म न्यासः ॥५॥

इस पाँचवें न्यास के करने से मनुष्य सब कामनाओं को प्राप्त करता है—

ॐ ब्रह्मा सनातनः पादादि - नाभि - पर्यन्तं मां पातु । ॐ जनार्दनः नाभेर्विशुद्धि - पर्यन्तं नित्यं मां पातु ।

ॐ रुद्रस्त्रिलोचनः विशुद्धेर्ब्रह्मरन्ध्रान्तं मां पातु । ॐ हंसः पाद - द्वयं मे पातु । ॐ वैनतेयः कर - द्वयं मे पातु । ॐ वृषभश्चक्षुषी मे पातु । ॐ गजाननः सर्वाङ्गानि मे पातु । ॐ सर्वानन्द - मयो हरिः परापरौ देह - भागौ मे पातु ॥

महा - लक्ष्म्यादि न्यासः ॥६॥

इस छठे न्यास को करने से मनुष्य सद्गति को प्राप्त होता है—

ॐ अष्टादश - भुजा - युक्त - महालक्ष्मीर्मध्ये मे पातु । ॐ अष्ट - भुजा - युक्त - महासरस्वती ऊर्ध्वं मे पातु । ॐ दश - भुजा - मण्डिता महाकाली अधः मे पातु । ॐ सिंहः हस्त-द्वयं मे पातु । ॐ परमहंसोऽक्षि - युग्मं मे पातु । ॐ दिव्य - महिषारूढो यमः पद - द्वयं मे पातु । ॐ महेशश्चण्डिका - सहितः सर्वाङ्गानि मे पातु ॥

बीज - मन्त्र न्यासः ॥७॥

इस सातवें न्यास के करने से मनुष्य का रोग - नाश होता है—

ॐ ऐं नमः शिखायाम् । ॐ ह्रीं नमो दक्ष - नेत्रे । ॐ क्लीं नमो वाम - नेत्रे । ॐ चां नमो दक्ष - कर्णे । ॐ मुं नमो वाम - कर्णे । ॐ डां नमो दक्ष - नासा-पुटे । ॐ यैं नमो वाम - नासा - पुटे । ॐ विं नमो मुखे । ॐ च्चें नमो गुदे ॥

विलोम - बीज न्यासः ॥८॥

इस आठवें न्यास के करने से सब दुःख नष्ट होते हैं—

ॐ च्चें नमो गुदे । ॐ विं नमो मुखे । ॐ यैं नमो वाम - नासा - पुटे । ॐ डां नमो दक्ष - नासा - पुटे ।

ॐ मुं नमो वाम - कर्णे । ॐ चां नमो दक्ष - कर्णे । ॐ क्लीं नमो वाम - नेत्रे । ॐ ह्रीं नमो दक्ष - नेत्रे । ॐ ऐं नमः शिखायाम् ।।

व्याप्ति न्यासः ।।६।।

इस नवम न्यास के करने से देवत्व प्राप्त होता है—

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः मस्तकाच्चरण - पर्यन्तं पूर्वाङ्गे । ॐ मूलं ८ नमः मस्तकाच्चरणावधि पृष्ठे । ॐ मूलं ८ नमः मस्तकाच्चरण-पर्यन्तं दक्षिणांगे । ॐ मूलं ८ नमः मस्तकाच्चरणावधि वामाङ्गे । ॐ मूलं ८ नमः मस्तकाद् पादान्तम् । ॐ मूलं ८ नमः पादादि शिरोऽन्तम् ।।

षडङ्ग न्यासः ।।१०।।

इस दसवें न्यास के करने से तीनों लोक वश में होते हैं—

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः हृदयाय नमः । ॐ मूलं ८ नमः शिरसे स्वाहा । ॐ मूलं ८ नमः शिखायै वषट् । ॐ मूलं ८ नमः कवचाय हुम् । ॐ मूलं ८ नमः नेत्र - त्रयाय वौषट् । ॐ मूलं ८ नमः अस्त्राय फट् ।।

।। अथ एकादश न्यासः ।।

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा । शंखिनी चापिनी वाण - भुशुण्डी-परिघायुधा ।।१।।
सौम्या सौम्य - तराशेष - सौम्येभ्यस्त्वति - सुन्दरी । परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ।।२।।
यच्च किंचित् क्वचिद् वस्तु सदसद् वाखिलात्मिके । तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ।।३।।

यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पातात्ति यो जगत् । सोऽपि निद्रा - वशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥४॥
विष्णुः शरीर - ग्रहणमहमीशान एव च । कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ॥५॥

आद्यं 'ऐं' बीजं कृष्ण - वर्णं ध्यात्वा सर्वाङ्गे विन्यसामि ।

पहले 'ऐं' बीज को श्याम रंग का सब शरीर में ध्यान करें । फिर—

ॐ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ! घण्टा - स्वनेन नः पाहि चाप - ज्या - निःस्वनेन च ॥१॥
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके ! रक्ष दक्षिणे । भ्रामणेनात्म - शूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥२॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते । यानि चात्यर्थं - घोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥३॥
खड्ग - शूल - गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ! कर - पल्लव - संगीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥४॥

द्वितीयं 'ह्रीं' बीजं सूर्यं - सदृशं ध्यात्वा सर्व (पृष्ठ) तो विन्यसामि ।

दूसरे 'ह्रीं' बीज को सूर्य - समान सब शरीर में ध्यान करें । तब—

ॐ सर्व - स्वरूपे सर्वेशे सर्व - शक्ति - समन्विते ! भयेभ्यस्त्राहि नो देवि ! दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते ॥१॥
एतत्ते वदनं सौम्यं लोचन - त्रय - भूषितम् । पातु नः सर्व - भूतेभ्यः कात्यायनि ! नमोऽस्तु ते ॥२॥
ज्वाला - करालमत्युग्रमशेषासुर - सूदनम् । त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि ! नमोऽस्तु ते ॥३॥
हिनस्ति दैत्य - तेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् । सा घण्टा पातु नो देवि ! पापेभ्यो नः सुतानिव ॥४॥
असुरासृग्वसा - पंक - चर्चितस्ते करोज्ज्वलः । शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके ! त्वां नता वयम् ॥५॥

तृतीयं 'क्लीं' बीजं स्फटिकाभं ध्यात्वा सर्वांगे विन्यसामि ।

अन्त में तीसरे 'क्लीं' बीज को चन्द्रमा-समान सब शरीर में ध्यान करें ।

।। मूल षडंग - न्यासः ।।

ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां (हृदयाय) नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः (शिरसे स्वाहा) । ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः (शिखायै वषट्) । ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः (कवचाय हुं) । ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः (नेत्राभ्यां वौषट्) । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतल - करपृष्ठाभ्यां नमः (अस्त्राय फट्) ।।

इस प्रकार न्यास करके मूल - मन्त्र से ८ बार व्यापक न्यास करें ।

।। अथाक्षर - न्यासः तन्त्रान्तरे ।।

ॐ ऐं नमः शिरसि । ॐ ऐं नमः नेत्रयोः । ॐ क्लीं नमः ललाटे । ॐ चां नमः भ्रुवोः । ॐ मु नमः कर्णयोः । ॐ डां नमः गण्डयोः । ॐ यैं नमः मुखे (वदने) । ॐ विं नमः दन्त - पंक्त्योः । ॐ च्चें नमः जिह्वायां । ॐ ऐं नमः स्कन्धयोः । ॐ ह्रीं नमः कण्ठे । ॐ क्लीं नमः भुजयोः । ॐ चां नमः हृदि । ॐ मुं नमः पार्श्वयोः । ॐ डां नमः पृष्ठे । ॐ यैं नमः नाभौ । ॐ विं नमः लिंगे । ॐ च्चें नमः कट्योः । मू० ॐ ९ नमः गुह्यं । मू० ॐ ९ नमः करयोः । मू० ॐ ९ नमः पादयोः । मू० ॐ ९ नमः सर्वांगे ।।

।। अथ दिङ् - न्यासः ।।

ॐ ऐं प्राच्यै नमः । ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः । ॐ ह्रीं दक्षिणायै नमः । ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः । ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः । ॐ क्लीं वायव्यै नमः । ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः । ॐ विच्चे ईशान्यै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः ।।

अब मानसोपचारों से पूजन करें ।

॥ अक्षर - न्यासः ॥

निम्नांकित वाक्यों को पढ़कर क्रमशः शिखा आदि का दाहिने हाथ की अंगुलियों से स्पर्श करें—

ॐ ऐं नमः शिखायाम् । ॐ ह्रीं नमः दक्षिण - नेत्रे । ॐ क्लीं नमः वाम-नेत्रे । ॐ चां नमः दक्षिण - कर्णे । ॐ मुं नमः वाम - कर्णे । ॐ डां नमः दक्षिण - नासा - पुटे । ॐ यैं नमः वाम - नासा - पुटे । ॐ विं नमः मुखे । ॐ च्चें नमः गुह्ये ।

इस प्रकार न्यास करके मूलमन्त्र से आठ बार व्यापक न्यास करें (दोनों हाथों द्वारा सिर से लेकर पैर तक के सब अंगों का स्पर्श करें। फिर प्रत्येक दिशा में चुटकी बजाते हुए न्यास करें)।

॥ दिङ्-न्यासः ॥

ॐ ऐं प्राच्यै नमः। ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः। ॐ ह्रीं दक्षिणायै नमः। ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः। ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः। ॐ क्लीं वायव्यै नमः। ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः। ॐ चामुण्डायै ऐशान्यै नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः।

अब मानसोपचारों से पूजन कर ध्यान करें। यथा—

॥ ध्यानम् ॥

खड्गं चक्र - गदेषु चाप - परिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः, शंखं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वांग - भूषावृताम् ।
नीलाश्म - द्युतिमास्य-पाद-दशकां सेवे महा - कालिकां, यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥१॥
अक्ष - स्रक्परशुं गदेषु - कुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां, दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुरा - भाजनम् ।
शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननाम्, सेवे सैरिभ - मर्दिनीमिह महा - लक्ष्मीं सरोज - स्थिताम् ॥२॥

घण्टा-शूल - हलानि शंख - मुसले चक्रं धनुः सायकं, हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त - विलसच्छीतांशु-तुल्य-प्रभाम् ।
गौरी - देह - समुद्भवां त्रि-जगतामाधार - भूतां महा - पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादि - दैत्यार्दिनीम् ॥३॥

फिर "ऐं ह्रीं अक्ष - मालिकायै नमः" इस मन्त्र से माला की पूजा करके प्रार्थना करे—

ॐ मां माले महा - माये सर्व - शक्ति - स्वरूपिणि ! चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥
ॐ अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे । जप - काले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥

ॐ अक्ष - मालाधिपतये सुसिद्धिं देहि देहि सर्व - मन्त्रार्थ - साधिनि ! साधय साधय सर्व - सिद्धिं परिकल्पय परिकल्पय मे स्वाहा ॥

इसके बाद "ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे" इस मन्त्र का जप १०८ बार करें और निम्न श्लोक को पढ़कर देवी के वाम हस्त में जप समर्पित करें—

गुह्यातिगुह्य - गोप्त्री त्वं, गृहाणास्मत् - कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि ! त्वत् - प्रसादान्महेश्वरि ॥

आम्नाय - मन्त्रोद्धारः

त्रयोदश - वर्णा कालीनाम् महा - काली - पदं वदेत् । ईशानाम्नाय - मन्त्रोद्धारः—ततः विच्चे - पदं वदेदीशानाम्नाय - नायिका ॥ रमाम्नाय - मन्त्रोद्धारः—त्रयोदश - वर्णा रमाश्च माया महा - लक्ष्मी - पदं वदेत् ॥ आग्नेयाम्नाय - मन्त्रोद्धारः—ततः विच्चे - पदं वदेदाग्नेयाम्नाय - नायिका ॥ वायव्याम्नाय - मन्त्रोद्धारः—त्रयोदश-वर्णा वाग्काम - सरस्वती - पदं वदेत् । ततः विच्चे-पदं वदेत् वायव्याम्नाय-नायिका ॥ नैऋत्याम्नाय-मन्त्रोद्धारः—

वाक् - माया - काम - बगला - रमा - माया - काम - विच्चे । नैॠत्याम्नाय - नायिका नवार्ण - विद्यां भजेत् ।

।। उपाम्नायेश्वरी पश्चिमाम्नायात्मिका त्रिशक्ति चामुण्डा मन्त्रोद्धारः ।।

अथातः संप्रवक्ष्यामि चामुण्डाया महा - मनुम् । नव - दुर्गात्मकं यस्य सेवनाद् भुक्ति - मुक्तये ।।
सुरथो यत् प्रसादेन राज्यं प्राप्याभवन्मनुः । संसार - बन्ध - निर्णाशि ज्ञानमाप्तं समाधिना ।।
मार्कण्डेय - पुराणोक्तं चरित - त्रितयं स्तवः । जपाद्यस्य फलं दद्यात् तं मनुं वच्मि साम्प्रतम् ।।
वाग्-लज्जा-काम-बीजानि चामुण्डायै पदं वदेत् । विच्चे नवार्ण - मन्त्रोऽयं शक्ति - मन्त्रोत्तमोत्तमः ।।
ब्रह्म - विष्णु - महेशास्तु मुनयोऽस्य प्रकीर्त्तिताः । गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च छन्दास्त्रयमुदीरितम् ।।
देवतास्य महाकाली - महालक्ष्मी - सरस्वती । नन्दा-शाकम्भरी - भीमा - शक्ति - त्रयमुदाहृतम् ।।
तिस्रोऽस्य शक्तयो दुर्गा - भ्रामरी - रक्तदन्तिका । अग्नि-वायु - भगास्तत्त्वं प्राग्-वदृष्यादिकं न्यसेत् ।।
ततः षडङ्गं कुर्वीत विभक्तैर्मूल - वर्णकैः । एकेनैकेन चैकेन चतुर्भिर्युग्मकेन च । नमस्तेनैव मन्त्रेण कुर्यादंगानि षट् - क्रमात् ।

नैॠत्याम्नाय-मन्त्रोद्धारः—वाक् - माया - काम - वगला - माया-काम - विच्चे । नैॠत्याम्नाय - नायिका नवार्ण - विधा भजेत् ।।

अथ सप्तशती - न्यासः

ॐ गणाधिपतये नमः ।। ॐ नमश्चण्डिकायै ।।

अथ प्रथम - मध्यमोत्तम-चरितानां ब्रह्म - विष्णु - रुद्रा ऋषयः । श्रीमहाकाली - महालक्ष्मी - महासरस्वत्यो देवताः । गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् छन्दांसि । नन्दा - शाकम्भरी - भीमाः शक्तयः । रक्त - दन्तिका - दुर्गा - भ्रामर्यो बीजानि । अग्नि - वायु - सूर्यास्तत्त्वानि । ऋग् - यजुस्साम - वेदा ध्यानानि । सकल - कामना - सिद्धये श्री महाकाली - महालक्ष्मी - महासरस्वती - देवता - प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

तत्रादौ न्यासः ।।

खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा । शंखिनी चापिनी बाण-भुशुण्डी-परिघायुधा—अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ! घण्टा - स्वनेन नः पाहि चाप-ज्या-निःस्वनेन च—तर्जनीभ्यां नमः ।
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे । भ्रामणेनात्म - शूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि—मध्यमाभ्यां नमः ।
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते । यानि चात्यन्त-घोराणि तै रक्षाऽस्माँस्तथा भुवम्—अनामिकाभ्यां नमः ।
खड्ग-शूल-गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ! कर-पल्लव-संगीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः—कनिष्ठाभ्यां नमः ।
सर्व-स्वरूपे सर्वेशे सर्व-शक्ति-समन्विते ! भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते—करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः ।

इसी प्रकार हृदयादि न्यास कर ध्यान करे । यथा—

विद्युद्दाम - सम - प्रभां मृगपति - स्कन्ध-स्थितां भीषणाम् । कन्याभिः करवाल-खेट - विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।।
हस्तैश्चक्र - गदासि - खेट - विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं । विभ्राणामनलात्मिकां शशि - धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ।।

श्री काली सूक्तम्

ॐ अस्य श्रीत्रिमूर्ति - महाकाली - सूक्तस्य सदाशिव ऋषिः । त्रिष्टुबनुष्टुब्जगत्यश्च्छन्दांसि । श्री महाकाली देवता । श्रीमहाकाली - प्रसाद - सिद्ध्यर्थे सप्तशती - पाठांगत्वेन जपे विनियोगः ।

ॐ ह्रां अं० । ॐ ह्रीं त० । ॐ ह्रूं म० । ॐ ह्रैं अ० । ॐ ह्रौं क० । ॐ ह्रः कर० । एवं हृदयादि न्यासः ।

॥ अथ ध्यानम् ॥

घोरां भीम - पराक्रमां दश - करैः खड्गेषु शूलं गदा, चक्रं पाश - भुशुण्डिके च परशुं चापं शिरो विभ्रतीं । वागीशां मधु-कैटभ - प्रमथिनीं ब्रह्मार्ति - हन्त्रीं परां, त्रिशल्लोचन - मण्डितां दश - मुखीं वन्दे महा-कालिकाम् ॥

राजोवाच

मुने ! कथय सर्वज्ञ ! भूयः किञ्चिदनुत्तमम् । तत्त्वमेतस्य सर्वस्य येन सिद्धिरवाप्यते ॥

ऋषिरुवाच

भूयः श्रृणु महाभाग ! देवी - माहात्म्यमुत्तमम् । विना येन स्तवश्चायं निर्जीवो नृप - नन्दन ॥
दृष्ट्वा शुम्भं विनिहतं दारुणं देव - कण्टकम् । आजग्मुः परमानन्दाद् विष्णु - ब्रह्म - महेश्वराः ॥
देव्याः स्तुतिं समाधातुं गतास्तल्लक्ष्य - संयताः । आज्ञामादाय देवेश्याः कर्तुं दर्शनमादरात् ॥
श्रद्धाञ्जलि - पुटाः साक्षात्तुष्टुवुः क्रमशः शिवाम् । लोकानां च हितार्थाय देवी - सूक्तानि पार्थिव ॥
ब्रह्म - सरस्वती - सूक्तं लक्ष्मी - सूक्तं जनार्दनः । सूक्तं तथा महा - काल्याः शंकरः स्वयमब्रवीत् ॥

महाकाली–सूक्तम् (पौराणिकम्)

शिव उवाच

सुन्दरी त्रिपुरा कामा कामिनी साधक - प्रिया । अमोघ - सत्य - वचना विमोही मोह - रूपिणी ॥१॥
अमृतेशी च कल्याणी कारुण्य - करुणा - कला । कलातीता कोमलान्तः - करणा विश्व - नायिका ॥२॥
विघ्न-कर्त्री विघ्न-हन्त्री विघ्नेशी विघ्न - साक्षिणी । कामाख्या काम - निलया कामेशी भग - मालिनी ॥३॥
त्रिखण्डा योनि - मुद्रा च धेनु - मुद्रा च खेचरी । पाशांकुशा द्राविणी च मोहिनी मद - भञ्जिनी ॥४॥
मद - प्रिया दुरांराध्या काली काल - विनाशिनी । काष्ठा कुलेशी कल्याणी स्वकल्पा कल्प - रूपिणी ॥५॥
कोमलांगी विश्व - माता युगेशी च युगंकरी । ब्रह्म - विष्णु - विमोहा च मोहिनी स्तम्भिनी परा ॥६॥
अमोघा सत्य - संकल्पा सत्यासत्य - विनाशिनी । सत्य - ग्रामा सत्य - वहा सत्य - वश्या जन - प्रिया ॥७॥
शरीर - वासिनी वामा निर्मदा वाम - दक्षिणा । कपाल - कुण्डला काली काल - भीति - विनाशिनी ॥८॥
गान - प्रिया च गीतांगी सुगीता धर्म - शालिनी । विश्व - योनिर्विश्व - माता विश्व - वन्द्या कृपा-मयी ॥९॥

महाकाली–सूक्तम् (तन्त्रोक्तम्)

शिव उवाच

शिवामनिन्द्यां विविध - प्रभावां कालीं कला - मालिनीं विश्व - वन्द्याम् ।
कपाल - खट्वांग - धरां नु - मुण्ड - मालां विभूषां मृग - चर्म - शोभाम् ॥१॥

सशुष्क - मांसां च शवासनस्थां विभीषणां भीषयन्तीं सुरारीन् ।
रक्त - प्रियां मांस - मदावि - पूर्णां कालीं शरण्यां शरणं ब्रजामि ॥२॥
सुधोष - बीजं च कपीश्वरं च चिन्ता - मणिः कुब्जिक - काम - रूपे ।
विद्यासु विद्यासु च काम - राजं कामः कला - मालिनि काम - राजम् ॥३॥

बह्नेर्वधूर्मन्त्र - राजोऽयमीशे ! विश्वं पुनातीश्वरि देवि ! वन्द्ये !
मन्त्रेण चान्येन सिध्यन्ति सर्वाः सुसिद्धयः सर्वं - जगन्निवासे ॥४॥
पञ्चार - युग्मं च त्रिकोण - युग्मं पुनश्च पंचार - युगेन बद्धम् ।
कला - प्रकोष्ठं किल भू - गृहं च यन्त्रेश्वरं ते च पदाब्ज - वासम् ॥५॥
सम्पूज्य यन्त्रं तव विश्व - नायिके ! निष्पापिनस्ते सहसा भवन्ति ।
ये साधकास्तव मार्गानुसारिणः कुलानुवृत्या परमाः पवित्राः ॥६॥
ते सिद्धिमृद्धिं च वशोऽनुगम्यां नृणां वशीकृत्य गृणन्ति भूपाः ।
समस्त-मन्त्रेण विधाय चांग - न्यासादिकं भक्ति - सुभाव - युक्ताः ॥७॥
ते किंकरी - कृत्य गृणंति देवानीत्से जगत्येव विभूति - युक्ते ।
वदामि चान्यं न श्रृणोमि चान्यं गृणामि नान्यं न विचिन्तयामि ॥८॥
स्मरामि नान्यं न भजामि चान्यं ध्यायामि नान्यं न वितर्कयामि ।
गायामि नान्यं तव मन्त्र - पादात्त्वां विश्व - योनिं शरणं प्रपद्ये ॥९॥

येषां न दैवं त्वमिहासि देवि ! नाराधयन्तीह च ते कुबुद्धयः ।
तेऽन्धंतमः प्रविशन्तीह लोके तेषां माभूद्दर्शनं महात्मनाम् ॥१०॥

ऋषिरुवाच

इदं वाक्यं समाकर्ण्य परामृत - संमितम् । प्रसन्नाऽभून्महाकाली ब्रियतामीप्सितो वरः ॥११॥
एवमुक्त्वा विशालाक्षी शंभोरानन्द - दायिनी । प्रसन्ना परमाह्लाद - संयुता शिव - भाषणात् ॥१२॥

श्रीदेव्युवाच

ब्रियतां मनसोऽभीष्टो वरो जगति दुर्लभः । दास्याम्यद्याभि - दातव्यं तव स्तुत्या वशी - कृता ॥१३॥

शिव उवाच

कुलाचारेण ते देवि ! मतिर्मेऽस्तु कदाचन । शिथिला देव - देवेशि ! सूक्तं च सकलं तव ॥१४॥

श्रीदेव्युवाच

एवमस्त्विति चोक्त्वाथ तिस्रो देव्यः सनातनाः । अन्तर्धिमाययुः परमा एकस्मिन्नास्थिताऽभवन् ॥१५॥
अथ तांस्तुवतो देवान् प्रोवाच वचनं मुदा । सन्तोषयन्ती च मुहुर्लोकानुग्रह - तत्परा ॥१६॥

ऋषिरु - ~~श्रीदेव्युवाच~~

शृणुध्वं प्रीति-संयुक्ता ब्रह्म-विष्णु - महेश्वराः । देवी - सूक्तं परं ध्यायन् भविष्यति वरार्थदम् ॥१७॥
देवी - सूक्तं विना देवा ये च सप्तशतीं नराः । श्रोष्यन्ति च पठिष्यन्ति तेषां शापः पदे पदे ॥१८॥
देवी - सूक्तं विना पाठो ह्यरण्ये रोदनं यथा । स्तोत्रोच्चारेण चानेन पूर्णं स्तोत्रमभूदिदम् ॥१९॥

उत्तराम्नायात्मिका
श्रीभगवती पञ्चवक्त्रा

देवा ऊचुः

मातः ! सप्तशती-स्तोत्र-फल-श्रुतिमिहोच्यताम् । यां समाकर्ण्यं जीवानां विश्वासो जायते भृशम् ॥२०॥

॥ श्रीमहाकाली - सूक्तं सम्पूर्णम् ॥

प्रथमः

॥ श्रीगुरवे नमः । ॐ नमश्चण्डिकायै ॥

विनियोगः

ॐ प्रथम चरितस्य ब्रह्मा ऋषिः । महाकाली देवता । गायत्री छन्दः । नन्दा शक्तिः । रक्त - दन्तिका बीजम् । अग्निस्तत्त्वम् । ऋग्वेदः स्वरूपम् । श्रीमहाकाली - प्रीत्यर्थे प्रथम - चरित - पाठे विनियोगः ।

ध्यानम्

१—पूर्वाम्नायात्मिका-एकादशाक्षरा-सिद्धिलक्ष्मी-ध्यानम्

खट्वाङ्गं कुश-पाश-शूल-वर-कृद्-भी - त्राण - पात्रं शिरः, कुम्भासि ज्वलितोद्धटैर्भुज - वरैराभासमानां शिवाम् ।
रुद्र-स्कन्ध - गतां शरच्छशि - निभां पञ्चाननां सुन्दरीं, पञ्चभ्यक्ष - विराजितां भगवतीं श्रीसिद्धि - लक्ष्मीं भजे ॥

(क) ॐ ब्राह्मी - वैष्णवी - भद्राण्यष्ट - भुजां च चतुर्मुखाम् । त्रिनेत्रां खड्गिनीं शूलां पद्म - चक्र - गदा - धराम् ।

केशं वराभयं चैव धारिणीं मोद - रूपिणीम्, पीताम्बर - धरां देवीं नानालंकार - भूषिताम् ॥
तेजः - पुञ्ज - धरां श्रेष्ठां ध्यायेद् बाल - कुमारिकाम् ॥

(ख) ब्राह्मीं च वैष्णवीं भद्रां षड् - भुजां च चतुर्मुखाम्, त्रिनेत्रां खड्ग - शूलाभिः पद्म - चक्र - गदा - धराम् ।
पीताम्बर - धरां देवीं नानालंकार - भूषिताम्, तेजः - पुञ्ज - धरां श्रेष्ठां ध्यायेद् बाल - कुमारिकाम् ॥
पूर्वाम्नाय - मयीं सिद्ध - लक्ष्मीमेकादशाक्षराम्, ईशानाम्नायगां चैव तथा पूर्वाम्नायगाम् ॥

(ग) पूर्वाम्नायात्मिका सप्ताक्षरा रक्तदन्तिका-ध्यानम्

शवासनां तप्त - सुवर्ण - कान्ति, दोर्भिः सुचर्मासि-वराभयाढ्याम् ।
चन्द्रार्द्ध-चूड़ां धृत - मुण्ड - मालां श्रीरक्त - दन्तां मनसा स्मरामि ॥

२—उत्तराम्नायात्मिका पंच-वक्त्रा-महाकाली-ध्यानम्—

पञ्च - वक्त्रां महा - रौद्रीं प्रति - वक्त्रं त्रिलोचनाम् । शक्ति - शूल - धनुर्वाण - खेट - खड्ग - वराभयाम् ॥१॥
दक्षादक्ष - भुजैर्देवीं विभ्राणां भोगि - भूषणाम् । अर्ध - चन्द्र - जटा - युक्तां जिह्वा - ललन - भीषणाम् ॥२॥
निर्मांसां मेदुरामस्थि - पञ्जरां मुण्ड - मालिनीम् । मत्त - व्यालोपवीतांगीं भूत - वेताल - वेष्टिताम् ॥३॥
मेदो - वसोपलिप्तांगीं महा - प्रेतासन - स्थिताम् । ध्यात्वैव सर्वदा साध्यं साधयेन्मनसि स्थिताम् ॥४॥
उत्तरां पञ्च - वक्त्रां च महा - कालीं समर्चयेत् । संयुज्येशानगां दिव्यां शिवां च पूजयेत् सदा ॥५॥

३—ईशानाम्नायात्मिका-नवाक्षरा-दशवक्त्रा-महाकाली-ध्यानम्—

खड्गं चक्र - गदेषु - चाप - परिघान् छूलं भुशुण्डीं शिरः, शंखं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वांग - भूषावृताम् ।

महाकाली

नीलाश्म-द्युतिमास्य - पाद-दशकां सेवे महा - कालिकाम्, यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधु-कैटभम् ॥१॥
ईशानाम्नायगां चैव दश - वक्त्रां नवाक्षराम्। महा - कालीं सदा ध्यायेद् भक्तिदां. ज्ञान - पोषिकाम् ॥२॥

ॐ नमश्चण्डिकायै

ॐ ऐं मार्कण्डेय उवाच

सावर्णिः सूर्य - तनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः। निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम ॥१॥
महा - मायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः। स बभूव महाभागः सावर्णिस्तनयो रवेः ॥२॥
स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्र - वंश - समुद्भवः। सुरथो नाम राजाऽभूत् समस्ते क्षिति - मण्डले ॥३॥
तस्य पालयतः सम्यक् प्रजाः पुत्रानिवौरसान्। बभूवुः शत्रवो भूपाः कोला - विध्वंसिनस्तदा ॥४॥
तस्य तैरभवद् युद्धमति - प्रबल - दण्डिनः। न्यूनैरपि च तैर्युद्धैः कोला - विध्वंसिभिर्जितः ॥५॥
ततः स्वपुरमायातो निज - देशाधिपोऽभवत्। आक्रान्तः स महा - भागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः ॥६॥
अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः। कोषो बलं चापहृतं तत्रापि स्वपुरे ततः ॥७॥
ततो मृगया - व्याजेन हृत - स्वाम्यः स भूपतिः। एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम् ॥८॥
स तत्राश्रममद्राक्षीद् द्विज - वर्यस्य मेधसः। प्रशान्तश्वापदाकीर्णं मुनि - शिष्योपशोभितम् ॥९॥
तस्थौ कंचित् स कालं च मुनिना तेन सत्कृतः। इतश्चेतश्च विचरँस्तस्मिन् मुनि - वराश्रमे ॥१०॥
सोऽचिन्तयत् तदा तत्र ममत्वाकृष्ट - चेतनः। मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं मया हीनं पुरं हि तत् ॥११॥
मद् - भृत्यैस्तैरसद् - वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा। न जाने स प्रधानो मे शूर - हस्ती सदा - मदः ॥१२॥

मम वैरि - वशं यातः कान् भोगानुपलप्स्यते । ये ममानुगता नित्यं प्रसाद - धन - भोजनैः ॥१३॥
अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्य - महीभृताम् । असम्यग् - व्यय - शीलैस्तैः कुर्वद्भिः सततं व्ययम् ॥१४॥
सञ्चितः सोऽति - दुःखेन क्षयं कोषो गमिष्यति । एतच्चान्यच्च सततं चिन्तयामास पार्थिवः ॥१५॥
एवं चिन्ता - परो राजा वृक्ष - मूलं स्थितो यदा । तदाऽऽजगाम वैश्यस्तु कश्चिदार्ति - परस्तदा ॥१६॥
तत्र विप्राश्रमाभ्याशे वैश्यमेकं ददर्श सः । स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो ! हेतुश्चागमनेऽत्र कः ॥१७॥
स शोक इव कस्मात् त्वं दुर्मना इव लक्ष्यसे ? अस्याकर्ण्य वचस्तस्य भूपतेः प्रणयोदितम्[1] ॥१८॥

वैश्य उवाच

मित्राहं वैश्य - जातीयः समाधिर्नाम विश्रुतः । पुत्र - दारैर्निरस्तश्च धन - लोभादसाधुभिः[2] ॥१९॥
विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम् । स्व - जनेन च संत्यक्तः प्राप्तोऽस्मि वनमाशु वै ॥२०॥
वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाप्त - बन्धुभिः । सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां कुशलं कुशलात्मिकाम् ॥२१॥
प्रवृत्तिं स्व - जनानां च दाराणां चात्र संस्थितः । किं न तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम् ॥२२॥
कथं ते किं नु सद् - वृत्ता दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः । कोऽसि त्वं भाग्यवान् भासि कथस्व प्रियाधुना ॥२३॥

राजोवाच

सुरथो नाम राजाहं दस्युभिः पीडितोऽभवम् । प्राप्तोऽस्मि गत - राज्योऽत्र मन्त्रिभिः परिवञ्चितः ॥२४॥
कुटुम्बं मे निरालम्बं मया हीनं सुदुःखितम् । भविष्यति च चिन्तार्तं व्याधि - शोकाय तापितम् ॥२५॥

यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः पुत्र - दारादिभिर्धनैः । तेषु किं भवतः स्नेहमनुबध्नाति मानसम् ॥२६॥

यैर्निरस्तोऽसि पुत्राद्यैरसद् - भूतैः सुवालिशैः । तान् दृष्ट्वा किं सुखं तेऽद्य भविष्यति महा - मते[३] ॥२७॥

वैश्य उवाच

एवमेतद् यथा प्राह भवानस्मद् - गतं वचः । मनो मे न स्थिरं राजनभवदद्य दुःखितम् ॥२८॥
चिन्तयात्र कुटुम्बस्य दुस्त्यजस्य दुरात्मभिः । किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मनः ॥२९॥
यैः सन्त्यज्य पितृ - स्नेहं धन - लुब्धैर्निराकृतः । पतिः स्वजन - हार्दं च हार्दितेष्वेव मे मनः ॥३०॥
किमेतन्नाभिजानामि जानन्नपि महा- मते ! यत्प्रेम - प्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु ॥३१॥
तेषां कृते मे निःश्वासो दौर्मनस्यं च जायते । करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम्[४] ॥३२॥

मार्कण्डेय उवाच

ततस्तौ सहितौ विप्र ! तं मुनिं समुपस्थितौ । समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिव - सत्तमः[५] ॥३३॥
कृत्वा तु तौ यथा - न्यायं यथार्हं तेन संविदम् । उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्य - पार्थिवौ ॥३४॥
गत्वा तं प्रणिपत्याह राजा ऋषिमनुत्तमम् । तमुवाच परं ज्ञानं शोक - मोह - विनाशनम्[६] ॥३५॥

राजोवाच

भगवँस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत् । दुःखाय यन्मे मनसः स्व-चित्तायत्ततां विना ॥३६॥
ममत्वं गत - राज्यस्य राज्याङ्गेष्वखिलेष्वपि । जानतोऽपि यथाज्ञस्य किमेतन्मुनि - सत्तम ॥३७॥
अयं च निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः । स्व - जनेन च संत्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति ॥३८॥
एवमेष तथाऽहं च द्वावप्यत्यन्त - दुःखितौ । दृष्ट - दोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्ट - मानसौ ॥३९॥

तत्-किमेतन्महाभाग ! यन्मोहो ज्ञानिनोरपि । ममास्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढ़ता ॥४०॥
मोहो नैवापसरति किं तत् - कारणमद्भुतम् । स्वामिँस्त्वमसि सर्वज्ञः सर्वं - संशय - नाश - कृत्[७] ॥४१॥

ऋषिरुवाच

ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषय - गोचरे । विषयश्च महाभाग ! याति चैवं पृथक् पृथक् ॥४२॥
दिवान्धाः प्राणिनः केचिद् रात्रावन्धास्तथापरे । केचिद् दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्य - दृष्टयः ॥४३॥
ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किन्तु ते नहि केवलम् । यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशु - पक्षि - मृगादयः ॥४४॥
ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां मृग - पक्षिणाम् । मनुष्याणां च यत्तेषां तुल्यमन्यत्तथोभयोः ॥४५॥
ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान् पतंगाञ्छाव - चञ्चुषु । कण - मोक्षादृतान् मोहात् पीड्यमानानपि क्षुधा ॥४६॥
मानुषा मनुज - व्याघ्र ! साभिलाषाः सुतान् प्रति । लोभात् प्रत्युपकाराय नन्वेतान् किं न पश्यसि ॥४७॥
तथापि ममतावर्ते मोह - गर्ते निपातिताः । महामाया - प्रभावेण संसार - स्थिति - कारिणा ॥४८॥
तन्नात्र विस्मयः कार्यो योग - निद्रा जगत्पतेः । महा - माया हरेश्चैषा तया संमोह्यते जगत् ॥४९॥
ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा । बलादाकृष्य मोहाय महा - माया प्रयच्छति ॥५०॥
तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम् । सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये ॥५१॥
सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतु - भूता सनातनी । संसार - बन्ध - हेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥५२॥

राजोवाच

भगवन् ! का हि सा देवी महा - मायेति यां भवान् । ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च किं द्विज ॥५३॥

यत् - प्रभावा च सा देवी यत् - स्वरूपा यदुद्भवा । तत्-सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्म - विदां वर ॥५४॥

ऋषिरुवाच

नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् । तथापि तत् - समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम ॥५५॥
देवानां कार्यं - सिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा । उत्पन्ना तु तदा लोके सा - नित्याप्यभिधीयते ॥५६॥
योग - निद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवी - कृते । आस्तीर्य शेषमभजत् कल्पान्ते भगवान् प्रभुः ॥५७॥
तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधु - कैटभौ । विष्णु - कर्ण - मलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ ॥५८॥
स नाभि - कमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः । दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तं च जनार्दनम् ॥५९॥
तुष्टाव योग - निद्रां तामेकाग्र - हृदय - स्थितः । विबोधनार्थाय हरेर्हरि - नेत्र - कृतालयाम् ॥६०॥
विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थिति - संहार - कारिणीम् । निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥६१॥

ब्रह्मोवाच

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कार - स्वरात्मिका । सुधा त्वमक्षरे ! नित्या त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥६२॥
अर्धं - मात्रा - स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः । त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि ! जननी परा ॥६३॥
त्वयैतद् धार्यते विश्वं त्वयैतत् सृज्यते जगत् । त्वयैतत् पाल्यते देवि ! त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥६४॥
विसृष्टौ सृष्टि - रूपा त्वं स्थिति - रूपा च पालने । तथा संहृति - रूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥६५॥
महा - विद्या महा-माया महा - मेधा महा - स्मृतिः । महा - मोहा च भवती महा - देवी महासुरी ॥६६॥
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुण - त्रय - विभाविनी । काल - रात्रिर्महा - रात्रिर्मोह - रात्रिश्च दारुणा ॥६७॥

त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोध - लक्षणा । लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च ॥६८॥
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा । शङ्खिनी चापिनी बाण - भुशुण्डी - परिघायुधा ॥६९॥
सौम्या सौम्य - तराशेष - सौम्येभ्यस्त्वति - सुन्दरी । परा - पराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥७०॥
यच्च किञ्चित् क्वचिद् - वस्तु सदसद् वाखिलात्मिके ! तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा किं त्वं स्तूयसे तदा ॥७१॥
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत् - पात्यत्ति यो जगत् । सोऽपि निद्रा - वशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥७२॥
विष्णुः शरीर - ग्रहणमहमीशान एव च । कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ॥७३॥
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि ! संस्तुता । मोहयेतौ दुराधर्षावसुरौ मधु - कैटभौ ॥७४॥
प्रबोधं च जगत्-स्वामी नीयतामच्युतो लघु । बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥७५॥

देवि ! त्वमस्य जगतः किल कारणं हि, ज्ञातं मया सकल - वेद - वचोभिरम्ब !
यद् - विष्णुरप्यखिल - लोक - विवेक - कर्ता, निद्रा - वशं च गमितः पुरुषोत्तमो यः ॥७६॥
को वेद ते जननि ! मोह - विलास - लीलां, मूढोऽस्म्यहं हरिरयं विवशश्च शेते ।
ईदृक् - तया सकल - भूत - मनो - निवासे, विद्वत्तमो विबुध - कोटिषु निर्गुणाय ॥७७॥
सांख्या वहन्ति पुरुषं प्रकृतिं च यां तां, चैतन्य - भाव - रहितां जगतश्च कर्त्रीम् ।
किं सादृशाऽसि कथमत्र जगन्निवासश्चैतन्यता - विरहितो विहितस्त्वयाद्य ॥७८॥
नाट्यं तनोषि सगुणा विविध - प्रकारं, नो वेत्ति कोऽपि तव कृत्य - विधान - योगम् ।
ध्यायन्ति यां मुनि - गणा नियतं त्रिकालं, सन्ध्या तु नाम परिकल्प्य गुणा भवानि ॥७९॥

बुद्धिर्हि बोध - करणा जगतां सदस्वं, श्रोश्चासि देवि ! सततं सुखदा सुराणाम् ।
कीर्तिस्तथा मति - धृती किल कान्तिरेव, श्रद्धा रतिश्च सकलेषु जनेषु मातः ॥८०॥
नातः परं किल वितर्क - शतैः प्रमाणं, प्राप्तं मया यदिह दुःखमतिर्गतेन ।
त्वं चात्र सर्व - जगतां जननी तु सत्यं, निद्रालुतां वितरता हरिणाऽत्र दृष्टम् ॥८१॥
त्वं देवि ! वेद - विदुषामपि दुर्विभाव्या, वेदोऽपि नूनमखिलार्थतया न वेद ।
यस्मात् त्वदुद्भवमसौ श्रुतिराप्नुवाना, प्रत्यक्षमेव सकलं तव कार्यमेतत् ॥८२॥
कस्ते चरितमखिलं भुवि वेद धीमान्नाहं हरिर्न च भवो न सुरास्तथान्ये ।
ज्ञातुं क्षमाश्च मुनयो न ममात्मजाश्च, दुर्वाच्य एव महिमा तव सर्व - लोके ॥८३॥
यज्ञेषु देवि ! यदि नाम न ते वदन्ति, स्वाहा च वेद - विदुषो हवने कृतेऽपि ।
न प्राप्नुवन्ति सततं मख - भाग - धेयं, देवास्त्वमेव विबुधेश्वरि ! वृत्ति - दासी ॥८४॥
त्राता वयं भगवति ! प्रथमं त्वया वै, देवारि - सम्भव - भयादधुना तथैव ।
भीतोऽस्मि देवि ! वरदे ! शरणं गतोऽस्मि, घोरं निरीक्ष्य मधुना सह कैटभं च ॥८५॥
नो वेत्ति विष्णुरधुना मम दुःखमेतज्जाने त्वयात्म - विवशी - कृत - देह - यष्टिः ।
मुञ्चादि - देवमथवा जहि दानवेन्द्रौ, यद् रोचते तव कुरुष्व महानुभावे ॥८६॥
जानन्ति ये न तव देवि ! परं प्रभावं, ध्यायन्ति ते हरि - हरावपि मन्द - चित्ताः ।
ज्ञातं ममाद्य जननि ! प्रकटं प्रमाणं, यद् विष्णुरप्यति - तरा विवशोऽथ शेते ॥८७॥

सिन्धूद्भवापि न हरिं प्रति - बोधितुं वै, शक्तायति तव वशानुगमाऽद्य शक्त्या ।
मन्ये त्वया भगवति ! प्रसभं रमाऽपि, प्रस्वापिता न बुबुधे विवशी - कृतेव ॥८८॥
धन्यास्त एव भुवि भक्ति - परा स्तवांघ्रौ, त्यक्त्वाऽन्यदेव भजनं त्वयि लीन - भावाः ।
कुर्वन्ति देवि ! भजनं सकलं निकामं, ज्ञात्वा समस्त - जननीं किल काम - धेनुम् ॥८९॥
धी - कान्ति - कीर्ति - शुभ - वृत्ति - गुणादयस्ते, विष्णोर्गुणास्तु परिहृत्य गताः क्व चाऽद्य ?
वन्दी - कृतो हरिरसौ ननु निद्रयाऽत्र, शक्त्या तवैव भगवत्यति - मानवत्या ॥९०॥
त्वं शक्तिरेव जगतामखिल - प्रभावा, त्वन्निर्मितं च सकलं खलु भाव - मात्रम् ।
त्वं क्रीडसे निज - विनिर्मित - मोह - जाले, नाट्ये यथा विहरते स्व - कृते च नृत्ये ॥९१॥
विष्णुस्त्वया प्रकटितः प्रथमं युगादौ, दत्ता च शक्तिरमला खलु पालनाय ।
त्रातं च सर्वमखिलं विवशोऽक्ततोऽद्य, यद् रोचते तव तथा प्रकरोषि नूनम् ॥९२॥
सृष्ट्वाऽत्र मां भगवति ! प्रविनाशितुं चेन्नेच्छाऽस्ति ते कुरु दयां परिहृत्य मौनम् ।
कस्मादिमौ प्रकटितौ किल काल - रूपौ, यद्वा भवानि ! हसितुं नु किमिच्छसे माम् ॥९३॥
ज्ञातं मया तव विचेष्टितमद्भुतं वै, कृत्वाऽखिलं जगदिदं रमसे स्वतन्त्रा ।
लीनं करोषि सकलं किल मां तथैव, हन्तुं स्वमिच्छसि भवानि ! किमत्र चित्रम् ॥९४॥
कामं कुरुष्व क्षयमद्य ममैव मातर्दुःखं न मे मरणजं जगदम्बिकेऽत्र ।
कर्ता त्वमेव विहितः प्रथमं स चायं, दैत्याहृतोऽथ मृत एव यशो गरिष्ठम् ॥९५॥

उत्तिष्ठ देवि ! कुरु रूपमिवाद्भुतं त्वां, मां वा त्विमौ जहि यथेच्छसि बाल - लीले ।
नो चेत् प्रबोधय हरिं निहनेदिमौ यस्त्वत्-साध्यमेतदखिलं किल कार्य - जातम् ॥९६॥

ऋषिरुवाच

एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेधसा । विष्णोः प्रबोधनार्थाय निहन्तुं मधु - कैटभौ[९] ॥९७॥
नेत्रास्य - नासिका - बाहु - हृदयेभ्यस्तथोरसः । निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्त - जन्मनः[१०] ॥९८॥
उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो जनार्दनः । एकार्णवेऽहि - शयनात् ततः स ददृशे च तौ ॥९९॥
मधु - कैटभौ दुरात्मानावति - वीर्य - पराक्रमौ । क्रोध - रक्तेक्षणावत्तुं ब्रह्माणं जनितोद्यमौ ॥१००॥
समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान् हरिः । पञ्च - वर्ष - सहस्राणि बाहु - प्रहरणो विभुः ॥१०१॥
तावप्यति-बलोन्मत्तौ महा-माया-विमोहितौ । उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तौ व्रियतामेव केशव[११] ॥१०२॥
प्रार्थयस्व हृषीकेश ! मनोऽभिलषितं वरम् । तयोस्तद्-वचनं श्रुत्वा प्रत्युवाच जनार्दनः[१२] ॥१०३॥

विष्णुरुवाच

भवेतामद्य मे तुष्टौ मम हन्यावुभावपि । किमन्येन वरेणात्र एतावद्धि वृतं मम ॥१०४॥

ऋषिरुवाच

वञ्चिताभ्यां ततः तदा सर्वमापो - मयं जगत् । विलोक्य ताभ्यां गदितो भगवान् कमलेक्षणः[१३] ॥१०५॥
आवां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता । तथा तूक्त्वा भगवता शङ्ख-चक्र-गदा-भृता[१४] ॥१०६॥
कृत्वा चक्रेण वैच्छिन्ने जघने शिरसी तयोः । गत - प्राणौ तदा जातौ दानवौ मधु-कैटभौ ॥१०७॥

एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम् । प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः श्रृणु वदामि ते१५ ॥१०८॥
॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी - माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) जगदम्बार्पणमस्तु ॥

उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ें।

वैदिक आहुति

एक उल्टे समूचे पान पर शाकल्य घी में भिगोकर रखें। शाकल्य में १ कमलगट्टा, १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल और शहद—ये सब चीजें रहें। स्रुचि में रखकर खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽम्बिकेऽम्बालिके नमानयति कश्चनः ॥ ससस्त्श्वकः सुभद्रिकां कांपील - वासिनीं ॐ स्वाहा ॥ २२ । २३ ।। (ससस्न्यश्वकः)

बाद में स्रुवे से पाँच बार घी छोड़ते हुये निम्न मन्त्र को बोलें—

ॐ घृतं घृत - पावानः पिबतव्वसां वसा पावानः । पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आदिशोव्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

यजु० सं० अ० ६।१९ मन्त्र ॥

तान्त्रिक आहुति

ॐ साङ्गायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै ऐं - बीजाधिष्ठात्र्यै महा - कालिकायै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः ।

उक्त वाक्य कहकर आहुति छोड़ें । आहुति की सामग्री ऊपर लिखी है।

श्रीमहालक्ष्मी-सूक्तं प्रारम्भम् (पुराणोक्तम्)

अस्य श्रीत्रिमूर्ति-महालक्ष्मी-सूक्तस्य विष्णु ऋषिः। त्रिष्टुबनुष्टुप् जगत्यश्छन्दांसि। श्रीमहालक्ष्मी देवता। श्रीमहालक्ष्मी-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे सप्तशती-पाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः।

ॐ श्रां अंगु०। ॐ श्रीं तं०। ॐ श्रूं म०। ॐ श्रैं अ०। ॐ श्रौं क०। ॐ श्रः कर०। एवं हृदयादि।

ध्यानम्

नित्यां स्वर्ण - सरोज - सुप्रकटितां बालार्क-कोटि - प्रभाम्, श्रोतस्य स्तन-मण्डलै रूप-मयां मध्ये विचित्र-प्रभाम्।
सत्साला कमलेषु - खड्ग - कुलिशं कौमोदकीं चक्रकं, शूलं वै पर-शुक्ति - शंखममलं घण्टां च पाशं क्रमात्॥
शक्ति दण्डक-चर्म-चाप-दशकं दोर्भिर्वहन्तीं मुदा, सान्द्रानन्द-मयीं कमण्डलु-धरां नीलोरु-जंघा-कुचाम्।
चित्राङ्गां खल - मर्दिनीं गुण-मयीं साम्राज्य-लक्ष्मी-प्रदां, माया-बीज-मयीं परावर-महालक्ष्मीं भजेद् राजसीम्॥

विष्णुरुवाच

यामामन्ति मुनयः प्रकृतिं पुराणीं विद्येति यां श्रुति-रहस्य-विदो गृणन्ति तां धर्म-पल्लवित-शंकर-रूप-मुद्रां देवीमनन्य-शरणः शरणं प्रपद्ये ॥१॥ अम्ब-स्तवेषु तव तावक-कर्तृकाणि कुण्ठी-भवन्ति वचसामपि कुण्ठनानि, डिम्भस्य मे स्तुतिरिमा घन-पुञ्ज-रूपा वात्सल्य-निघ्न-हृदयां भवतीं धुनोति ॥२॥

ध्यानेति विन्दुरिति वादयतीन्दु - लेखा, रूपेति वाग्भव - तनूरिति मारिकेति।
निष्पन्द - मानस - सुधा - स्वरूपावबोधा, विद्योतसे मनसि भाग्यवतां जनानाम् ॥३॥
आविर्भवत् पुलक - संहतिभिः शरीरैर्निष्यन्दमान - सलिलैर्नयनैश्च नित्यम्।

वाग्भिश्च गद्गद् - पदाभिरुपासते ये, पादौ तवाम्ब ! भवनेषु त एव धन्याः ।।४।।
वक्तुं यदद्य नुतिभिर्नयते भवत्या, स्तुत्यं नमो यदपि देवि ! शिरः करोति ।
चेतश्च यस्त्वयि परायणमन्तराणि, कस्यापि कैरपि भवन्ति तपो - विशेषैः ।।५।।
मूलाल - वाल - कुहरादुहिता भवानी, निर्भि - षट्सु चरसि जातु तडिल्लतेव ।
भूयोऽपि तत्र विशसि ध्रुव - मण्डलेन्दु—निष्यन्दमान - परमामृत - तोय - रूपा ।।६।।
दग्धं यदा मदनमेकमनेक - धातोर्मुग्धः कटाक्ष - विधिनां कुरया चकार ।
दत्ते तदा प्रभृति देवि ! ललाट - नेत्रं, सत्यं ह्रियैव मुकुली - कृतमिन्दु - मौलिः ।।७।।
अज्ञान - सम्भव - मना कलितान्वयं हि, भिक्षुः कपालिनमदादसमाऽद्वितीयम् ।
पूर्वं कर - ग्रहण - मंगलतो भवत्याः, शंभुं क एव बुबुधे गिरि - राज - कन्ये ।।८।।
चर्माम्बरं च शव - भस्म - विलेपनं च, भिक्षाटनं च नटनं च परेत - भूमौ ।
वेताल - संहति - परिग्रहता च शम्भोः शोभां, विभर्ति गिरिजे ! तव साहचर्यात् ।।९।।

महालक्ष्मी-सूक्तम् (तन्त्रोक्तम्)

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाच मे क्रत, अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषा लक्ष्मीर्निहताधि-वाचि
गन्ध - द्वारां दुराधर्षां नित्य - पुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्व - भूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।।

हरिरुवाच

परावरेशां जगदादि-भूतां परां वरेण्यां वरदां वरिष्ठाम् । वरेश्वरी-बहु-वाग्भिः प्रगीतां त्वां विश्व-योनिं शरणं प्रपद्ये ।।१।।

श्रियं समस्तैरधिवास-भूतां महा-सुलक्ष्मीं धरणी-धरां च। अनादिमार्दि परमार्थ-रूपां त्वां विश्व-योनिं शरणं प्रपद्ये ॥२॥ एकामनेकां विविधांशु-कार्यां सुकारिणीं सदसद्रपिणीं च। रूपारूपां च शिवा शिव-प्रदां त्वां विश्व-योनिं शरणंप्रपद्ये ॥३॥ कामाभिधां श्रीमधिवास-भूतां ह्रीं-रूपिणीं बीज-कपि-प्रभावाम्। कणष्टि-बीजां परमार्थ-संज्ञां त्वां विश्व-योनिं शरणं प्रपद्ये ॥४॥ वैश्वानर-स्त्री-सहितेन देवीं श्रीमन्त्र-राजेन विराजमानाम्। सर्वार्थ-दात्रीं परमां पवित्रां त्वां विश्व-योनिं शरणं प्रपद्ये ॥५॥ त्रिकोण-पंचार-युग-प्रभावां षट्-कोण-मिश्रां द्विदशार-युक्ताम्। अष्टार-चक्रादि-निवास-भूतां त्वां विश्व-योनिं शरणं प्रपद्ये ॥६॥ पुनर्दशार-द्वितयेन युक्तां पंचार-कोणांकित-भूगृहां च। यन्त्राधि-वासामपि यन्त्र-रूपां त्वां विश्व-योनिं शरणं प्रपद्ये ॥७॥ संभावितां सर्वदा न्यास-गम्यां सर्व-स्वरूपामपि सर्व-सेव्याम्। सर्वाक्षर-न्यास-वशां वरिष्ठां त्वां विश्व-योनिं शरणं प्रपद्ये ॥८॥ सृष्टि-स्थिति-प्रलयाख्यैश्च बीजैर्न्यासं विधाय प्रजपंति ये त्वाम्। त एव राजेन्द्र-निघृष्ट-पादा विद्या-धरेन्द्रस्य यशो लभन्ते ॥९॥ प्रपूज्य यन्त्रं विधिना महेशि! साभ्यास-पूजाः परमा सुभाग्याः। जपन्ति ये त्वां विविधार्थ-दात्रीं त एव धन्या कुल-मार्ग-निष्ठाः ॥१०॥ जानन्ति के पशवस्ते कुरूपा ब्रह्मादि-गीते महिमा महेशि! केचिन् महान्तो निज-धर्म-लाभाज्जानन्ति ते देवि! परां सुधां त्वां ॥११॥ विधाय कुण्डं विधिना स्थण्डिलं वा सौगन्धि-होमं सफलं प्रकुर्वते। त्वत्तोषणाज्जायते भाग्य-मात्रं तेषां सुदेवैरपि योग-गम्यम् ॥१२॥ पुनः स्तुवन्ति प्रयताश्च मातः स्तोत्रैरुदारैः कुल-योग-युक्ताः। त एव धन्याः परमार्थ-भाजो भोगश्च मोक्षश्च किमस्ति तेषां ॥१३॥

ऋषिरुवाच

एवं स्तुत्यावसाने तु महा-लक्ष्मीं ददर्श सः। चतुर्भुजां त्रिनयनां महिषासुर-घातिनीम् ॥१४॥

अस्य श्रीमन्महालक्ष्मीः प्रसन्ना स्तुतिगौरवात् । उवाच स्मित - शोभाढ्या नारायणमजं शुभम् ॥१५॥

देव्युवाच

वरं वरय देवेश ! नारायण ! सनातन ! दास्याम्यद्यापि दातव्यं तव स्तुत्या वशी - कृता ॥१६॥

नारायण उवाच

मातः ! परम - कारुण्ये ! महा - लक्ष्मि ! वर - प्रदे ! कुलाचारे मतिर्मेऽस्तु दृढा त्वयि तथा शिवे ॥१७॥
तव सूक्तं च सफलं तव सुप्रीति - कारणम् ॥

देव्युवाच

वरमेतन्महाभाग ! नारायण ! सनातन ! सूक्तमेतद्विना यस्तु पठेत् सप्तशतीं नरः ॥१८॥
स याति च महा - घोरं नरकं दारुणं किल । लिप्यते परमं शाप्यं मम कोप - विघूर्णितः ॥१९॥
लक्ष्मी - स्तोत्रं विना सप्तशती - स्तोत्रं निषिध्यते ॥२०॥

ऋषिरुवाच

एवमुक्त्वा वचो देवी तूष्णीं भगवती नृप ! उक्त्वा त्वन्तर्धिमापेदे महा - लक्ष्मीर्वर - प्रदा ।
नारायणं जगन्नाथं सा बोध्य बहुधा नृप ॥२१॥

॥ श्रीमहालक्ष्मी - सूक्तम् सम्पूर्णम् ॥

★★

द्वितीयः

मध्यम चरित

विनियोगः

ॐ मध्यम - चरितस्य विष्णुर्ऋषिः । महालक्ष्मीर्देवता । उष्णिक् छन्दः । शाकम्भरी शक्तिः । दुर्गा बीजं । वायुस्तत्त्वं । यजुर्वेदः स्वरूपं - श्रीमहालक्ष्मी - प्रीत्यर्थं मध्यम - चरित - जपे विनियोगः ।

ध्यानम्

(४) दक्षिणाम्नायात्मिका चतुस्त्रिदशाक्षरा बगलामुखी ध्यानम्—

मध्ये सुधाब्धि - मणि - मण्डप - रत्न - वेदी—सिंहासनोपरि - गतां परि - पीत - वर्णाम् ।
पीताम्बरां कनक - भूषण - माल्य - शोभां देवीं भजामि धृत - मुद्गर - वैरि - जिह्वाम् ।।
जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम् ।
पदाभिघातेन च दक्षिणेन, पीताम्बराढ्यां द्वि - भुजां नमामि ।।
दक्षिणाम्नाय - रूपां च चतुस्त्रिदशाक्षराम्, बगलां पूजयेद् दिव्यामाग्नेयाम्नायगां शिवाम् ।।

(५) पूर्वाम्नायात्मिका सप्तविंशत्यक्षरा कमला महालक्ष्मी ध्यानम्—

सिन्दूरारुण - कान्तिमब्ज - वसतीं सौन्दर्य - वारां निधिं कोटिराङ्गद - हार-कुण्डल - कटी - सूत्रादिभिर्भूषिताम् ।

हस्ताब्जैर्वसु - पात्रमब्ज - युगलादर्शौ वहन्तो परामावीतां परिचारिकाभिरनिशं ध्यायेत् प्रिय शार्गिणः ॥
सिन्दूराभां च पद्मस्थां पद्म - पत्रं च दर्पणम् । अर्घ - पात्रं च दधतीं सद्धार - मुकुटान्विताम् ॥
नाना - दासी - परिवृतां काञ्ची - कुण्डल - मण्डिताम् । लावण्य - भूमिकां वन्दे सुन्दराङ्गद - बाहुकाम् ॥
पूर्वाम्नायात्मिकां चैव आग्नेयाम्नायगां तथा । कमलां च महा - लक्ष्मीं सप्त - विंशति - वर्णिकाम् ॥

(६) आग्नेयाम्नायात्मिका नवाक्षरा महालक्ष्मी ध्यानम्—

अक्षस्रक् - परशु - गदेषु - कुलिशं पद्मं धनुः - कुण्डिकाम्, शङ्खं चक्रमसिं च चर्म-जलजं घण्टा - सुरा - भाजनम् ॥
शूलं पाश - सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननम्, सेवे सैरिभ - मर्दिनीमिह महा - लक्ष्मीं सरोज - स्थिताम् ॥
आग्नेयात्मिकां चैव महालक्ष्मीं नवाक्षराम् ॥

षोडश-भुजा ध्यानम् (कालिका-पुराणे)

योग - निद्रा महा - माया जगद्धात्री जगन्मयी । भुजैः षोडशभिर्युक्ता भद्रकाली तु विश्रुता ॥
क्षीरोदस्योत्तरे तीरे विभ्रती विपुलां तनुम् । अतसी-पुष्प - वर्णाभा ज्वलत् - काञ्चन-कुण्डला ॥
जटा-जूटमखण्डेन्दु - मुकुट - त्रय - भूषिता । नाग - हारेण सहिता स्वर्ण - हार - विभूषिता ॥
शूलं खड्गं च शङ्खं च चक्रं वाणं तथैव च । शक्ति वज्रं च दण्डं च नित्यं दक्षिण - बाहुभिः ॥
बिभ्रती सततं देवी विकाशि - नयनोज्ज्वला । खेटकं चर्म चापं च पाशं चांकुशमेव च ॥
घण्टां परशुं मुशलं बिभ्रती वाम - पाणिभिः । सिंहस्था नयनै रक्त - वर्णैस्त्रिभिरभिज्ज्वला ॥
शूलेन महिषं भित्वा तिष्ठन्ती परमेश्वरी । वाम - पादेन चाक्रम्य तत्र देवी जगन्मयी ॥

महालक्ष्मी
सर्वाधिकार सुरक्षित
संदीप तमरहाई जबलपुर

अष्टादश - भुजा ध्यानम् (तन्त्रान्तरे)

उग्र - चण्डां महा-देवीं ध्यायेद् भगवतीं शिवाम् । तप्त - चामी-कर - वर्णां नाना-पुष्पोप-शोभिताम् ॥
दिव्य - वस्त्र - परिधानां महिषासन - गामिनीम् । किरीट - कुण्डलाकारैः केयूरैर्मणि - नूपुरैः ॥
रत्न - माला-विचित्रैश्च हार - मालोप-शोभिताम् । अष्टादश - भुजाक्रान्तां पीन - वक्षो - स्तनोरुहाम् ॥
सर्वालंकार - संयुक्तां तडित् - कोटि - सम-प्रभाम् । खड्गं शरस्तथा चक्रं वज्रांकुश-धरां शुभाम् ॥
वरदां डमरु - हस्तां शूल - पात्र - सुशोभिताम् । पाशं तर्जनी - हस्तां च खट्वाङ्गं केश-पाशकम् ॥
बिन्दु - मुद्रा तथा सिद्धिः सिंहासनोपरि-स्थिताम् । अधः - स्थित्वा शिरश्छिन्नं महिषं च महाऽसुरम् ॥
तद् - ग्रीवा - निर्गतं दैत्यं महा - बल - पराक्रमम् । भेदयन्तीं त्रिशूलेन विधृतास्यां शिरोरुहाम् ॥
एवं ध्यायेन्महा - देवीं सर्वं - काम - फल-प्रदाम् । रुद्र - चण्डा प्रचण्डा च चण्डोग्रा चण्ड - नायिका ॥
चण्डा चण्डवती चैव चण्डरूपाऽति - चण्डिका । रोचना अरुणा कृष्णा नील - शुक्ला च धूम्रिका ॥
पीता च पाण्डुरा ज्ञेया आरिधस्था हरि-स्थिता । स्व - परीवार - संयुक्तामायान्तीमिह मण्डले ॥
दक्षिणैस्तु करैरेतान् यथा - शोभं हि विभ्रतीम् । फेटकं च धनुश्चैव गदा - घंटा - सुशोभिताम् ॥

ॐ ह्रीं ऋषिरुवाच

देवासुरमभूद् युद्धं पूर्णमब्द - शतं पुरा । महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे ॥१॥
तत्रासुरैर्महा - वीर्यैर्देव - सैन्यं पराजितम् । जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः ॥२॥
ततः पराजिता देवा पद्म - योनिं प्रजापतिम् । पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेश - गरुड़ध्वजौ१६ ॥३॥

देवा ऊचुः

यथा - वृत्तं तयोस्तद्वन्महिषासुर - चेष्टितम् । त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभि - भव - विस्तरम् ॥४॥
सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च । अन्येषां चाधिकारान् स स्वयमेवाधितिष्ठति ॥५॥
स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देव - गणा भुवि । विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना ॥६॥
एतद् वः कथितं सर्वममरारि - विचेष्टितम् । शरणं वः प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम् ॥७॥

ऋषिरुवाच

श्रुत्वा तद् - वचनं विष्णुस्तानुवाच हसन्निव । युद्धं कृतं पुराऽस्माभिस्तथापि न मृतो ह्यसौ ॥८॥

विष्णुरुवाच

अद्य सर्व - सुराणां वै तेजोभी - रूप - सम्पदा । उत्पन्ना चेद् वरारोहा सा हन्यात्तं रणे बलात् ॥९॥
हयारिं वर - दृप्तं च माया - गत - विशारदम् । हन्तुं योग्या भवेन्नारी शक्यं तैर्निर्मिता हि नः ॥१०॥
प्रार्थयन्तु च तेजोंऽशान् स्त्रियोऽस्माकं तथा पुनः । उत्पन्नैस्तैश्च तेजोंऽशैस्तेजो - राशिर्भवेद् यथा ॥११॥
आयुधानि वयं दद्मः सर्वे रुद्र - पुरोगमाः । तस्यै सर्वाणि दिव्यानि त्रिशूलादीनि यानि च ॥१२॥
सर्वायुध - धरा नारी सर्व-तेजः-समन्विता । हनिष्यति दुरात्मानं तं पापं मद - गर्वितम् ॥१३॥

ऋषिरुवाच

इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः । चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटी कुटिलाननौ ॥१४॥
ततोऽति - कोप - पूर्णस्य चक्रिणो वदनात् ततः । निश्चक्राम महत् - तेजो ब्रह्मणः शङ्करस्य च ॥१५॥

अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः। निर्गतं सुमहत् - तेजस्तच्चैक्यं सम - गच्छत: ॥१६॥
अतीव तेजसः कूटं ज्वलन्तमिव पर्वतम्। ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वाला-व्याप्त - दिगन्तरम् ॥१७॥
रक्त - वर्णं शुभाकारं पद्म - राग - मणि - प्रभम्। किञ्चिच्छीतं तथा चौष्णं मरीचि-जाल-मण्डितम् ॥१८॥
निःसृतं हरिणा दृष्टं हरेण च महात्मना। विस्मितौ तौ महा - राजौ बभूवतुरुरुक्रमौ ॥१९॥
शंकरस्य शरीरात्तु निःसृतं महदद्भुतम्। रक्त-वर्णमभूत् तीव्रं दुर्दर्शं दारुणं महत् ॥२०॥
भयङ्करं च दैत्यानां देवानां विस्मय - प्रदम्। घोर - रूपं गिरि - प्रख्यं तमो - गुणमिवापरम् ॥२१॥
ततो विष्णु - शरीरात्तु तेजो - राशिमिवापरम्। नीलं सत्त्व - गुणोपेतं प्रादुरास महा - द्युतिः ॥२२॥
ततश्चेन्द्र - शरीरात्तु चित्र - रूपं दुरासदम्। आविरासीत् सु - संवृत्तं तेजः सर्व-गुणात्मकम् ॥२३॥
कुबेर - यम - वह्नीनां शरीरेभ्यः समन्ततः। निश्चक्राम महत् - तेजो वरुणस्य तथैव च ॥२४॥
अन्येषां चैव देवानां शरीरेभ्योऽति - भास्वरं। निर्गतं तन्महा-तेजो - राशिरासीन्महोज्ज्वलः ॥२५॥
तं दृष्ट्वा विस्मिताः सर्वे देवा विष्णु - पुरोगमाः। तेजो - राशिं महा - दिव्यं हिमाचलमिवापरम् ॥२६॥
पश्यतां तत्र देवानां तेजः - पुञ्ज - समुद्भवा। बभूवाति - वरा नारी सुन्दरी विस्मय - प्रदा ॥२७॥
अतुलं तत्र तत् - तेजः सर्वं - देव - शरीरजम्। एकस्थं तदभून्नारी व्याप्त - लोक-त्रयं त्विषा ॥२८॥
त्रिगुणा सा महा - लक्ष्मीः सर्वं - देव - शरीरजा। अष्टादश-भुजा रम्या त्रि-वर्णा विश्व-मोहिनी ॥२९॥
श्वेतानना कृष्ण - नेत्रा संरक्ताधर - पल्लवा। ताम्र-पाणि-तला कान्ता दिव्य-भूषण-भूषिता ॥३०॥
अष्टादश - भुजा देवी सहस्र - भुज - मण्डिता। यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम् ॥३१॥

यास्येन चाभवन्केशा बाहवो - विष्णु - तेजसा। सौम्येन स्तनयोर्युग्मं मध्यं चैन्द्रेण चाभवत् ॥३२॥
वारुणेन च जङ्घोरू नितम्बस्तेजसा भुवः। ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदंगुल्योर्क - तेजसा ॥३३॥
वसूनां च करांगुल्यः कौबेरेण च नासिका। तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः - प्राजापत्येन तेजसा ॥३४॥
नयन - त्रितयं जज्ञे तथा पावक - तेजसा। भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च ॥३५॥
अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा। ततः समस्त-देवानां तेजो-राशि - समुद्भवाम् ॥३६॥
तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः। स्वायुधेभ्यः समुत्पाट्य तेजो-युक्तानि सत्वरा ॥३७॥
ततो देवा ददुस्तस्यै स्वानि स्वान्यायुधानि च। ऊचुर्जय जय तूच्चैर्जयन्ती च जयैषिणः ॥३८॥
शूलं शूलाद् विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाक - धृक्। चक्रं च दत्तवान् कृष्णः समुत्पाद्य स्व-चक्रतः ॥३९॥
शंखं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः। मारुतो दत्तवांश्चापं बाण - पूर्णे तथेषुधी ॥४०॥
वज्रमिन्द्रः - समुत्पाद्य कुलिशादमराधिपः। ददौ तस्यै सहस्राक्षो घंटामैरावताद् गजात् ॥४१॥
काल - दण्डाद् यमो दण्डं पाशं चाम्बु - पतिर्ददौ। प्रजापतिश्चाक्ष - मालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् ॥४२॥
समस्त - रोम - कूपेषु निज - रश्मीन् दिवाकरः। कालश्च दत्तवान् खड्गं तस्याश्चर्म च निर्मलम् ॥४३॥
क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाम्बरे। चूडा-मणिं तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि च ॥४४॥
अर्ध - चन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरान् सर्वं - बाहुषु। नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम् ॥४५॥
अंगुलीयक - रत्नानि समस्ताश्वंगुलीषु च। विश्वकर्मा ददौ तस्यै परशुं चाति - निर्मलम् ॥४६॥
अस्त्राण्यनेक - रूपाणि तथाऽभेद्यं च दंशनम्। अम्लान - पंकजां मालां शिरस्युपरि चापराम् ॥४७॥

अददज्जलधिस्तस्यै पंकजं चाति - शोभनम् । हिमवान् वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च ।।४८।।
ददावशून्यं सुरया पान - पात्रं धनाधिपः । शेषश्च सर्व - नागेशो महा-मणि - विभूषितम् ।।४९।।
नाग - हारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथिवीमिमाम् । अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा ।।५०।।
सम्मानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः । तस्या नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः ।।५१।।
अमायतातिमहता प्रति - शब्दो महानभूत् । चुक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे ।।५२।।
चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च मही - धराः । जय तु देवाश्च मुदा तामूचुः सिंह - वाहिनीम् ।।५३।।
सायुधां भूषणैर्युक्तां दृष्ट्वा ते विस्मयं गताः । तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्ति - नम्रात्म - मूर्तयः ।।५४।।

देवा ऊचुः

नमः शिवायै कल्याण्यै शान्त्यै पुष्ट्यै नमो नमः । भगवत्यै नमो देव्यै रुद्राण्यै सततं नमः ।।५५।।
काल - रात्र्यै तथाम्बायै इन्द्राण्यै ते नमो नमः । सिद्ध्यै बुद्ध्यै तथा वृद्ध्यै वैष्णव्यै ते नमो नमः ।।५६।।
पृथिव्यां या स्थिता पृथ्व्या न ज्ञाता पृथिवी तु च । अन्तः-स्थिता प्रेक्षति च वन्दे तामीश्वरीं पराम् ।।५७।।
कल्याणं कुरु भो मातः ! त्राहि नः शत्रु-तापितान् । जहि पापं हयारिं त्वं तेजसा स्वेन मोहितम् ।।५८।।
खलं मायाविनं घोरं स्त्री - वश्यं वर - दर्पितम् । दुःखदं सर्व - देवानां नाना - रूप - धरं शठम् ।।५९।।
त्वमेका सर्व - देवानां शरणं भक्त - वत्सले ! पीडितान् दानवेनाद्य त्राहि देवि ! नमोऽस्तु ते ।।६०।।

ऋषिरुवाच

एवं स्तुता तदा देवी सुरैः सर्व - सुख - प्रदा । तानुवाच महा - देवी स्मित - पूर्वं शुभं वचः ।।६१।।

देव्युवाच

भयं त्यजतु गीर्वाणा महिषान् मन्द - तेजसः। हनिष्यामि रणेऽद्यैव वर - दृप्तं विमोहितम् ॥६२॥

ऋषिरुवाच

जय कृत्वा स्मितं देवी साट्टहासं चकार ह। उच्चैः शब्दं महा-घोरं दानवानां भय - प्रदम् ॥६३॥
चकम्पे वसुधा तत्र श्रुत्वा तच्छब्दमद्भुतम्। चेलुश्च पर्वताः सर्वे चुक्षोभाब्दिश्च वीर्यवान् ॥६४॥
मेरुश्चचाल शब्देन दिशः सर्वं - प्रपूरिताः। भयं जग्मुस्तदा श्रुत्वा दानवास्तं स्वनं महत् ॥६५॥
जय पाहि तु देवास्तामूचुः परम - हर्षिताः। महिषोऽपि स्वनं श्रुत्वा चुकोप मद - गर्वितः ॥६६॥
किमेतदेव तान् दैत्यान् पपृच्छ स्वन - शंकितः। गच्छन्तु त्वरिता दूता ज्ञातुं शब्द-समुद्भवम्[१७] ॥६७॥

दूता ऊचुः

देवी दैत्येश्वर - प्रौढ़ा दृश्यते काचिदङ्गना। सर्वाङ्ग - भूषणा नारी सर्व-रत्नोप - शोभिता ॥६८॥
न मानुषी नासुरी सा दिव्य - रूप - मनोहरा। सिंहारूढ़ाऽऽयुध - धरा चाष्टादश - करा वरा ॥६९॥
सा नादं कुरुते नारी लक्ष्यते मद - गर्विता। सुरा-पान - रता कामं जानीमो न स-भर्तृका ॥७०॥
अन्तरिक्ष - स्थिता देवा तां स्तुवन्ति मदान्विताः। द्रष्टुं नैव समर्थाः स्मस्तत्-तेजः - परिघर्षिताः ॥७१॥

महिष उवाच

गच्छ वीर ! मयादिष्टो मन्त्रि-श्रेष्ठ ! बलान्वित ! सामादिभिरुपायैस्त्वं समानय शुभाननाम् ॥७२॥

ऋषिरुवाच

महिषस्य वचः श्रुत्वा पेशलं मन्त्रि - सत्तमः । गत्वा दूर-तरं स्थित्वा तामुवाच मनस्विनीम्[१८] ॥७३॥

मन्त्री उवाच

काऽसि त्वं मधुरालापे ! किमत्रागमनं कृतम् । पृच्छति त्वां महाभागे ! मन्मुखेन मम प्रभुः ॥७४॥
स जेता सर्व - देवानामनश्यं तु नरैः किल । द्रष्टुमिच्छति राजा मे महिषो नाम पार्थिवः ॥७५॥
वशगोऽसौ तवात्यर्थं रूप - संश्रवणात् तव । करभोरु ! वदाऽऽशु त्वं संविधेयं मया यथा[१९] ॥७६॥

देव्युवाच

मन्त्रि - वर्य ! सुराणां वै जननीं विद्धि मां किल । श्रीमहालक्ष्मीं विख्यातां सर्व-दैत्य-निषूदिनीम् ॥७७॥
प्रार्थिताऽहं सुरैः सर्वैर्महिषस्य क्षयाय च । तस्मादिहागतास्म्यद्य तद्-नाशाय कृतोद्यमा[२०] ॥७८॥
मघवा स्वर्गमाप्नोतु देवाः सन्तु हविर्भुजः । यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ॥७९॥

मन्त्री उवाच

राजन् ! देवी वरारोहा सिंहस्योपरि - संस्थिता । अष्टादश - भुजा रम्या वरायुत - धरा परा ॥८०॥
सा मयोक्ता महाराज ! महिषं भज भामिनि ! महिषी भव राज्ञस्त्वं त्रैलोक्याधिपतेः प्रिया ॥८१॥
एवं मद् - वचनं श्रुत्वा सा स्मयावेश - मोहिता । मामुवाच विशालाक्षी स्मित - पूर्वमिदं वचः ॥८२॥
करिष्येऽहं मृधे युद्धं हनिष्ये त्वां सुराप्रियम् । गच्छ वा दुष्ट ! पातालं जीवितेच्छा यदस्ति ते ॥८३॥

महिष उवाच

गच्छ ताम्र ! महाभाग ! युद्धाय कृत-निश्चयः । तामानय वरारोहां जित्वाधर्मेण मानिनीम् ।।८४।।

ऋषिरुवाच

एवं तद् - भाषितं श्रुत्वा ताम्रः काल - वशं गतः । निर्गतः सैन्य - संयुक्तः प्रणम्य महिषं नृपम् ।।८५।।
स गत्वा तां समालोक्य देवीं सिंहोपरि-स्थिताम् । स्तूयमानां सुरैः सर्वैः सर्वायुध - विभूषिताम् ।।८६।।
तामुवाच विनीतः सन् वाक्यं मधुरया गिरा । देवि ! दैत्येश्वरः शृङ्गी-स्वरूप - गुण-मोहितः ।।८७।।
स्पृहां करोति महिषस्त्वत् - पाणि - ग्रहणाय वै । भुंक्ष्व राज्य - सुखं पूर्णं वर्षाणामयुतायुतम् ।।८८।।

देव्युवाच

गच्छ ताम्र ! पतिं ब्रूहि मुमुर्षुं मद - चेतसम् । महिषं चाति - कामार्तं मूढं ज्ञान-विवर्जितम्[२१] ।।८९।।
नाहं पतिवरा नारी वर्तते मे पतिः प्रभुः । सर्व-कर्ता सर्व-साक्षी ह्यकर्ता निस्पृहः स्थिरः ।।९०।।
तं त्यक्त्वा महिषं मत्तं कथं सेवितुमुत्सहे[२२] । जीवितेच्छास्ति चेत्पाप ! गच्छ पातालमाशु वै ।।९१।।

ऋषिरुवाच

उक्त्वैवं सा तदा देवी जगर्ज भृशमद्भुतम् । कल्पान्त - सदृशं नादं चक्रे दैत्य - भयावहम् ।।९२।।
ताम्रः श्रुत्वा च तं शब्दं भय-त्रस्त - मनास्तदा । पलायनं ततः कृत्वा जगाम महिषान्तिकम् ।।९३।।
ताम्रं समागतं दृष्ट्वा हयारिरपि मोहितः । दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं त्रैलोक्यममरारयः ।।९४।।

संनद्धाखिल - सैन्यास्ते समत्तस्थुरुदायुधाः । आः किमेतदेवं क्रोधादाभाष्य महिषासुरः ।।९५।।

अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृ तः । स ददर्श ततो देवीं व्याप्त-लोक - त्रयां त्विषा ॥९६॥
पादाक्रान्त्या नत - भुवं किरीटोल्लिखिताम्बराम् । क्षोभिताशेष - पातालां धनुर्ज्या-निःस्वनेन ताम् ॥९७॥
दिशो भुज - सहस्रेण समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम् । ततः प्रववृते युद्धं तया देव्या सुर - द्विषाम् ॥९८॥
शस्त्रास्त्रैर्बहुधा मुक्तैरादीपित - दिगन्तरम् । महिषासुर - सेनानी चिक्षुराख्यो महासुरः ॥९९॥
युयुधे चामरश्चान्यैश्च तुरंग - बलान्वितः । रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महाऽसुरः ॥१००॥
अयुद्धयतायुतानां च सहस्रेण महा - हनुः । पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महाऽसुरः ॥१०१॥
अयुतानां शतैः षड्भिर्वाष्कलो युयुधे रणे । गज - वाजि - सहस्रौघैरनेकैः परिवारितः ॥१०२॥
वृतो रथानां कोट्या च युद्धे तस्मिन्नयुद्ध्यत । बिडालाख्योऽयुतानां च पञ्चाशद्भिः रथायुतैः ॥१०३॥
युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः । अन्ये च तत्रायुतशो रथ - नाग - हयैर्वृ ताः ॥१०४॥
युयुधुः संयुगे देव्या सह तत्र महाऽसुराः । कोटि - कोटि-सहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा ॥१०५॥
हयानां च वृतो युद्धे तत्राभून्महिषासुरः । तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्तिभिर्मुसलैस्तथा ॥१०६॥
युयुधुः संयुगे देव्याः खड्गै परशु - पट्टिशैः । केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः केचित् पाशाँस्तथापरे ॥१०७॥
देवीं खड्ग - प्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः । साऽपि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका ॥१०८॥
लीलयैव प्रचिच्छेद निज - शस्त्रास्त्र - वर्षिणी । अनायस्तानना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः ॥१०९॥
मुमोचासुर - देहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी । सोऽपि क्रुद्धो धुत - सटो देव्या वाहन - केशरी ॥११०॥
चचारासुर - सैन्येषु वनेष्विव हुताशनः । निःश्वासान् मुमुचे याँश्च युद्धयमाना रणेऽम्बिका ॥१११॥

त एव सद्य सम्भूता गणाः शत - सहस्रशः । युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपालासि - पट्टिशैः ॥११२॥
नाशयन्तोऽसुर - गणान् देवी-शक्त्युप - बृंहिताः । अवादयन्तः पटहान् गणाः शंखास्तथापरे ॥११३॥
मृदंगाश्च तथैवान्ये तस्मिन् युद्ध - महोत्सवे । ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्ति - वृष्टिभिः ॥११४॥
खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महाऽसुरान् । पातयामास चैवान्यान् घण्टा-स्वन-विमोहितान् ॥११५॥
असुरान् भुवि पाशेन बद्ध्वा चान्यानकर्षयत् । केचिद् द्विधा कृतास्तीक्ष्णैः खड्ग-पातैस्तथापरे ॥११६॥
विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते । वेमुश्च केचिद् रुधिरं मुसलेन भृशं हताः ॥११७॥
केचिन्निपतिता भूमौ भिन्नाः शूलेन वक्षसि । निरन्तराः शरौघेण कृताः केचिद् रणाजिरे ॥११८॥
श्येनानुकारिणः प्राणान् मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः । केषांचिद् बाहवश्छिन्नाश्छिन्न - ग्रीवास्तथापरे ॥११९॥
शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः । विच्छिन्न - जंघास्त्वपरे पेतुरुर्व्यां महाऽसुराः ॥१२०॥
एवं ह्यमाणि - चरणाः केचिद् देव्या द्विधा कृताः । छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिताः पुनरुत्थिताः ॥१२१॥
कबन्धाश्छिन्न - शिरसः खड्ग-शक्त्यृष्टि-पाणयः । ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूय - लयाश्रिताः ॥१२२॥
कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीत - परमायुधाः । तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो देवीमन्ये महाऽसुराः२३ ॥१२३॥
पातितै रथऽनागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा । अगम्या साऽभवत् तत्र यत्राभूत् स महा-रणः ॥१२४॥
शोणितौघा महा - नद्यः सद्यस्तत्र - प्रसुस्रुवुः । मध्ये चासुर - सैन्यस्य वारणासुर - वाजिनाम् ॥१२५॥
क्षणेन तन्महासैन्यमसुराणां तथाऽम्बिका । निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृण - दारु - महा-चयम् ॥१२६॥
स च सिंहो महा - नादमुत्सृजन् धुत - केसरः । शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति ॥१२७॥

देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं महाऽसुरैः । यथैषां तुतुषुर्देवाः पुष्प - वृष्टि - मुचो दिवि ।।१२८।।

ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सार्वाणके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) जगदम्बार्पणमस्तु ।।

उक्त वाक्य कहकर जल छोड़ें ।

वैदिकी आहुति (द्वितीय)

एक पान पर शाकल्य रखे । यथा—१ कमलगट्टा घी में भिगोकर, १ सुपारी, २ लौंग, २ छोटी इलायची, गूगल । इस शाकल्य में विशेष गूगल ही है । सभी वस्तुएँ स्त्रुची में रखकर खड़े होकर निम्न मन्त्र से आहुति दें—

ॐ घृतं घृत - पावानः पिवतव्वसां वसा - पावानः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽआदिशो व्विद्दिशऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।।

तान्त्रिक आहुति

ह्रीं सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै श्रीमहालक्ष्म्यै सप्त-विंशति - वर्णात्मिकायै लक्ष्मी-बीजाधिष्ठात्र्यै नमः महाऽहुतिं समर्पयामि स्वाहा ।

शाकल्य-सामग्री पूर्वोक्त ही है ।

तृतीयः

।। ध्यानम् ।।

ॐ उद्यद्भानु-सहस्र-कान्तिमरुण - क्षौमां शिरो - मालिकां, रक्तालिप्त - पयोधरां जप - वटीं विद्यामभीतिं वरम् ।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्र-विलसद् - वक्त्रारविन्द - श्रियम्, देवीं बद्ध-हिमांशु - रत्न - मुकुटां वन्देऽरविन्द-स्थिताम् ।।

ॐ ऋषिरुवाच

निहन्यमानं तत् - सैन्यमवलोक्य महाऽसुरः । सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद् ययौ योद्धुमथाम्बिकाम् ।।१।।
स देवीं शर - वर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः । यथा मेरु - गिरेः शृङ्गं तोय - वर्षेण तोयदः ।।२।।
तस्यच्छित्वा ततो देवी लीलयैव शरोत्करान् । जघान तुरगान् वाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम् ।।३।।
चिच्छेद च धनुः सद्यो ध्वजं चाति-समुच्छ्रितम् । विव्याध चैव गात्रेषु छिन्न - धन्वानमाशुगैः ।।४।।
सच्छिन्न - धन्वा विरथो हताश्वो हत-सारथिः । अभ्यधावत तां देवीं खड्ग - चर्म - धरोऽसुरः ।।५।।
सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्ण - धारेण मूर्धनि । आजघान भुजे सव्ये देवीमप्यति - वेग - वान् ।।६।।
तस्या खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृप - नन्दन । ततो जग्राह शूलं स कोपादरुण - लोचनः ।।७।।
चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्र - काल्यां महाऽसुरः । जाज्वल्यमानं तेजोभी रवि-बिम्बमिवाम्बरात् ।।८।।
दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवी शूलममुञ्चत । तच्छूलं शतधा तेन नीतं स च महाऽसुरः ।।९।।
हते तस्मिन् महा - वीर्ये महिषस्य चमू-पतौ । आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः ।।१०।।

भगवती जगदम्बा
सर्वाधिकारसुरक्षित
संदीप तमरहाई जबलपुर

सिहोरा जबलपुर
सर्वाधिकार सुरक्षित
संदीप तमरहाई जबलपुर
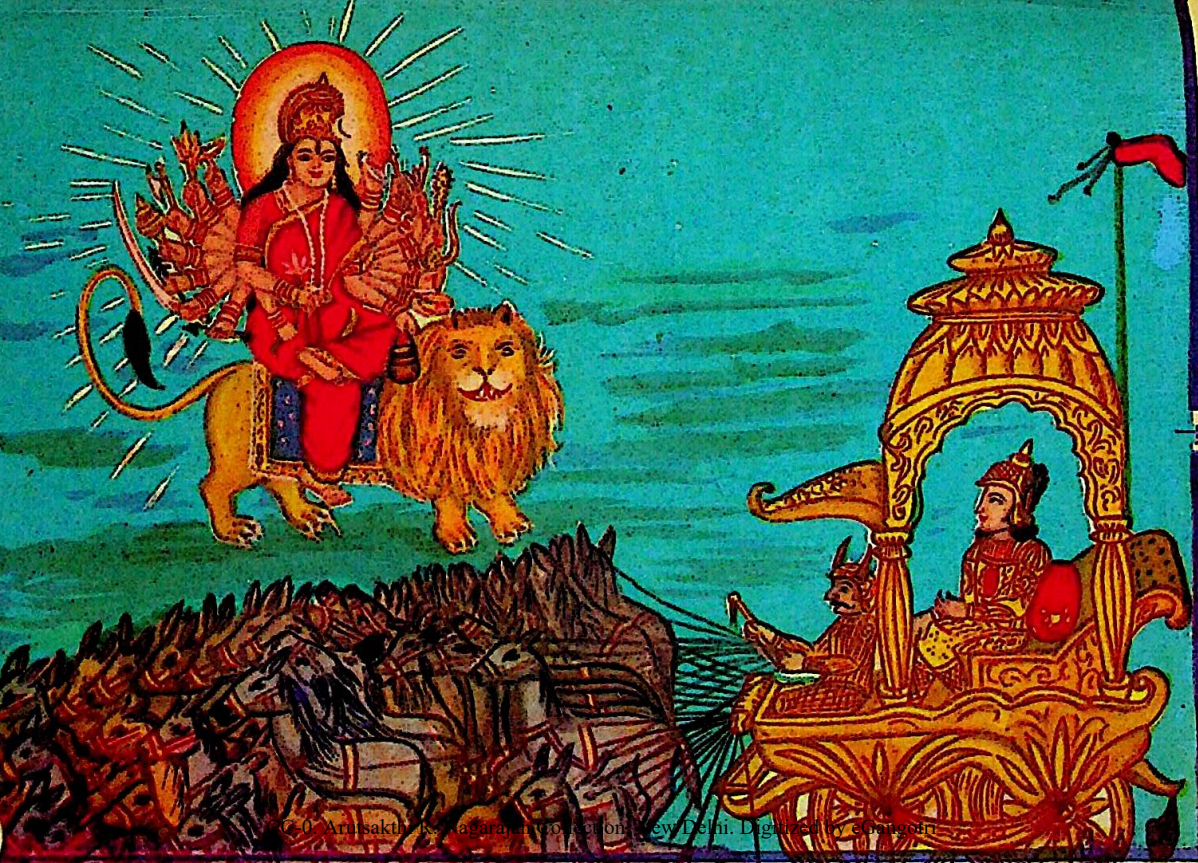
सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ देव्यास्तामम्बिका द्रुतम् । हुंकाराभिहतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम् ॥११॥
भग्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा क्रोध-समन्वितः । चिक्षेप चामरः शूलं बाणैस्तदपि साच्छिनत् ॥१२॥
ततः सिंहः समुत्पत्य गज - कुम्भान्तरे स्थितः । बाहु - युद्धेन युयुधे तेनोच्चैस्त्रिदशारिणा ॥१३॥
युद्ध्यमानौ ततस्तौ तु तस्मान्नागान्महीं गतौ । युयुधातेऽति - संरब्धे प्रहारैरति - दारुणैः ॥१४॥
ततो वेगात् खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा । कर - प्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक् - कृतम् ॥१५॥
उदग्रश्च रणे देव्या शिला - वृक्षादिभिर्हतः । दन्त-मुष्टि - तलैश्चैव करालश्च निपातितः ॥१६॥
देवी क्रुद्धा गदा - पातैश्चूर्णयामास चोद्धतम् । वाष्कलं भिन्दिपालेन बाणैस्ताम्रं तथान्धकम् ॥१७॥
उग्रास्यमुग्र - वीर्यं च तथैव च महा - हनुम् । त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी ॥१८॥
विडालस्यासिना कायात् पातयामास वै शिरः । दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्ये यम - क्षयम् ॥१९॥
हाहा - कारो महानासीत् सैन्ये तस्य दुरात्मनः । चुक्रुशू रुरुदुश्चैव त्राहि त्राहि तु भाषणैः ॥२०॥
अन्ये ये सैनिका राजन् ! सिंहेन भक्षिताश्च ते । तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां महिषो दुर्मनास्तदा ॥२१॥
तेषां तद् - वचनं श्रुत्वा क्रोध - युक्तो नराधिपः । दारुकं प्राह तरसा रथमानय मेऽद्भुतम् ॥२२॥
सहस्र - खर - संयुक्तं पताका - ध्वज - भूषितम् । आयुधैः संयुतं शुभ्रं सुचक्रं चारु - कूबरम् ॥२३॥
आनीतं तं रथं ज्ञात्वा दानवेन्द्रो महा - बलः । सर्वायुध - समायुक्तो वरास्तरण - संयुतः ॥२४॥
मानुषं देहमास्थाय संग्रामे गन्तुमुद्यतः । त्यक्त्वा तन्माहिषं रूपं बभूव पुरुषः शुभः ॥२५॥
दिव्याम्बर - धरः कान्तः पुष्प - वाण इवापरः । तमायान्तं समालोक्य दैत्यानामधिपं तदा ॥२६॥

बहुभिः सम्वृतं वीरैर्देवी शङ्खमवादयत् । समीपमेत्य देव्यास्तु तामुवाच हसन्निव ।।२७।।

महिष उवाच

देवि ! संसार - चक्रेऽस्मिन् वर्तमाने जनः किल । नरो वाऽथ तथा नारी सुखं वाञ्छति सर्वथा ।।२८।।
नारी - पुरुषयोः कान्ते ! समान - वयसोः सदा । संयोगो यः समाख्यातः स एवात्युत्तमः स्मृतः ।।२९।।
तं चेत् करोषि संयोगं वीरेण च मया सह । अत्युत्तम-सुखस्यैव प्राप्तिः स्यात् ते न संशयः ।।३०।।
इन्द्रादयः सुरा सर्वे संग्रामे विजिता मया । रत्नानि यानि दिव्यानि भवनेऽस्मिन् ममाधुना ।।३१।।
भुङ्क्ष्व त्वं तानि सर्वाणि यथेष्टं देहि वा यथा । पट्ट-राज्ञी भवाद्य त्वं दासोऽस्मि तव सुन्दरि ।।३२।।

ऋषिरुवाच

एवं ब्रुवाणं तं दैत्यं देवी भगवती हि सा । प्रहस्य स-स्मितं वाक्यमुवाच वर - वर्णिनी ।।३३।।

देव्युवाच

नाहं पुरुषमिच्छामि परमं पुरुषं विना । तस्य चेच्छाम्यहं दैत्य ! सृजामि सकलं जगत् ।।३४।।
स मां पश्यति विश्वात्मा तस्याऽहं प्रकृतिः शिवा । मूर्खस्त्वसि मन्दात्मन् यत्-स्त्री-संगं चिकीर्षसि ।।३५।।
नरस्य बन्धनार्थाय शृङ्खला स्त्री प्रकीर्तिता । नारी-संगे महद्-दुःखं जानन् किं त्वं विमुह्यसि ।।३६।।
त्यज वैरं सुरैः सार्धं यथेष्टं विचरावनौ । पातालं गच्छ वा कामं जीवितेच्छा यदास्ति ते ।।३७।।
अथवा कुरु संग्रामं बलवत्यस्मि साम्प्रतम् । प्रेषिताऽहं सुरैः सर्वैस्तव नाशाय दानय ।।३८।।

हनिष्यामि महाबाहो ! त्वामहं नात्र संशयः ।

ऋषिरुवाच

उक्तस्तुः स तया देव्या धनुरादाय दानवः ।
(मुमोच तरसा बाणान् कर्णाकृष्टाञ्छिलाशितान्) देवी चिच्छेद तान् वाणैः क्रोधान्मुक्तैरयोमुखैः ॥३९॥
तयोः परस्परं युद्धं सम्बभूव भय - प्रदम् । स पदाति - रथं सैन्यं देव्या सिंहेन नाशितम् ॥४०॥
एवं संक्षीयमाणे तु स्व - सैन्ये महिषासुरः । माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान् गणान् ॥४१॥
काँश्चित्तुण्ड-प्रहारेण क्षुर-क्षेपैस्तथापरान् । लांगूल-ताडिताँश्चान्यान् शृङ्गाभ्यां च विदारितान् ॥४२॥
वेगेन काँश्चिदपरान् नादेन भ्रमणेन च । निःश्वास - पवनेनान्यान् पातयामास भूतले ॥४३॥
निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः । सिंहं हन्तुं महा-देव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका ॥४४॥
सोऽपि कोपान्महा - वीर्यः क्षुर-क्षुण्ण-महीतलः । शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चाँश्चिक्षेप च ननाद च ॥४५॥
वेग - भ्रमण - विक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत । लाङ्गूलेनाहतः साब्धिः प्लावयामास सर्वतः ॥४६॥
धुत - शृङ्ग - विभिन्नाश्च खण्डं खण्डं ययुर्घनाः । श्वासानिलास्ताः शतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः ॥४७॥
एवं क्रोध - समाध्मातमापतन्तं महाऽसुरम् । दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं तन्नाशाय तदाकरोत् ॥४८॥
सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबन्ध महाऽसुरम् । तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महा - मृधे ॥४९॥
ततः सिंहोऽभवत् सद्यो यावत् तस्याम्बिका शिरः । छिनत्ति तावत् पुरुषः खड्ग - पाणिरदृश्यत ॥५०॥
तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः । तं खड्ग-चर्मणा सार्द्धं ततः सोऽभून्महा-गजः ॥५१॥
करेण च महा - सिंहं तं चकर्ष जगर्ज च । कर्षतस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत ॥५२॥

ततो महाऽसुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः। तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं स चराचरम् ॥५३॥
ततः क्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम्। पपौ पुनः पुनश्चैव जहासारुण - लोचना ॥५४॥
ननर्द चासुरः सोऽपि बल - वीर्य - मदोद्धतः। विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान् ॥५५॥
सा च तान् प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः। उवाच तं मदोद्धूत - मुख - रागाकुलाक्षरम् ॥५६॥

देव्युवाच

मा गर्वं कुरु मन्दात्मँस्तिष्ठ तिष्ठ रणांगणे। करिष्यामि निरातंकान् हत्वा त्वां सुर-सत्तमान् ॥५७॥
गर्ज गर्ज क्षणं मूढ़ मधु यावत् पिबाम्यहम्। मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः ॥५८॥

ऋषिरुवाच

उक्त्वैवं चषकं हैमं गृहीत्वा सुरया युतम्। पपौ पुनः पुनः क्रोधाद्धन्तु-कामा महाऽसुरम् ॥५९॥
एवमुक्त्वा समुत्पत्य साऽऽरूढ़ा तं महाऽसुरम्। पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडयत् ॥६०॥
ततः सोऽपि पदाऽऽक्रान्तस्तया निज-मुखात् ततः। अर्ध-निष्क्रान्त एवासीद् देव्या वीर्येण संवृतः ॥६१॥
अर्ध - निष्क्रान्त एवासौ युद्धयमानो महाऽसुरः। तया महासिना देव्या शिरश्छित्वा निपातितः ॥६२॥
ततो हाहा - कृतं सर्वं दैत्य - सैन्यं ननाश तत्। प्रहर्षं च परं जग्मुः सकला देवता - गणाः ॥६३॥
एवं स महिषो नाम स - सैन्यः स-सुहृद् - गणः। त्रैलोक्यं मोहयित्वा तु तया देव्या निपातितः ॥६४॥
त्रैलोक्यस्थैस्तदा भूतैर्महिषे विनिपातिते। जयत्युक्तं वचं सर्वे स - देवा सुर - मानुषैः ॥६५॥

तुष्टुवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः। जगुर्गन्धर्व - पतयो ननृतुश्चाप्सरो - गणाः ॥६६॥
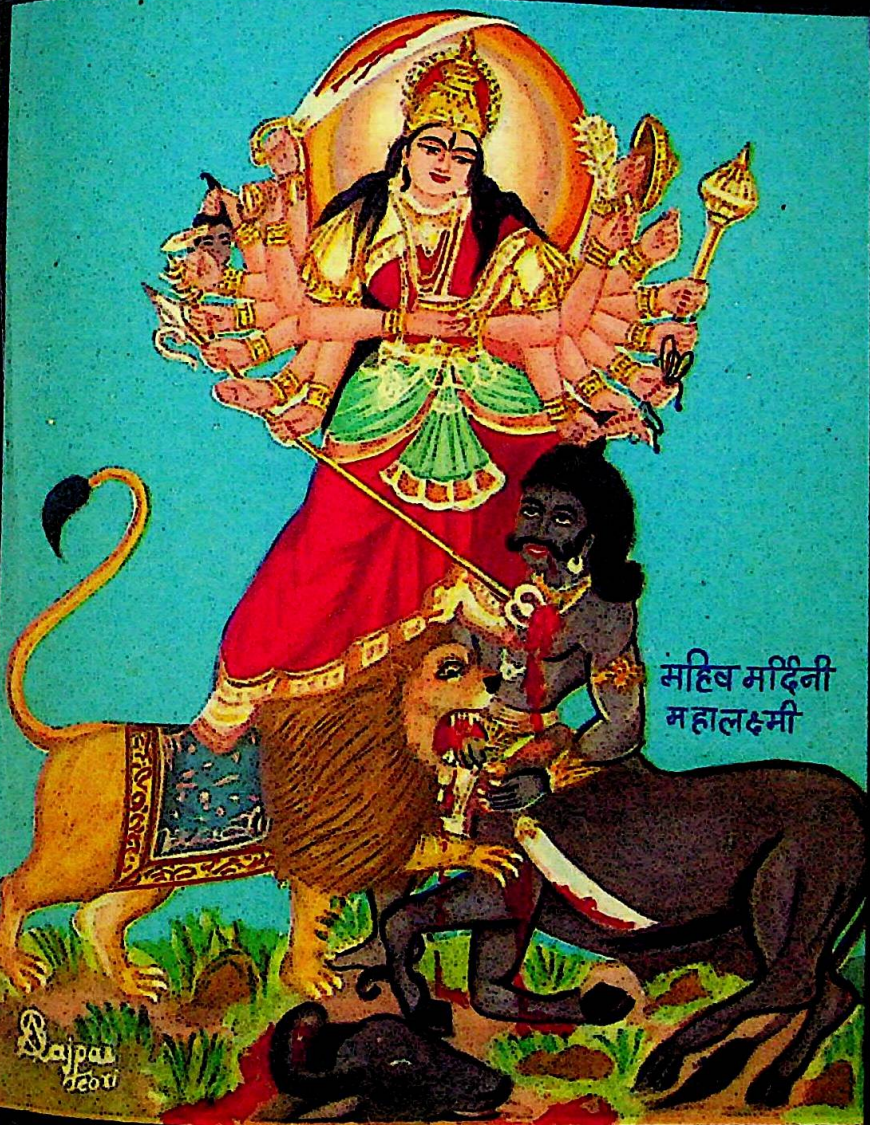
आगम शक्ति शोध संस्थान
सिहोरा जबलपुर

संदीप तमरहाई ज़बलपुर

ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सार्वणिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा);जगदम्बार्पणमस्तु ।।

उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़े।

।। तन्त्रोक्त आहुति ।।

ॐ जयन्तो सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै लक्ष्मो-बीजाधिष्ठात्र्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ।

आहुति में सामग्री वही है, केवल भैंसा-गूगल विशेष है। मन्त्र भी सब वही हैं।

चतुर्थः

।। ध्यानम् ।।

ॐ कालाभ्राभां कटाक्षैररि - कुल - भयदां मौलि - बद्धेन्दु - रेखां,
शंखं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम् ।
सिंह - स्कन्धाधिरूढ़ां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं,
ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदश - परिवृतां सेवितां सिद्धि - कामैः ।।

ॐ ऋषिरुवाच

अथ प्रमुदिताः सर्वे देवा इन्द्र - पुरोगमाः । स्तुतिमारभिरे कर्तुं निहते महिषासुरे ।।१।।

शक्रादयः सुर - गणा निहतेऽति - वीर्ये, तस्मिन् दुरात्मनि सुरारि - बले च देव्या ।
तां तुष्टुवुः प्रणति - नम्र - शिरोधरांसा, वाग्भिः प्रहर्ष - पुलकोद्गम - चारु - देहाः ।।२।।

देवा ऊचुः

देव्या तया ततमिदं जगदात्म - शक्त्या, निःशेष - देव - गण - शक्ति - समूह - मूर्त्या ।
तामम्बिकामखिल - देव - महर्षि-पूज्यां, भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः ।।३।।

यस्या प्रभावमतुलं भगवाननन्तो, ब्रह्मा हरश्च नहि वक्तुमलं बलं च ।
सा चण्डिकाऽखिल - जगत् - परिपालनाय, नाशाय चाशुभ - भयस्य मतिं करोतु ।।४।।

निगमागम शक्ति शोध संस्थान
सिहोरा जबलपुर

प्रदीप तमरहाई जबलपुर

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः, पापात्मनां कृत - धियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुल - जन - प्रभवस्य लज्जा, तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि ! विश्वम् ॥५॥
किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्, किं चाति - वीर्यमसुर - क्षय - कारि भूरि।
किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि, सर्वेषु देव्यसुर - देव - गणादिकेषु ॥६॥
हेतुः समस्त - जगतां त्रिगुणाऽपि दोषैर्न ज्ञायसे हरि - हरादिभिरप्यपारा।
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंश - भूतमव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥७॥
यस्याः समस्ता सुरता समुदीरणेन, तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि !
स्वाहाऽसि वै पितृ - गणस्य च तृप्ति - हेतुरुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥८॥
या मुक्ति - हेतुरविचिन्त्य - महा-व्रता त्वमभ्यस्यसे सु-नियतेन्द्रिय - तत्त्व - सारैः।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्त - समस्त - दोषैर्विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवि ॥९॥
शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधानमुद्गीथ - रम्य - पद - पाठवतां च साम्नाम्।
देवी त्रयी भगवती भव - भावनाय, वार्ता च सर्व - जगतां परमार्ति - हन्त्री ॥१०॥
मेधाऽसि देवि ! विदिताऽखिल - शास्त्र - सारा, दुर्गाऽसि दुर्ग-भव-सागर - नौर - संगा।
श्रीः कैटभारि - हृदयैक - कृताधिवासा, गौरी त्वमेव शशि - मौलि - कृत - प्रतिष्ठा ॥११॥
ईषत् - सहासममलं परि - पूर्ण - चन्द्र - बिम्बानुकारि कनकोत्तम - कान्ति - कान्तम्।
अत्यद्भुतं प्रहृतमात्त - रुषा तथापि, वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥१२॥

पृष्ठ ८३

दृष्ट्वा तु देवि ! कुपितं भ्रुकुटी - करालमुद्यच्छशाङ्क - सदृशच्छवि यन्न सद्यः ।
प्राणान् मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं, कैर्जीव्यते हि कुपितान्तक - दर्शनेन ॥१३॥
देवि ! प्रसीद परमा भवती भवाय, सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि ।
विज्ञातमेतदधुनैव यतस्तमेतन्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ॥१४॥
ते सम्मता जन - पदेषु धनानि तेषां, तेषां यशांसि न च सीदति धर्म - वर्गः ।
धन्यास्त एव निभृतात्मज - भृत्य - दारा, येषां सदाऽभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥१५॥
धर्म्याणि देवि ! सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रति - दिनं सुकृती - करोति ।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवती - प्रसादाल्लोक - त्रयेऽपि फलदा ननु देवि ! तेन ॥१६॥
दुर्गे ! स्मृता हरसि भीतिमशेष - जन्तोः, स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव - शुभां ददासि ।
दारिद्र्य - दुःख - भय - हारिणि ! का त्वदन्या, सर्वोपकार-करणाय सदाऽऽर्द्र - चित्ता ॥१७॥
एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते, कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् ।
संग्राम - मृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु, मत्वा तु नूनमहितान् विनिहंसि देवि ॥१८॥
दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म, सर्वासुरानरिषु यत् प्रहिणोसि शस्त्रम् ।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्र - पूता, इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽति - साध्वी ॥१९॥
खड्ग - प्रभा - निकर - विस्फुरणैस्तथोग्रैः, शूलाग्र - कान्ति - निवहेन दृशोऽसुराणाम् ।

यन्नागता विलयमंशुमदिन्दु - खण्ड - योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥२०॥

दुर्वृत्त - वृत्त - शमनं तव देवि ! शीलं, रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः ।
वीर्यं च हन्तृ हृत - देव - पराक्रमाणां, वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ॥२१॥
केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य, रूपं च शत्रु - भय - कार्यति - हारि कुत्र ।
चित्ते कृपा समर - निष्ठुरता च दृष्टा, त्वय्येव देवि ! वरदे ! भुवन - त्रयेऽपि ॥२२॥
त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपु - नाशनेन, त्रातं त्वया समर - मूर्धनि तेऽपि हत्वा ।
नीता दिवं रिपु - गणा भयमप्यपास्तमस्माकमुन्मद - सुरारि - भवं नमस्ते ॥२३॥
ब्रह्मा सृजत्यवति विष्णुरिदं महेशः, शक्त्या तवैव हरते ननु चान्त - काले ।
ईशा न तेऽपि च भवन्ति त्वया विहीनास्तस्मात् त्वमेव जगतः स्थिति - नाश - कर्त्री ॥२४॥
कीर्तिर्मतिः स्मृति - गती करुणा दया त्वं, श्रद्धा धृतिश्च वसुधा कमलालया च ।
पुष्टिः कलाऽथ विजया गिरिजा जया त्वं, तुष्टिः प्रभा त्वमसि बुद्धिरुमा रमा च ॥२५॥
विद्या क्षमा जगति कापिरपीह मेधा, सर्वं त्वमेव विदिता भुवन - त्रयेऽस्मिन् ।
आभिर्विना तव तु शक्तिभिराशु कर्तुं, को वा क्षमः सकल - लोक - निवास - भूमौ ॥२६॥
त्वं धारणा ननु न चेदसि कूर्म - नागौ, धर्तुं क्षमौ कथमिलामपि तौ भवेताम् ।
पृथ्वी न चेत् त्वमसि वा गगने कथं स्थास्यत्येतदम्ब ! निखिलं बहु - भार - युक्तम् ॥२७॥
ये वा स्तुवन्ति मनुजा अमरान् विमूढा, माया - गुणैस्तव चतुर्मुख - विष्णु - रुद्रान् ।
शुभ्रांशु - वह्नि-यम - वायु - गणेश - मुख्यान्, किं त्वामृते जननि ! ते प्रभवन्ति कार्ये ॥२८॥

ये जुह्वन्ति प्रवितवेऽल्प - धियोऽम्ब ! यज्ञे, वह्नौ सुरान् समधिकृत्य हविः समिद्धम् ।
स्वाहा न चेत् त्वमसि ते कथमापुरद्धा, त्वामेव किं नहि यजन्ति सतो हि मूढ़ाः ॥२९॥
भोग - प्रदाऽसि भवतीह चराचराणां, स्वांशैर्ददासि खलु जीवनमेव नित्यम् ।
स्वोयान् सुरान् जननि ! पोषयसीह यद्वत्, तद्वदपरानपि च पालयसि सु - हेतोः ॥३०॥
चित्तं त्वमीयदसुभी रहिता न सन्ति, त्वच्चित्तितेन दनुजाः प्रथित - प्रभावाः ।
येषां कृते जननि ! देह - निबन्धनं ते, क्रीडा - रसस्तव न चान्य-तरोऽत्र हेतुः ॥३१॥
विद्या त्वमेव सुखदाऽसुरदाऽप्यविद्या, मातस्त्वमेव जननार्ति - हरा नराणाम् ।
मोक्षार्थिभिस्तु कलिता किल मन्दधीभि - र्नाराधिता जननि ! भोग - परैस्तथाऽज्ञैः ॥३२॥

ऋषिरुवाच

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः । अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥३३॥
भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता । प्राह प्रसाद-सुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान् ॥३४॥

देव्युवाच

व्रियतां त्रिदशाः ! सर्वे यदस्मत्तोऽभि - वाञ्छितम् । तत्तु ददाम्यहम् प्रीत्या स्तवैरेभिः सुपूजिता ॥३५॥

देवा ऊचुः

भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते । यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः ॥३६॥

यदि चापि वरो देयस्त्वयाऽस्माकं महेश्वरि ! (संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथा परमापदः)
यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ।।३७।।

तस्य वित्तर्धि-विभवैर्धन - दारादि - सम्पदाम् । वृद्धयेऽस्मत्-प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाऽम्बिके ।।३८।।

ऋषिरुवाच

एवं प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः । तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवाऽन्तर्हिता नृप ।।३९।।

एतत्तु कथितं भूप ! सम्भूता सा यथा पुरा । देवी देव-शरीरेभ्यो जगत्-त्रय-हितैषिणी ।।४०।।

पुनश्च गौरी - देहात् सा समुद्भूता यथाऽभवत् । नाशाय दुष्ट-दैत्यानां तथा शुम्भ-निशुम्भयोः ।।४१।।

रक्षणाय च लोकानां देवानामुप-कारिणी । तच्छृणुष्व मयाख्यातं यथा-वत् कथयामि ते ।। ह्रीं ॐ ।।४२।।

।। ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) । जगदम्बार्पणमस्तु ।।
उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ें ।

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इसमें विशेष मिश्री व पायस ही हैं । सबको स्त्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा । अम्बेऽम्बिकेऽम्बालिके नमानपति कश्चन । ससस्त्यश्चक सुभद्रिकां कांपीलवासिनी स्वाहा ।।

इतना बोलकर पान पर रखा पदार्थ अग्नि में छोड़कर बाद में स्त्रुवे से घी छोड़ते हुये आगे लिखे मन्त्र को बोले—

ॐ घृतं घृत - पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आदिशोव्विदिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।।

तान्त्रिक आहुति

ह्रीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै, सपरिवारायै सवाहनायै श्रीमहालक्ष्म्यै सप्त - विंशति-वर्णात्मिकायै लक्ष्मी-बीजाधिष्ठात्र्यै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ।।

सामान सब ऊपर लिखा है ।

महा - सरस्वती - सूक्तम्

ॐ अस्य श्री त्रिमूर्ति - महा - सरस्वती - सूक्तस्य ब्रह्मा ऋषिः । त्रिष्टुबनुष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि । श्रीमहासरस्वती देवता श्रीमहा - सरस्वती - प्रसाद - सिद्ध्यर्थे सप्तशती - पाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः ।

षडंग-न्यासः

ॐ क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ क्लीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ क्लूं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ क्लैं अनामिकाभ्यां नमः । ॐ क्लौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ क्लः करतल - करपृष्ठाभ्यां नमः । एवं हृदयादि ।

अथ ध्यानम्

गौरी - देह - समुद्भवां शशि - धरां क्लीं सात्विकी सत्प्रिया, वाणेक्षुं मुसलं त्रिशूल - वरदं शंखं च घण्टां करैः । विभ्राणां हल - कार्मुकं सुविलसत् - सौन्दर्य - रूपां परां, पद्माभ्यां द्वि-निशुम्भ-शुम्भ-मथिनीं वन्दे महा-शारदाम् ।।

ॐ ब्रह्मोवाच

जन्तोरपश्चिम - तनोः सति कर्म - साम्ये, निःशेष - पाश - पटलच्छिदुरानिमेषाः ।
कल्याण - देशिक - कटाक्ष - समाश्रयेण, कारुण्यतो भवसि शाम्भवि ! देशिकेष्टे ।।१।।

मुक्तादि - भूषण - वती नव - विद्रुमाभा, यच्चेतसि स्फुरसि तारकितेव सन्ध्या ।
एकः स एव भुवन - त्रय - सुन्दरीणां, कन्दर्पतां व्रजति पञ्च - शरैर्विनाऽपि ॥२॥
ये भावयन्ति मति - दाहृभिदंशु - जालैराप्यायमान - भुवनाममृतेश्वरीं त्वाम् ।
ते लंघयन्ति ननु मातरलंघनीयां, ब्रह्मादिभिः सुरवरैरपि काल - कक्षाम् ॥३॥
यां स्फाटिकाक्ष-गुण - पुस्तक-कण्ठिकाभ्यां, व्याख्या - समुद्यत - करां शरदिन्दु-शुभ्राम् ।
पद्मासने च हृदये भवतीमुपास्ते, मातः ! स विश्व - कवि - तार्किक - चक्रवर्ती ॥४॥
बर्हावतंस - युत - बन्धुर - केश - पाशां, गुञ्जावलीं कृत - घन-स्तन - हार - शोभाम् ।
श्यामां प्रवाल - वदनां सुकुमार - हस्तां, त्वामेव नौमि शबरीं शबरस्य नाथम् ॥५॥
अर्धेन किं नव - लता - ललितेन मुग्धे, क्रीतं विभोः पुरुष - धर्ममिदं त्वयेति ।
आली - जनस्य परिहास - वचांसि मन्ये, मन्द - स्मितेन तव देवि ! जड़ी - भवन्ति ॥६॥
ब्रह्माण्ड - बुदबुद - कदम्बक - संकुलो मे, मायोदधिर्विविध - दुःख - तरंग - मालः ।
आश्चर्यमम्ब ! झटिति प्रलयं प्रयाति, त्वद् - ध्यान - सन्तति - महा - वडवा-मुखाग्नौ ॥७॥
दाक्षायणीति कुटिलेति गुहाननेति, कात्यायनीति कमलेति कलावतीति ।
एषा सती भगवती परमार्थतोऽपि, संदृश्यते बहु - विधाननुवर्तकीव ॥८॥
संकोचमिच्छसि यदा गिरिजे ! तदानीं, वाक् - तर्कयोस्त्वमसि भूमिरनाम - रूपा ।
यद्वा विकासमुपयसि तदा तदानीं, त्वन्नाम - रूप - गणना मुखरा भवन्ति ॥९॥

भोगाय देवि ! भवती कृतिनः प्रणामा, भू - किंकरी - कृत - सरोज - गृहां सहस्राम् ।
चिन्तामणि - प्रचय - कल्पित एव शैले, कल्पद्रुमोपवन एव चिरं चरन्तु ॥१०॥
हन्तुस्त्वमेव भवसि त्वदधीनमीशे, संसार - तापमखिलं दयया पशूनाम् ।
वैकर्तनी - किरण - संहतिरेव दक्षो, धर्मं निजं शमयितुं निजयैव दृष्ट्या ॥११॥
शक्तिः शरीरमधि - दैवतमन्तरात्म - ज्ञानं क्रिया - करणमासन - जालमिच्छा ।
ऐश्वर्यमायतनमावरणादि च त्वं, किं लज्जसे यदपि देवि ! शशांक - मौले ॥१२॥
भूमौ निरुक्तमपि तापयसि प्रतिष्ठा, विद्यानले मरुति जातु तडिल्लतेव ।
भूयोऽपि तत्र विशसि ध्रुव - मण्डलेन्दु - निःस्यन्दमान - परमामृत - तोय - रूपा ॥१३॥
भूमौ निवृत्तिरुदिता पयसि प्रतिष्ठा, विद्याऽनले मरुति शान्तिरतीव - कान्तिः ।
व्योम्नीति याः किल कलाः कलयन्ति विश्वं, तासां हि दूरतरमम्ब ! पदं त्वदीयम् ॥१४॥
आनन्द - लक्षणमनाहत - नाभि - देशे, नादात्मना परिणतं तव रूपमीशे !
प्रत्यङ् - मुखेन मनसा परिचीयमानं, सिञ्चन्ति नेत्र - सलिलैः पुलकैश्च धन्याः ॥१५॥
त्वं चन्द्रिका शशिनि तिग्म - तनौ रुचिस्त्वं, संचेतनाऽसि पुरुषे पवने चलत्वम् ।
त्वं साधुताऽसि सलिले शिखिनि त्वमूष्मा, निःसारमेवमखिलं त्वदृते यदि स्यात् ॥१६॥
ज्योतींषि यत्र विचरन्ति यदन्तरिक्षे, सूते ययापि यदहिर्धरणीं च धत्ते ।
यद्वाति वायुरनलो यदुदर्चिषस्ते, तत् सर्वमम्ब ! तव केवलमाज्ञयैव ॥१७॥

यावत् पदं पद - सरोज - युगं त्वदीयं, नाङ्गी-करोति हृदयेषु जगच्छरण्ये ।
तावद् विकीर्णं - जटिलाकुलिताप्रशस्तास्तर्क - ग्रहाः समयिनां प्रलयं भजन्ति ॥१८॥
यद् - देव - यान - पितृ-यान - विहारमेकं, कृत्वा मनः - करण - मण्डल - सार्वभौमम् ।
ज्ञानेन वेह तव कारण - पञ्चकस्य, पर्वाणि पार्वति ! न यान्ति निजागमत्वम् ॥१९॥
स्थूलासु मूर्तिषु मही - प्रमुखासु मूर्तेः, कस्याश्चनाऽपि तव वैभवमम्ब ! यस्याः ।
प्रत्यङ्गिराऽपि न शक्यत एव वक्तुं, साऽपि स्तुताऽखिल - मयेति तितिक्षितव्यम् ॥२०॥
कल्पोप - संहरण - केलिषु पण्डितानि, चण्डानि खण्ड - परशोरपि ताण्डवानि ।
आलोकनेन तव कोमलितानि मातः, लास्यात्मना परिणमन्ति जगद् - विभूत्यै ॥२१॥
कालाग्नि - कोटि - रुचिमम्ब ! षडध्व - शुद्धां, बाला - वनेषु भवतीममृतौघ - वृष्टिम् ।
श्यामा - घन - स्तन - तटां सकली - कृतौ च, ध्यायन्त एव भवतीं गुरवो भवन्ति ॥२२॥
विद्यां परां कतिचिदम्बु - रसं च केचिदानन्दमेव कतिचित् कतिचिच्च मायाम् ।
त्वां विश्वमाहुरपरे वयमात्त - नामाः, साक्षादपार - करुणां गुरु - मूर्तिमेव ॥२३॥
कुवलय - दल-नीलं बन्धु - सुस्निग्ध - केशं, पृथुतर - कुच-सारं कान्ति-कान्तावनग्नम् ।
किमिव बहुभिरुक्तैस्तत् - स्वरूपं परं नः, सकल-भुवन-मातः ! सन्ततं सन्निधत्ते ॥२४॥
कारुण्य - कोमल - कटाक्ष - विराजमाने, संसार - तारिणि ! शिवे ! सकलाघ-हन्त्रि !
त्वां देव - वन्दित - पदाममरादि - भूतां, वागीश्वरीमहमनन्त - गुणां श्रयामि ॥२५॥

कलातीतां कला-मालां सारां सार-निषेविताम् । अमोघां सह-मोघां च व्रजामि शरणं गिराम् ॥२६॥
धात्रीं विधात्रीं कल्याणीं धरां धारण-सुक्षमाम् । अवियोनिममनिन्द्यां च वाचं त्वां शरणं व्रजे ॥२७॥
अजां पुराणीममृताममद्वितीयां सनातनीम् । वरां वरेण्यां वरदां वर-श्रेष्ठां वर - प्रियाम् ॥२८॥
शुभां सरस्वतीं देवीं सच्चिदानन्द - रूपिणीम् । शरणागत - वात्सल्ये त्वामहं शरणं व्रजे ॥२९॥

अजां पुराणीममरां सनातनीम् चतुर्भुजां पुस्तक-धारिणीं त्वाम् । वराभयाभ्यामनुशोभि-हस्तां नमामि त्वां जाड्य-जटा-विनाशिनीम् ॥३०॥ सरस्वतीं त्वामनुनौमि वाचो वर-प्रदां हंस-तराधिरूढाम् । मुक्ता-मणि-द्योतित-कण्ठ-हारां भाग्येक-लभ्यां परमां पवित्राम् ॥३१॥ श्रीकण्ठ-शक्ति-त्रय-शोभमानां दशार-तूर्येण कृतानुरूपाम् । पश्चारवास्ते भूत-भू-ग्रहारां सरस्वतीं त्वां प्रणमामि देवीम् ॥३२॥ फलाढ्य-मन्त्राप्यधि-कोटि-वासां विहार-यन्त्रं विमलैक-शोभाम् । स्वच्छावदातां स्फटिकानुरूपां सरस्वतीं त्वां प्रणमामि मातः ॥३३॥ वाक्-काय-कार्यैः परमैः पवित्रैरमा-रमा-ह्री-वरदान-दक्षैः । वीजैरमीभिः कपि-बीज-युक्तैः क्लीं-युग्म-मिश्रैरिति मन्त्र-राजः ॥३४॥ एकेन चैकेन च युग्मकेन द्वाभ्यामथैकेन तथैव शेषैः । कराङ्ग-लिप्तैः परमोत्तमोऽयं निहन्ति पापानि च साधकानाम् ॥३५॥ हठेन वै शृङ्खलया च श्रेण्या विधातृ-पत्न्या च तथैव वाचा । श्रीः-कीर्ति-ब्राह्मचादिभिः शोभया च न्यासैरमीभिः पतितोऽपि शंभुः ॥३६॥ द्रव्येण होमात् सकलार्थ-सिद्धिः सुकिंशुकैर्वागपि सिद्धिमृच्छेत् । तैः साकमाज्येन रमा-निवास सुपाय-सेनाऽपि च वेदासिद्धिः ॥३७॥ न चाम्ब ! ते महिमानं वदामि सरस्वति ! प्रथिते लोक-मध्ये । जानन्ति किं बुदबुदा-भूमि-तोये जडा वयं ब्रह्म-हरीश-मुख्याः ॥३८॥ तवैव वाचा वयं संवदामो जिघ्राम शक्त्या च तवैव जीवाः । पश्याम ते त्वां हि मातर्महेशि ! स्पृशाम साक्षात् त्वयि संयुताद्यम् ॥३९॥ स्वाद विदामस्तव शक्ति-योगाद्

गृह्णीमहे तव शक्त्या महेशि ! गच्छामहे तव शक्तेः प्रभावादानन्द-युक्तास्तव सन्निवेशात् ।।४०।। आत्मा मन-स्त्वमेवासि देहस्त्वमेव वै चेन्द्रिय-पञ्च-तत्त्वम् । त्वमेव वै विषयाः शब्द-मुख्या परावरेषां परमा त्वमेव ।।४१।। रविश्च ते चन्द्रमाश्च ते ताराश्च ते भूमिश्च जलं च ते तेजश्च । ते वायुश्च ते व्योम च ते शब्दश्च ते स्पर्शश्च ते रूपं च ते ।।४२।। रसश्च ते गन्धश्च ते प्राणश्च तेऽपानश्च ते व्यानश्च ते । उदानश्च ते समानश्च ते नागश्च ते कूर्मश्च ते कृकलश्च ।।४३।। ते देवदत्तश्च ते धनञ्जयश्च ते भूतात्मा च ते ज्ञानात्मा च । ते सर्वात्मा च ते मम चित्तं त्वय्येव विनिवेश्यताम् ।।४४।। यदा न चाण्डे भुवनानि जीवा अहं न विष्णुर्न च पार्वतीशः । न चेश्वरो नापि सदा-शिवश्च त्वमेव चासीदिति वाम-विद्या ।।४५।। कालस्त्वमेवासि जगत्-त्रयाणां स्वभाव-वीर्यादिकं च त्वमेव । त्वमेव विश्वं परमात्म-शक्तिर्नमामि ते पाद-पीठं सरस्वति ।।४६।। त्वं वेद-वाणी निखिलाश्च वेदास्त्वं शब्द - शक्तिश्च तथार्थ-शक्तिः । त्वं ब्रह्म-विद्याऽपि परा-वरेशि ! त्वां ब्रह्म-शक्तिं शरणं प्रपद्ये ।।४७।।

मार्कण्डेय उवाच

एवं स्तुत्यवसाने तु प्रादुर्भूता कृपा-मयी । महा-सरस्वती देवी प्रोवाच वचनं शुभम् ।।४८।।

श्रीदेव्युवाच

वरं वरय भद्रं ते कमलोद्भव ! सुव्रत ! स्तुत्याऽनया मनोदेव सन्तोषं मम चागमत् ।।४९।।

ब्रह्मोवाच

यदि देवि ! प्रसन्नाऽसि वरदाऽसि वरेश्वरि ! त्वद्-भक्तिमेव मे देहि भव-बन्ध - विमोचकम् ।।५०।।

श्रीदेव्युवाच

एवमस्तु महाभाग ! कमलोद्भवमारिषु । मत् - प्रसादात् तव सदा निर्मला बुद्धिरस्तु ते ॥५१॥
महा-सरस्वती - सूक्तं यत् त्वया भाषितं विधे ! तस्मै तत् - प्रतापो मे निशामय वचो मम ॥५२॥
विना सरस्वती - सूक्तं देवीं यश्चण्डिकां पठेत् । ब्रह्मघ्नानां गतिर्याति शापमाप्नोति दारुणम् ॥५३॥
निष्फलस्तस्य पाठोऽस्तु मम वाक्य-नियन्त्रणात् । अनेन पठिता देवी धर्मं - मोक्षार्थं - कामदा ॥५४॥

ऋषिरुवाच

उक्त्वा त्वन्तर्धिमापेदे महा - पूर्वा सरस्वती । वरेण छन्दयित्वाजं लोक - कल्याण - भाषिणी ॥५५॥

फल-श्रुति

सूक्तं तवेदं सुभगं सरस्वति ! प्रातश्च मध्याह्न-काले च सायम् । पठन्ति ये श्रद्धया युक्त-चित्तास्ते भोग-मोक्षं सहसा लभन्ते ॥५६॥ न ते कु - योनिं न दरिद्रतां च नात्मादि-तापं न च संलभन्ते । त एव धन्याश्च त एव पूज्याः सर्वत्र मान्यं भवतीह तेषाम् ॥५७॥ इदं पुराणं विरजं सुधा-मयं सूत्रत्व-भूतं जगतां त्रयाणाम् । ते प्राप्नुवन्ति प्रकट - प्रभावास्त्वां सर्व-योनिं शरणं प्रपद्ये ॥५८॥

॥ जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणोक्तं श्रीमहा-सरस्वती-सूक्तम् ॥

पंचमः

उत्तम-चरितः

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीउत्तम-चरितस्य रुद्र ऋषिः। महा-सरस्वतो देवता। अनुष्टुप् छन्दः। भीमा शक्तिः। भ्रामरी बीजम्। सूर्यस्तत्त्वम्। सामवेदः स्वरूपम्। महा-सरस्वती-प्रीत्यर्थे उत्तम-चरित-पाठे विनियोगः॥

(७) उत्तराम्नायात्मिका षड्-वर्णोऽयं छिन्नमस्ता—ध्यानम्

अस्या ध्यानमहं वक्ष्ये शृणुष्व कमलानने !

प्रत्यालीढ़ - पदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरः कर्त्रिकां, दिग्वस्त्रां स्व-कबन्ध - शोणित - सुधा - धारां पिबन्तीं मुदा॥
नागाबद्ध - शिरोमणि - त्रिनयनां हृद्युत्पलालंकृतां, रत्यासक्त - मनोभवोपरि - दृढ़ां ध्यायेञ्जपा - सन्निभाम्॥
दक्षे चाति - सिता विमुक्त - चिकुरा कर्त्रि तथा खर्परं, हस्ताभ्यां दधतीं रजो-गुण - भवा नाम्नाऽपि सा वर्णिनी॥
देव्याश्छिन्न - कबन्धनः पतदसृग् - धारां पिबन्ती मुदा, नागाबद्ध शिरोमणिर्मनु - विदा ध्येया तथा सा सुरैः॥
वामे कृष्ण - तनुस्तथैव दधती खड्गं तथा खर्परं, प्रत्यालीढ़ - पदा कबन्ध - विलगद् - रक्तं पिबन्ती मुदा॥
सैषा या प्रलये समस्त - भुवनं भोक्तुं क्षमा तामसी, शक्तिः साऽपि परात्परा भगवती नाम्ना परा डाकिनी॥
उत्तरां छिन्न - मस्तां च षड् - वर्णमनु - रूपिणीम्, मोक्षदां सिद्धि - दात्रीं च वायव्याम्नायगां शुभाम्॥

(८) उत्तराम्नायात्मिका चतुर्दशाक्षरा विपरीत-प्रत्यङ्गिरा भद्र-काली ध्यानम्—

ध्यातव्येयं सदा देवी भद्रकाली भयावहा। क्षुत्क्षामा कोटराक्षी च नाऽहं तृप्तेति वादिनी ॥
मसि-मुखी मुक्त-केशी जगद् - ग्रसन-लालसा। जम्बू - फलाभ-दशना लोल - जिह्वा भयंकरी ॥
शूलं कपालं च सृणिं ज्वलत्-पाशं च बिभ्रती। अशेषं कालिका-तन्त्रे यत्-प्रोक्तं तदिहापि च ॥
जप-न्यास - प्रयोगाद्यं यो विशेषः स उच्यते। आराध्य प्रजपेन्मन्त्रं नित्यमष्टोत्तर - शतम् ॥
रिष्ट - माला विधातव्या जपार्थं सिद्धिमिच्छता। इयं देवी महा - देवी शत्रु - निग्रह - कारिणी ॥
यथेष्ट-चेष्टया चिन्त्या धर्म - कामार्थ - सिद्धिदा। अति - रौद्रा महा (अन्नेत्रः २) दंष्ट्रा भ्रशं दीर्घा कृशोदरी ॥
सुवृत्त - नयना शूरा दीर्घ - घोणा मदातुरा। स्निग्ध - गम्भीर - निर्घोषा नील - जीमूत - सन्निभा।
भृगुद्यघट - संदीप्ता महा - रदन - भीषणा। दंष्ट्रोष्ठ - कोप - ताम्राक्षी रक्त - दीर्घ - शिरोरुहा ॥
त्रिशूल - व्यग्र-दोर्दण्डा नर-कीट - पलाशिनी। अति - रक्ताम्बरा देवी - रक्त - मांसासव - प्रिया ॥
शिरो-माला-भूषिताङ्गी पिबन्ती शोणितासवम्। नृत्यन्ती च हसन्ती च पिशाच - गण - सेविता ॥
पिशाच - स्कन्धमारुह्य भ्रमन्ती वसुधा-तलम्। शंकरस्य मुखोत्पन्ना योगिनी योग - वल्लभा ॥
इत्थं भूता भद्र - काली मातृभिः परिवारिता। भौतिकैश्वर्य - दात्री चाथोत्तराम्नायात्मिका ॥
विपरीत-प्रत्यङ्गिरा भद्र-काली वायव्यात्मिका।

पश्चिमाम्नायात्मिका पञ्च-दशाक्षरी चण्ड-मातंगी-ध्यानम्

कल्प - वृक्ष - वनान्तस्थे रत्न - सिंहासने शुभे। रक्त - पद्मासने संस्था दूर्वा - श्यामां त्रिलोचनाम् ॥

नव - यौवन - सम्पन्नां मदोन्मत्तां हसन्मुखीम् । रत्न - भूषण - भूषाङ्गीं वीणा-वादन - तत्पराम् ॥
द्वि - भुजां चन्द्र-मुकुटां चण्ड - मातङ्गिनीं भजे । पश्चिमाम्नायगां चैव वायव्यात्मगां तथा ॥
ध्यायेच्च चण्ड-मातङ्गीं पंच-दशीं च विश्रुताम् ।

वायव्याम्नायात्मिका नवाक्षरा महासरस्वती-ध्यानम्

घण्टा-शूल - हलानि शङ्ख - मुशले चक्रं धनुः सायकम् । हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त - विलसच्छीतांशु - तुल्य-प्रभाम् ॥
गौरी - देह - समुद्भवां त्रि - जगतामाधार - भूतां महा-पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादि - दैत्यार्दिनीम् ॥
नवाक्षरां सप्तशती - वर्णितां महा - सरस्वतीम् । वायव्याम्नाय - मार्गेण पूजयेत् साधकोत्तमः ॥
वायव्याम्नाय - रूपां च महा - पूर्वां सरस्वतीम् । नवार्णं - विधां वै ध्यायेद् वर्णितं चोत्तमे यथा ॥

अथ चण्डिका-ध्यानम् (कालिका-पुराणे)

धम्मिल - संयत - कचा विधोश्चाधो - मुखां कलाम् । केशान्ते तिलकस्योर्ध्वे दधती सुमनोहरा ॥
मणि - कुण्डल - संघृष्ट - गण्डा मुकुट - मण्डिता । सज्ज्योतिः कर्ण - पूराभ्यां कर्णवापूर्य - संगता ॥
सुवर्ण - मणि - माणिक्य - नाग - हार - विराजिता । सदा सुगन्धिभिः पद्मैरम्लानैरति - सुन्दरी ॥
मालां विभर्ति ग्रीवायां रत्न - केयूर - धारिणी । मृणालायत - वृत्तैस्तु बाहुभिः कोमलैः शुभैः ॥
राजन्ती कञ्चुकोपेता पीनोन्नत - पयोधरा । क्षीण-मध्या पीत-वस्त्रा त्रिवली-मध्य-भूषिता ॥
शूलं वज्रं च वाणं च खड्गं शक्ति तथैव च । ऊर्ध्वादि - क्रमतो देवी दधती वाम-पाणिभिः ॥
सिंहस्योपरि तिष्ठन्ती व्याघ्र - चर्मणी कौशिकी । विभ्रती रूपमतुलं स - सुरासुर - मोहनम् ॥

पश्चिमाम्नायात्मिका नवाक्षरा मोहिनी-मातङ्गी-सरस्वती-ध्यानम्

दिव्याम्बरां शुक - श्यामां वीणा - वादन - तत्पराम् । गीयमानां सदानन्दां मातङ्गीं मोहिनीं भजे ॥

पश्चिमाम्नाय - रूपां हि नैऋत्याम्नाय - गामिनीम् ।

मोहिनीं चैव मातङ्गीं सरस्वतीमर्चयेत् सदा । नवार्णां दिव्य-शक्तिं च ध्यायेत् मुक्ति-प्रदां सदा ॥

दक्षिणाम्नायात्मिका द्वादशाक्षरा तारा-ध्यानम्

श्वेताम्बरं चन्द्र - कान्ति चन्द्रार्ध - कृत - शेखराम् । कर्त्तरीं च कपालं च कराभ्यां दधतीं भजेत् ॥

नानालंकार - शोभाढ्यां त्रीक्षणां पद्म - संस्थिताम् ।

जप - पूजादिकं सर्वमस्याः पूर्ववदाचरेत् । मधु - युक् - परमान्नेन होमाद् विद्या - निधिर्भवेत् ॥

रक्तां वश्ये स्वर्ण - वर्णां स्तम्भने मारणेऽसिताम् । उच्चाटने धूम्र-वर्णां शान्तौ श्वेतां स्मरेदिमाम् ॥

दक्षिणाम्नायगां चैव नैऋत्याम्नाय - गामिनीम् । तारां ध्यायेत् सदा भक्त्या मुक्तिदां द्वादशाक्षराम् ॥

नैऋत्याम्नायात्मिका नवाक्षरा चामुण्डा भद्रकाली-ध्यानम्

नीलोत्पल - दल - श्यामा चतुर्बाहु - समन्विता । खट्वांगं चन्द्र - हासं च बिभ्रती दक्षिणे करे ॥१॥

वामे चर्म तथा पाशमूर्ध्वाधो - भागतः क्रमात् । दधती मुण्ड-मालां च व्याघ्र-चर्म-वराम्बरा ॥२॥

कृशांगी दीर्घ-दंष्ट्रा च अति - दीर्घाति - भीषणा । लोल-जिह्वा निम्न-रक्त-नयना भीम-नादिनी ॥३॥

कबन्ध - वाहनासीना विस्तारि - श्रवणानना । एषा काली समाख्याता चामुण्डेति च कथ्यते ॥४॥

नैऋत्याम्नाय - रूपां हि नवार्णं - विद्यां वै यजेत् । चामुण्डा भद्रकाली च पूजयेच्चैव सिद्धिदाम् ॥५॥

चामुण्डा चण्डिका चैव प्रोक्ता क्वचन वै बुधैः ।

उपाम्नायेश्वरी पश्चिमाम्नायात्मिका त्रिशक्ति-चामुण्डा-ध्यानम्

ध्यायेद् देवीं श्रीचामुण्डां निर्मांसां घोर - दंष्ट्रिकाम् । कपालाभरणान् संघ्रीं शवस्थां चोर्ध्वं - केशिनीम् ॥
कर्त्रिकां नर - मुण्डं च धृत्वा तदन्त्र - भोजिनीम् । चषके रुधिरं धृत्वा पिबन्तीं ज्वलन - प्रभाम् ॥
श्मशान - निलयां भीमां शिवा - राविन - मध्यगाम् । नवार्णव - स्वरूपां श्रीभवानीं त्रिपुरात्मिकाम् ॥
श्मशान - निलयां भीमां शिवाष्वीत - मध्यगाम् । नव - दुर्गा - समायुक्तां दक्ष - यज्ञ - विनाशिनीम् ॥
उपाम्नायेश्वरीं चैव पश्चिमाम्नायगां तथा । त्रिशक्ति - चामुण्डां चैव नव - वर्णात्मिकां शुभाम् ॥

ॐ क्लीं ऋषिरुवाच

पुरा शुम्भ - निशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शची - पतेः । त्रैलोक्यं यज्ञ - भागाश्च हृता मद-बलाश्रयात् ॥१॥
तावेव सूर्यतां तद् - वदधिकारं तथैन्दवम् । कौबेरमथ याम्यं च चक्राते वरुणस्य च ॥२॥
तावेव पवनर्द्धिं च चक्रतुर्वह्नि - कर्म च । ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्ट - राज्याः पराजिताः ॥३॥
हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः । महासुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम् ॥४॥
तयाऽस्माकं वरो दत्तो यथाऽऽपत्सु स्मृताऽखिलाः । भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात् परमापदः ॥५॥
एवं कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम् । जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णु - मायां प्रतुष्टुवुः ॥६॥

देवा ऊचुः

नमो देव्यै महा - देव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥७॥
रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्य्यै धात्र्यै नमो नमः । ज्योत्स्नायै चेन्दु - रूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥८॥

कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः । नैऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥९॥
दुर्गायै दुर्ग - पारायै सारायै सर्व - कारिण्यै । ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥१०॥
अति सौम्याति - रौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः । नमो जगत् - प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः ॥११॥
या देवी सर्व - भूतेषु विष्णु - मायेति शब्दिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१२॥
या देवी सर्व - भूतेषु चेतनेत्यभिधीयते । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१३॥
या देवी सर्व - भूतेषु बुद्धि - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१४॥
या देवी सर्व - भूतेषु निद्रा - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१५॥
या देवी सर्व - भूतेषु सुधा - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१६॥
या देवी सर्व - भूतेषु च्छाया - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१७॥
या देवी सर्व-भूतेषु शक्ति - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१८॥
या देवी सर्व - भूतेषु तृष्णा - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१९॥
या देवी सर्व - भूतेषु क्षान्ति - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२०॥
या देवी सर्व - भूतेषु जाति - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२१॥
या देवी सर्व - भूतेषु लज्जा - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२२॥
या देवी सर्व - भूतेषु शान्ति - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२३॥

या देवी सर्व - भूतेषु श्रद्धा - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२४॥

या देवी सर्व - भूतेषु कान्ति - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२५॥
या देवी सर्व - भूतेषु लक्ष्मी - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२६॥
या देवी सर्व - भूतेषु धृति - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२७॥
या देवी सर्व - भूतेषु वृत्ति - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२८॥
या देवी सर्व - भूतेषु स्मृति - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२९॥
या देवी सर्व - भूतेषु दया - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥३०॥
या देवी सर्व - भूतेषु तुष्टि - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥३१॥
या देवी सर्व - भूतेषु पुष्टि - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥३२॥
या देवी सर्व - भूतेषु मातृ - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥३३॥
या देवी सर्व - भूतेषु भ्रान्ति - रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥३४॥
इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या । भूतेषु सततं तस्यै व्याप्ति - देव्यै नमो नमः ॥३५॥
चिति-रूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत् । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥३६॥

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्ट-संश्रयात् तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता । करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्य-भिहन्तु चापदः ॥३७॥ या साम्प्रतं चोद्धत-दैत्य-तापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते । या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्ति-विनम्र-मूर्तिभिः ॥३८॥

ऋषिरुवाच

एवं स्तवादि - युक्तानां देवानां तत्र पार्वती । स्नातुमभ्याययौ तोये जाह्नव्या नृप - नन्दन ॥३९॥

साऽब्रवीत् तान् सुरान् सुभ्रुर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का ? शरीर - कोशतश्चास्याः समुद्भूताऽब्रवीच्छिवा ॥४०॥

देव्युवाच

स्तोत्रं ममैतत् क्रियते शुम्भ - दैत्य - निराकृतैः । देवैः समेतैः समरे निशुम्भेन पराजितैः ॥४१॥

ऋषिरुवाच

शरीर - कोशाद् यत्तस्याः पार्वत्या निःसृताम्बिका । श्रीकौशिकी समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते ॥४२॥

तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाऽभूत् साऽपि पार्वती । क्रीं कालिका समाख्याता हिमाचल - कृताश्रया ॥४३॥

ततोऽम्बिका परं रूपं विभ्राणां सुमनोहरम् । ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुम्भ - निशुम्भयोः ॥४४॥

चण्ड-मुण्डौ उवाच

ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा । काप्यास्ते स्त्री महाराज ! भासयन्ती हिमाचलम् ॥४५॥

नैव तादृक् क्वचिद् रूपं दृष्टं केनचिदुत्तमम् । ज्ञायतां काऽप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर ॥४६॥

स्त्री-रत्नमति - चार्वंगी द्योतयन्ती दिशं त्विषा । सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र ! तां भवान् द्रष्टुमर्हति ॥४७॥

यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो ! त्रैलोक्ये तु समस्तानि साम्प्रतं भान्ति ते गृहे ॥४८॥

ऐरावतः समानीतो गज - रत्नं पुरन्दरात् । पारिजात - तरुश्चायं तथैवोच्चैःश्रवा हयः ॥४९॥

विमानं हंस - संयुक्तमेतत् तिष्ठति तेऽङ्गणे । रत्न - भूतमिहानीतं यदासीद् वेधसोऽद्भुतम् ॥५०॥

निधिरेष महा - पद्मः समानीतो धनेश्वरात् । किञ्जल्किनीं ददौ चाब्धिर्मालामम्लान-पंकजाम् ।।५१।।
छत्रं ते वारुणं गेहे काञ्चन - स्रावि तिष्ठति । तथाऽयं स्यन्दन-वरो यः पुराऽऽसीत् प्रजापतेः ।।५२।।
मृत्योरुत्क्रान्तिदा नाम शक्तिरीश ! त्वया हृता । पाशः सलिल - राजस्य भ्रातुस्तव परिग्रहे ।।५३।।
निशुम्भश्चाब्धि-जाताश्च समस्ता रत्न-जातयः । वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्नि - शौचे च वाससी ।।५४।।
एवं दैत्येन्द्र ! रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते । स्त्री-रत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते ।।५५।।

ऋषिरुवाच

निशम्य तु वचः शुम्भः स तदा चण्ड-मुण्डयोः । प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महासुरम् ।।५६।।
एव चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम । यथा चाभ्येऽति सम्प्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु ।।५७।।
स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽति - शोभने । सा देवी तां ततः प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा ।।५८।।

दूत उवाच

देवि ! दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः । दूतोऽहं प्रेषितस्तेन त्वत् - सकाशमिहागतः ।।५९।।
अव्याहताज्ञः सर्वासु यः सदा देव - योनिषु । निर्जिताखिल - दैत्यारिः स यदाह शृणुष्व तत् ।।६०।।
मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः । यज्ञ - भागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक् ।।६१।।
त्रैलोक्ये वर - रत्नानि मम वश्यान्यशेषतः । तथैव गज - रत्नं च हृत्वा देवेन्द्र - वाहनम् ।।६२।।
क्षीरोद - मथनोद्भूतमश्व - रत्नं ममामरैः । उच्चैःश्रव - ससंज्ञं तत् प्रणिपत्य समर्पितम् ।।६३।।
यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च । रत्न - भूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने ।।६४।।

स्त्री-रत्न-भूतां त्वां देवि ! लोके मन्यामहे वयम् । सा त्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्न - भुजो वयम् ॥६५॥
मां वा ममानुजं वापि निशुम्भमुरु - विक्रमम् । भज त्वं चञ्चलापाङ्गि ! रत्न-भूतासि वै यतः ॥६६॥
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते मत् - परिग्रहात् । एतद् बुद्ध्या समालोच्य मत् - परिग्रहतां व्रज ॥६७॥

ऋषिरुवाच

उक्त्वैवं सा तदा देवी गम्भीरान्तः-स्मिता जगौ । दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत् ॥६८॥

देव्युवाच

सत्यमुक्तं त्वया नात्र मिथ्या किञ्चित् त्वयोदितम् । त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भो निशुम्भश्चापि तादृशः ॥६९॥
किं त्वत्र यत्-प्रतिज्ञातं मिथ्या तत्-क्रियते कथम् । श्रूयतामल्प-बुद्धित्वात् प्रतिज्ञा या कृता पुरा ॥७०॥
यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति । यो मे प्रति-बलो लोके स मे भर्ता भविष्यति ॥७१॥
तदाऽऽगच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः । मां जित्वा किं चिरेणाऽत्र पाणिं गृह्णातु मे लघु ॥७२॥

दूत उवाच

अवलिप्ताऽसि मैवं त्वं देवि ! ब्रूहि ममाग्रतः । त्रैलोक्ये कः पुमाँस्तिष्ठेदग्रे शुम्भ-निशुम्भयोः ॥७३॥
अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि । तिष्ठन्ति सम्मुखे देवि ! किं पुनः स्त्री त्वमेकिका ॥७४॥
इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे । शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यसि सम्मुखम् ॥७५॥
सा त्वं गच्छ मयैवोक्ता पार्श्वं शुम्भ - निशुम्भयोः । केशाकर्षण - निर्धूत - गौरवा मा गमिष्यसि ॥७६॥

देव्युवाच

एवमेतद् बली शुम्भो निशुम्भश्चाति - वीर्यवान् । किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा ॥७७॥

स त्वं गच्छ मयोक्तं ते यदेतत् सर्वमादृतः । तदाचक्ष्वासुरेन्द्राय स च युक्तं करोतु तत् ॥७८॥

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सार्वणिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) जगदम्बार्पणमस्तु ॥

उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ ।

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर, १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इसमें विशेष कपूर, पुष्प व ऋतु-फल ही हैं । सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत - पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आदिशो-व्विद्दिशऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

तान्त्रिक आहुति

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै धूम्राक्ष्यै विष्णु-मायादि चतुर्विंशद्देवताभ्यो महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है ।

★★

षष्ठः

ॐ नागाधीश्वर - विष्टरां फणि - फणोत्तंसोरु - रत्नावलीं, भास्वद्-देह-लतां दिवाकर-निभां नेत्र-त्रयोद्भासिताम् ।
माला - कुम्भ - कपाल - नीरज - करां चन्द्रार्धं - चूड़ां परां, सर्वज्ञेश्वर - भैरवांक - निलयां पद्मावतीं चिन्तये ।।

ॐ ऋषिरुवाच

आकर्ण्य तु वचो देव्याः सः दूतोऽमर्ष - पूरितः । समाचष्ट समागम्य दैत्य - राजाय विस्तराद् ।।१।।
तस्य दूतस्य तद्-वाक्यमाकर्ण्यासुर - राट् ततः । स - क्रोधः प्राह दैत्यानामधिपं धूम्र - लोचनम् ।।२।।

शुम्भ उवाच

हे धूम्र - लोचनाशु त्वं स्व - सैन्य-परिवारितः । तामानय बलाद् दुष्टां केशाकर्षण - विह्वलाम् ।।३।।
तत् - परित्राणदः कश्चिद् यदि वोत्तिष्ठतेऽपरः । स हन्तव्योऽमरो वापि यक्षो गन्धर्वं एव वा ।।४।।

ऋषिरुवाच

तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्र - लोचनः । वृतः षष्ट्या सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ ।।५।।
स दृष्ट्वा तां ततो देवीं तुहिनाचल-संस्थिताम् । जगादोच्चैः प्रयाहीति मूलं शुम्भ - निशुम्भयोः ।।६।।

धूम्र-लोचन उवाच

न चेत् प्रीत्याऽद्य भवती मद् - भर्तारमुपैष्यति । ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षण - विह्वलाम् ।।७।।

भगवती पद्मावती

देव्युवाच
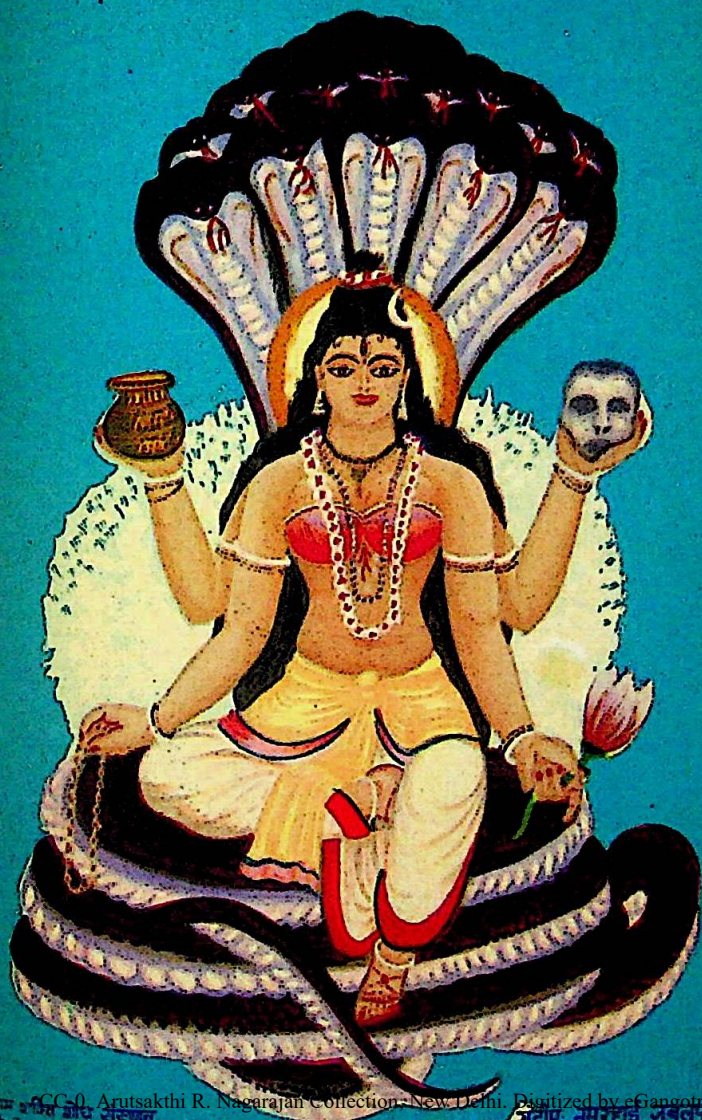
दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान् बल - संवृतः । बलान्नयसि मामेवं ततः किं ते करोम्यहम् ॥८॥

ऋषिरुवाच

अभ्युक्तः सोऽभ्यधावत्तामसुरो धूम्र - लोचनः । हुंकारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः ॥९॥
अथ क्रुद्धं महा - सैन्यमसुराणां तथाम्बिका । ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्ति - परश्वधैः ॥१०॥
ततो धुत - सटः कोपात् कृत्वा नादं सु-भैरवम् । पपातासुर - सेनायां सिंहो देव्या स्व - वाहनः ॥११॥
काँश्चित् कर - प्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान् । आक्रम्य चाधरेणान्यान् स जघान् महासुरान् ॥१२॥
केषाञ्चित् पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी । तथा तल - प्रहारेण शिरांसि कृतवान् पृथक् ॥१३॥
विच्छिन्न - बाहु - शिरसः कृतास्तेन तथापरे । पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धुत - केसरः ॥१४॥
क्षणेन तद् - बलं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना । तेन केसरिणा देव्या वाहनेनाति - कोपिना ॥१५॥
श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्र - लोचनम् । बलं च क्षयितं कृत्स्नं देवी केसरिणा ततः ॥१६॥
चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भः प्रस्फुरिताधरः । आज्ञापयामास च तौ चण्ड - मुण्डौ महासुरौ ॥१७॥

शुम्भ उवाच

हे चण्ड ! हे मुण्ड ! बलैर्बहुभिः परिवारितौ । तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु ॥१८॥
केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वा संशयो युधि । तदाशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ॥१९॥

तस्यां हतायां दुष्टायां सिंहे च विनिपातिते । शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकाम् ।।२०।।

।। ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) । जगदम्बार्पणमस्तु ।।

उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ें ।

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इसमें विशेष भोज-पत्र है । सब चीजें स्त्रु ची में रखकर खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आदिशो-व्विद्दिशऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।।

तान्त्रिक आहुति

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ।

सामान सब ऊपर लिखा है ।

★★

भगवती मांतगी
निगमागम शक्ति शोध संस्थान
सिहोरा जबलपुर
सर्वाधिकारसुरक्षित।
संदीप तमरहाई जबलपुर

सप्तमः

।। ध्यानम् ।।

ॐ ध्यायेयं रत्न-पीठे शुक-कल-पठितं शृण्वतीं श्यामलाङ्गीं, न्यस्तैकांघ्रि-सरोजे शशि-शकल-धरां वल्लकीं वादयन्तीं ।
कह्लाराबद्ध-मालां नियमित-विलसच्चोलिकां रक्त-वस्त्रां, मातंगीं शंख-पात्रां मधुर-मधु-मदां चित्रकोद्भासि-भालां ।।

ॐ ऋषिरुवाच

आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्ड - मुण्ड - पुरोगमाः । चतुरंग - बलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः ।।१।।
ददृशुस्ते ततो देवीमीषद् - हासां व्यवस्थिताम् । सिंहस्योपरि शैलेन्द्र - शृङ्गे महति काञ्चने ।।२।।
ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यमाः । आकृष्ट-चापासि - धरास्तथान्ये तत्-समीपगाः ।।३।।
ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन् प्रति । कोपेन चास्या वदनं मषी - वर्णमभूत् तदा ।।४।।
भृकुटी-कुटिलात् तस्या ललाट - फलकाद् द्रुतम् । काली कराल-वदना विनिष्क्रान्ताऽसि-पाशिनी ।।५।।
विचित्र - खट्वांग-धरा नर - माला - विभूषणा । द्वीपि - चर्म-परीधाना शुष्क-मांसाति - भैरवा ।।६।।
अति-विस्तार - वदना जिह्वा - ललन-भीषणा । निमग्नारक्त - नयना नादापूरित - दिङ्-मुखा ।।७।।
सा बेगेनाभिपतिता घातयन्ती महासुरान् । सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत् तद् - बलम् ।।८।।
पार्ष्णि-ग्राहांकुश - ग्राहि-योध-घण्टा-समन्वितान् । समादायैक - हस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान् ।।९।।

तथैव योधं तुरगैः रथं सारथिना सह । निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयन्त्यति - भैरवम् ॥१०॥
एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम् । पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसान्यमपोथयत् ॥११॥
तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथासुरैः । मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथितान्यपि ॥१२॥
बलिनां तद् - बलं सर्वमसुराणां दुरात्मनाम् । ममर्दाभक्षयच्चान्यानन्यांश्चाताडयत् तथा ॥१३॥
असिना निहता केचित् केचित् खट्वांग-ताडिताः । जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभि - हतास्तथा ॥१४॥
क्षणेन तद् - बलं सर्वमसुराणां निपातितम् । दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमति-भीषणाम् ॥१५॥
शर - वर्षैर्महा - भीमैर्भीमाक्षीं तां महासुरः । छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः ॥१६॥
तानि चक्राण्यनेकानि विशमानानि तन्मुखम् । बभुर्यथार्क - बिम्बानि सु - बहूनि घनोदरम् ॥१७॥
ततो जहासाति - रुषा भीमं भैरव - नादिनी । काली कराल - वक्त्रान्तर्दुर्दर्श - दशनोज्ज्वला ॥१८॥
उत्थाय च महा - सिंहं देवी चण्डमधावत । गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत् ॥१९॥
अथ मुण्डोऽभ्यधावत्तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । तमप्यपातयद् भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा ॥२०॥
छिन्ने शिरसि दैत्येन्द्रश्चक्रे नादं सु - भैरवम् । तेन नादेन महता भासितं भुवन - त्रयम् ॥२१॥
हत - शेषं ततः सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । मुण्डं च सु-महा - वीर्यं दिशो भेजे भयातुरम् ॥२२॥
शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च । प्राह प्रचण्डाट्टहास - मिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम् ॥२३॥

देव्युवाच

मया तवात्रोपहृतौ चण्ड - मुण्डौ महा - पशू । युद्ध - यज्ञे स्वयं शुम्भं निशुम्भं च हनिष्यसि ॥२४॥

ऋषिरुवाच

तयानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्ड - मुण्डौ महासुरौ । उवाच कालीं कल्याणी ललितं चण्डिका वचः ॥२५॥

यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता। चामुण्डा तु ततो लोके ख्याता देवि ! भविष्यसि ॥२६॥

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) जगदम्बार्पणमस्तु ॥

उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ें ।

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इसमें विशेष जायफल है । सब चीजें स्रुची में रखकर खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आदिशोव्विद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

तान्त्रिक आहुति

ॐ जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै काली - चामुण्डा-देव्यै कर्पूर-बीजाधिष्ठात्र्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है ।

भगवती भवानी
सर्वाधिकारसुरक्षित
संदीप तमरहाड़ जबलपुर
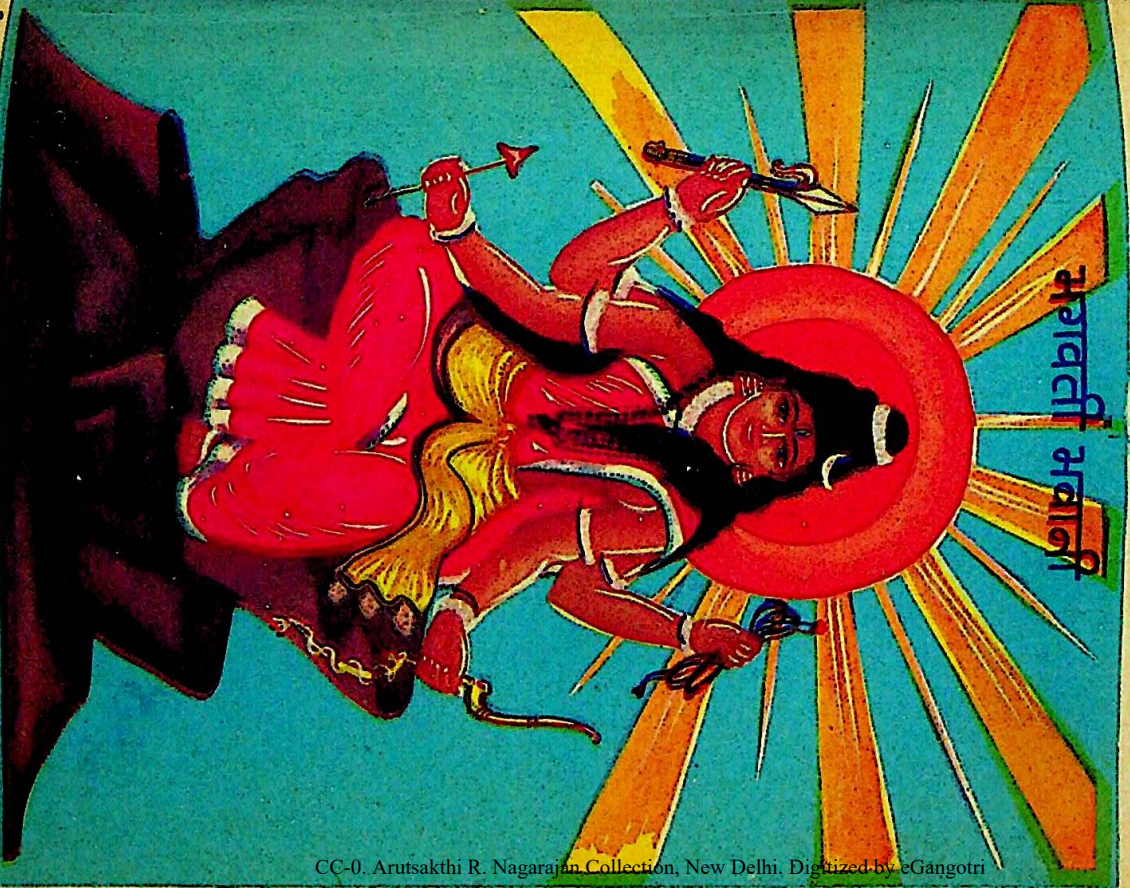
अष्टमः

ध्यानम्

ॐ अरुणां करुणा - तरंगिताक्षीं, धृत - पाशांकुश - वाण - चाप - हस्ताम् ।
अणिमादिभिरावृतां मयूखैरहमित्येव विभावये भवानीम् ॥

ॐ ऋषिरुवाच

चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते । बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ॥१॥
ततः कोप - पराधीन - चेताः शुम्भः प्रतापवान् । उद्योगं सर्व - सैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह ॥२॥

शुम्भ उवाच

अद्य सर्व - बलैर्दैत्याः षडशीतिरुदायुधाः । कम्बूनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु स्व - बलैर्वृताः ॥३॥
कोटि - वीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै । शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया ॥४॥
कालका दौर्हृदा मौर्या कालकेयास्तथासुराः । युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम् ॥५॥

ॐ ऋषिरुवाच

आज्ञाप्यासुर - पतिः तु शुम्भो भैरव - शासनः । निर्जगाम महा - सैन्य - सहस्रैर्बहुभिर्वृतः ॥६॥
आयान्तं चण्डिकां दृष्ट्वा तत्-सैन्यमति-भीषणम् । ज्या - स्वनैः पूरयामास धरणी - गगनान्तरम् ॥७॥
ततः सिंहो महा - नादमतीव कृतवान् नृप ! घण्टा - स्वनेन तन्नादमम्बिका चोप - बृंहयत् ॥८॥

धनुर्ज्या-सिंह - घण्टानां नादापूरित - दिङ्-मुखा । निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारिताननाा ॥९॥
तं निनादमुप - श्रुत्य दैत्य - सैन्यैश्चतुर्दिशम् । देवी सिंहस्तथा काली स-रोषैः परिवारिताः ॥१०॥
एतस्मिन्नन्तरे भूप ! विनाशाय सुर - द्विषाम् । भवायामर - सिंहानामति-वीर्य-बलान्विताः ॥११॥
ब्रह्मेश - गुह - विष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः । शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्रूपैश्चण्डिकां ययुः ॥१२॥
यस्य देवस्य यद् - रूपं यथा भूषण - वाहनम् । तद् - वदेव हि तच्छक्तिरसुरान् योद्धुमाययौ ॥१३॥
हंस - युक्त - विमानाग्रे साक्ष - सूत्र - कमण्डलुः । आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साऽभिधीयते ॥१४॥
माहेश्वरी वृषारूढ़ा त्रिशूल - वर - धारिणी । महाहि - वलया प्राप्ता चन्द्र-रेखा-विभूषणा ॥१५॥
कौमारी शक्ति - हस्ता च मयूर - वर - वाहना । योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुह - रूपिणी ॥१६॥
तथैव वैष्णवी - शक्तिर्गरुड़ोपरि - संस्थिता । शंख-चक्र-गदा - शार्ङ्ग-खड्ग-हस्ताभ्युपाययौ ॥१७॥
यज्ञ-वाराहमतुलं रूपं या विभ्रतो हरेः । शक्तिः साप्याययौ तत्र वाराहीं विभ्रती तनुम् ॥१८॥
नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः । प्राप्ता तत्र सटाक्षेप - क्षिप्त - नक्षत्र-संहतिः ॥१९॥
वज्र - हस्ता तथैवेन्द्री गज - राजोपरि - स्थिता । प्राप्ता सहस्र - नयना यथा शक्रस्तथैव सा ॥२०॥
ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देव - शक्तिभिः । हन्यन्तामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याऽऽह चण्डिकां ॥२१॥
ततो देवी - शरीरात्तु विनिष्क्रान्ताऽति - भीषणा । चण्डिका-शक्तिरत्युग्रा शिवा-शत-निनादिनी ॥२२॥
सा चाह धूम्र - जटिलमीशानमपराजिता । दूत ! त्वं गच्छ भगवन् ! पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः ॥२३॥

देव्युवाच

ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावति - गर्वितौ । ये चान्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ॥२४॥
त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः । यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ॥२५॥
बलावलेपादथ चेद् भवन्तो युद्ध - काङ्क्षिणः । तदागच्छत तृप्यन्तु मच्छिवाः पिशितेन वः ॥२६॥

ऋषिरुवाच

यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम् । शिव-दूती तु लोकेऽस्मिन् ततः सा ख्यातिमागता ॥२७॥
तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्या शर्वाख्यातं महासुराः । अमर्षापूरिता जग्मुर्यत्र कात्यायनी स्थिता ॥२८॥
ततः प्रथममेवाग्रे शर - शक्त्यृष्टि - वृष्टिभिः । ववर्षुरुद्धतामर्षास्तां देवीममरारयः ॥२९॥
सा च तान् प्रहितान् वाणाँश्छूल-शक्ति-परश्वधान् । चिच्छेद लीलयाऽऽध्मात - धनुर्मुक्तैर्महेषुभिः ॥३०॥
तस्याग्रतस्तथा काली शूल - पात - विदारितान् । (खट्वांग-पोथिताँश्चारीन् कुर्वंती व्यचरत् तदा)
कमण्डलु - जलाक्षेप-हत - वीर्यान् हतौजसः ॥३१॥
ब्रह्माणी चाकरोच्छत्रून् येन येन स्म धावति । माहेश्वरी त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी ॥३२॥
दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्याति - कोपना । ऐन्द्री कुलिश - पातेन शतशो दैत्य-दानवाः ॥३३॥
पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघ - प्रवर्षिणः । तुण्ड-प्रहार - विध्वस्ता दंष्ट्राग्र-क्षत-वक्षसः ॥३४॥
वाराह - मूर्त्या न्यपतँश्चक्रेण च विदारिताः । नखैर्विदारिताँश्चान्यान् भक्षयन्ती महासुरान् ॥३५॥

नारसिंही चचाराजौ नादापूर्ण - दिगम्बरा । चण्डाट्टहासैरसुराः शिव - दूत्यभि - दूषिताः ॥३६॥

पेतुः पृथिव्यां पतितान् ताँश्च खादाथ सा तदा। एवं मातृ-गणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महासुरान् ॥३७॥
दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारि-सैनिकाः। पलायन-परान् दृष्ट्वा दैत्यान् मातृ-गणार्दितान् ॥३८॥
योद्धुमभ्यांययौ क्रुद्धो रक्त-बीजो महासुरः। रक्त-बिन्दुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः ॥३९॥
समुत्पतति मेदिन्यां तत्-प्रमाणस्तदासुरः। युयुधे स गदा-पाणिरिन्द्र-शक्त्या महासुरः ॥४०॥
ततश्चैन्द्री स्व-वज्रेण रक्त-बीजमताडयत्। कुलिशेनाहतस्याशु बहु सुस्राव शोणितम् ॥४१॥
समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्-रूपास्तत्-पराक्रमाः। यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद् रक्त-विन्दवः ॥४२॥
तावन्तः पुरुषा जातास्तद्-वीर्य-बल-विक्रमाः। ते चापि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्त-सम्भवाः ॥४३॥
समं मातृभिरत्युग्र-शस्त्र-पातातिभीषणम्। पुनश्च वज्र-पातेन क्षतमस्य शिरो यदा ॥४४॥
ववाह रक्तं पुरुषास्ततो जाताः सहस्रशः। वैष्णवी समरे चैनं चक्रेणाभिजघान ह ॥४५॥
गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम्। वैष्णवी-चक्र-भिन्नस्य रुधिर-स्राव-सम्भवैः ॥४६॥
सहस्रशो जगद् व्याप्तं तत् प्रमाणैर्महासुरैः। शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथाऽसिना ॥४७॥
माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्त-बीजं महासुरम्। स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत् पृथक् ॥४८॥
मातृः कोप-समाविष्टो रक्त-बीजो महासुरः। तस्याहतस्य बहुधा शक्ति-शूलादिभिर्भुवि ॥४९॥
पपात यो वै रक्तौघस्तेनासँच्छतशोऽसुराः। तैश्चासुरासृक्-सम्भूतैरसुरैः सकलं जगत् ॥५०॥
व्याप्तमासीत् ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम्। तान् विषण्णान् सुरान् दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्वरा ॥५१॥

देव्युवाच

उवाच कालीं चामुण्डे ! विस्तीर्णं वदनं कुरु । मच्छस्त्रपात-सम्भूतान् रक्त-विन्दून् महासुरान् ॥५२॥
रक्त - बिन्दो प्रतीच्छ त्वं वक्त्रेणानेन वेगिना । भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्नान् महासुरान् ॥५३॥
एवमेष क्षयं दैत्यः क्षीण - रक्तो गमिष्यति । भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे ॥५४॥

ऋषिरुवाच

उक्त्वैवं तां ततो देवी शूलेनाभिजघान तम् । मुखेन काली जगृहे रक्त-बीजस्य शोणितम् ॥५५॥
ततोऽसावजघानाथ गदया तत्र चण्डिकाम् । न चास्या वेदनां चक्रे गदा-पातोऽल्पिकामपि ॥५६॥
तस्याहतस्य देहात्तु बहु सुस्राव शोणितम् । यतस्ततस्तद्-वक्त्रेण चामुण्डा सम्प्रतीच्छति ॥५७॥
मुखे समुद्गता येऽस्या रक्त-पातान् महासुराः । तांश्च खादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणितम् ॥५८॥
देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः । जघान रक्त-बीजं तं चामुण्डा-पीत-शोणितम् ॥५९॥
स पपात मही - पृष्ठे शस्त्र - संघ - समाहतः । नीरक्तश्च महीपाल ! रक्त-बीजो महासुरः ॥६०॥
ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप ! तेषां मातृ-गणो जातो ननर्तासृङ्-मदोद्धतः ॥६१॥

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥

उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ें ।

वैदिक आहुति

१ पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर, १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इसमें विशेष 'लाल' है ।
सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र पढ़ें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः। पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा। दिशः प्रतिशऽआदिशो व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

तान्त्रिक आहुति

ॐ जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै रक्ताक्ष्यै अष्ट-मातृ-सहितायै महाहुतिम् समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है।

नवमः

ध्यानम्

ॐ बन्धूक - काञ्चन - निभं रुचिराक्ष - मालां, पाशांकुशौ च वरदां निज - बाहु - दण्डैः ॥
बिभ्राणमिन्दु - शकलाभरणं त्रिनेत्रमर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि ॥

ॐ राजोवाच

विचित्रमिदमाख्यातं भगवन् ! भवता मम । देव्याश्चरित - माहात्म्यं रक्त - बीज - क्षयाश्रितम् ॥१॥
भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्त - बीजे निपातिते । चकार शुम्भो यत् - कर्म निशुम्भश्चाति - कोपनः ॥२॥

ऋषिरुवाच

चकार कोपमतुलं रक्त - बीजे निपातिते । शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे ॥३॥
हन्यमानं महा - सैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन् । अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययासुर - सेनया ॥४॥
तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुराः । संदष्टौष्ठ - पुटाः क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः ॥५॥
आजगाम महा - वीर्यः शुम्भोऽपि स्व-बलैर्वृतः । निहन्तुं चण्डिकां कोपात् कृत्वा युद्धं तु मातृभिः ॥६॥
ततो युद्धमतीवासीद् देव्या शुम्भ - निशुम्भयोः । शर - वर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतोः ॥७॥
चिच्छेदास्तांश्छरांस्ताभ्यां चण्डिका स्व-शरोत्करैः । ताडयामास चांगेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ ॥८॥
निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म चादाय सुप्रभम् । अताडयन् मूर्ध्नि सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम् ॥९॥

अर्धनारीश्वर

ताडिते वाहने देवी क्षुर - प्रेणासिमुत्तमम् । निशुम्भस्याशु चिच्छेद चर्म चाप्यष्ट - चन्द्रकम् ॥१०॥
छिन्ने चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः । तामप्यस्य द्विधा चक्रे चक्रेणाभि - मुखागतम् ॥११॥
कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः । आयातं मुष्टि - पातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत् ॥१२॥
अविध्याथ गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकां प्रति । साऽपि देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता ॥१३॥
ततः परशु - हस्तं तमायान्तं दैत्य - पुंगवम् । आहत्य देवी बाणौघैरपातयत भू - तले ॥१४॥
तस्मिन्निपतिते भूमौ निशुम्भे भीम - विक्रमे । भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् ॥१५॥
तमायान्तं समालोक्य देवी शंखमवादयत् । ज्या - शब्दं चापि धनुषश्चकारातीव-दुःसहम् ॥१६॥
पूरयामास ककुभो निज - घण्टा - स्वनेन च । समस्त-दैत्य - सैन्यानां तेजो-क्षय - विधायिना ॥१७॥
ततः सिंहो महा - नादैस्त्याजितेभ - महा-मदैः । पूरयामास गगनं गां तथैव दिशो दशः ॥१८॥
ततः काली समुत्पत्य गगनं क्ष्मामताडयत् । कराभ्यां तन्निनादेन प्राक् स्वनास्ते तिरोहिताः ॥१९॥
अट्टाट्ट - हासमशिवं शिव - दूती चकार ह । तैः शब्दैरसुरास्त्रेषु शुम्भः कोपं परं ययौ ॥२०॥

शुम्भ उवाच

दुरात्मँस्तिष्ठ तिष्ठेति व्याजहाराम्बिका यदा । तदा जयेत्यभिहितं देवैराकाश - संस्थितैः ॥२१॥

ऋषिरुवाच

शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालाति-भीषणा । आयान्ती वह्नि-कूटाभा सा निरस्ता महोल्कया ॥२२॥
सिंह - नादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोक-त्रयान्तरम् । निर्घात - निःस्वनो घोरो जितवानवनीपते ॥२३॥

शुम्भ-मुक्ताँश्छरान् देवी शुम्भस्तत्प्रहिताँश्छरान् । चिच्छेद स्वशरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः ॥२४॥
ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभि-जघान तम् । स तदाभिहितो भूमौ मूर्छितो निपपात ह ॥२५॥
ततो निशुम्भः सम्प्राप्य चेतनामात्त - कार्मुकः । आजघान शरैर्देवीं कालीं केसरिणं तथा ॥२६॥
पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः । चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम् ॥२७॥
ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गति - नाशिनी । चिच्छेद तानि चक्राणि स्व-शरैः सायकाँश्च तान् ॥२८॥
ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डिकाम् । अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्य - सेना - समावृतः ॥२९॥
तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका । खड्गेन शित - धारेण स च शूलं समाददे ॥३०॥
शूल - हस्तं समायान्तं निशुम्भममरार्दनम् । हृदि विव्याध शूलेन वेगाविद्धेन चण्डिका ॥३१॥
भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निःसृतोऽपरः । महा - बलो महा - वीर्यस्तिष्ठेति पुरुषो वदन् ॥३२॥
तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य स्वनवत्ततः । शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद् भुवि ॥३३॥
ततः सिंहश्चखादोग्रं दंष्ट्रा क्षुण्ण - शिरोधरान् । असुराँस्ताँस्तथा काली शिव - दूती तथापरान् ॥३४॥
कौमारी शक्ति - निर्भिन्ना केचिन्नेशुर्महासुराः । ब्रह्माणी मन्त्र - पूतेन तोयेनान्ये निराकृताः ॥३५॥
माहेश्वरी त्रिशूलेन भिन्नाः पेतुस्तथापरे । वाराही तुण्ड - घातेन केचिच्चूर्णीकृता भुवि ॥३६॥
खण्डं खण्डं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाः कृताः । वज्रेण चैन्द्री हस्ताग्र - विमुक्तेन तथाऽपरे ॥३७॥
केचिद् विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात् । भक्षिताश्चापरे काली शिव - दूती मृगाधिपैः ॥३८॥

शक्ति शोध संस्थान
सिहोरा जबलपुर

संदीप तमरहाई जबलपुर

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामा) जगदम्बार्पणमस्तु ॥

उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ें।

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल। इसमें विशेष १ बेल-फल व मैनफल हैं। सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः। पिवतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा। दिशः प्रतिशऽआदिशो-व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

(यजु० सं० अ० ६। १६ मन्त्र)

तान्त्रिक आहुति

ॐ क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै भैरव्यै तारा-देव्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा।

सामान सब ऊपर लिखा है।

दशमः

॥ ध्यानम् ॥

ॐ उत्तप्त - हेम - रुचिरां रवि - चन्द्र - वह्नि-नेत्रां धनुश्शर-युतांकुश - पाश - शूलम् ।
रम्यैर्भुजैश्च दधतीं शिव - शक्ति - रूपां कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दु - लेखाम् ॥

ऋषिरुवाच

निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राण - सम्मितम् । हन्य - मानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद् वचः ॥१॥

शुम्भ उवाच

बलावलेपाद् दुष्टे ! त्वं मा दुर्गे ! गर्वमावह । अन्येषां बलमाश्रित्य युद्ध्यसे याति मानिनी ॥२॥

देव्युवाच

एकैवाऽहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा ? पश्यैता दुष्ट ! मय्येव विशन्त्यो मद्-विभूतयः ॥३॥

ऋषिरुवाच

ततः समस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणी - प्रमुखा लयम् । तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत् तदाऽम्बिका ॥४॥

देव्युवाच

अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदास्थिता । तत्संहृतं मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव ॥५॥

ऋषिरुवाच

ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुम्भस्य चोभयोः । पश्यतां सर्व - देवानामसुराणां च दारुणम् ॥६॥
शर - वर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैव दारुणैः । तयोर्युद्धमभूद् भूयः सर्व - लोक - भयंकरम् ॥७॥
दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका । बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत् - प्रतीघात - कर्तृभिः ॥८॥
मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी । बभञ्ज लीलयैवोग्र - हुंकारोच्चारणादिभिः ॥९॥
ततः शर - शतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः । साऽपि तत्-कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः ॥१०॥
छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे । चिच्छेद देवी-चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम् ॥११॥
ततः खड्गमुपादाय शत - चन्द्रं च भानुमत् । अभ्यधावत् तदा देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः ॥१२॥
तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चण्डिका । धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्क - करामलाम् ॥१३॥
(अश्वाँश्च पातयामास रथं सारथिना सह)
हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्न-धन्वा वि-सारथिः । जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिका - निधनोद्यतः ॥१४॥
चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः । तथापि सोऽभ्यधावत्तां मुष्टिमुद्यम्य वेगवान् ॥१५॥
स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्य - पुंगवः । देव्यास्तं चापि सा देवी तलेनोरस्यताडयत् ॥१६॥
तल - प्रहाराभिहतो निपपात मही - तले । स दैत्य - राजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ॥१७॥
उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः । तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चण्डिका ॥१८॥
नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम् । चक्रतुः प्रथमं सिद्ध - मुनि-विस्मय - कारकम् ॥१९॥

ततो नियुद्धं सुचिरं कृत्वा तेनाम्बिका सह । उत्पात्य भ्रामयामास चिक्षेप धरणी - तले ॥२०॥
(स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगितः)
अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिका - निधनेच्छया । तमायान्तं ततो देवी सर्व - दैत्य - जनेश्वरम् ॥२१॥
जगत्यां पातयामास भित्वा शूलेन वक्षसि । स गतासुः पपातोर्व्यां देवी - शूलाग्र - विक्षतः ॥२२॥
चालयन् सकलां पृथ्वीं साब्धि-द्वीपां स-पर्वताम् । ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन् दुरात्मनि ॥२३॥
जगत् स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाभवन्नभः । उत्पात - मेघाः सोल्का ये प्रागासँस्ते शमं ययुः ॥२४॥
सरितो मार्गवाहिन्यस्तथासँस्तत्र पातिते । ततो देव - गणाः सर्वे हर्ष - निर्भर - मानसाः ॥२५॥
बभूवुर्निहते तस्मिन् गन्धर्वा ललितं जगुः । अवादयँस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरो - गणाः ॥२६॥
ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद् दिवाकरः । जज्वलुश्चाग्नयः शान्ता शान्ता दिग्जनित-स्वनाः ॥२७॥

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सार्वणिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इसमें विशेष मैनफल व बेल-फल हैं । सब चीजें स्रुची में रखकर खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आदिशो व्विद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

एकादशः

ध्यानम्

ॐ बाल - रवि - द्युतिमिन्दु - किरीटां, तुंग - कुचां नयन - त्रय - युक्ताम् ।
स्मेर - मुखीं वरदांकुश - पाशाभीति - करां प्रभजे भुवनेशीम् ॥

ॐ ऋषिरुवाच

देव्या हते तत्र महा - सुरेन्द्रे, सेन्द्राः सुरा वह्नि - पुरोगमास्ताम् ।
कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्ट - लाभाद्, विकाशि - वक्त्राब्ज - विकाशिताशाः ॥१॥

देवा ऊचुः

देवि ! प्रपन्नार्ति - हरे ! प्रसीद, प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि ! पाहि विश्वं, त्वमीश्वरी देवि ! चराचरस्य ॥२॥
आधार - भूता जगतस्त्वमेका, मही - स्वरूपेण यतः स्थिताऽसि ।
अपां स्वरूप - स्थितया त्वयैतदाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्य - वीर्ये ॥३॥
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्त - वीर्या, विश्वस्य बीजं परमाऽसि माया ।
सम्मोहितं देवि ! समस्तमेतत्, त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति - हेतुः ॥४॥

विद्याः समस्तास्तव देवि ! भेदाः, स्त्रियः समस्ता सकला जगत्सु ।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्, का ते स्तुतिः स्तव्य - परा परोक्तिः ॥५॥

सर्वं - भूता यदा देवी स्वर्गं - मुक्ति - प्रदायनी । त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ॥६॥
सर्वस्य बुद्धि - रूपेण जनस्य हृदि संस्थिते ! स्वर्गापवर्गदे देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥७॥
कला - काष्ठादि - रूपेण परिणाम - प्रदायिनि ! विश्वोस्यपरतौ शक्ते ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥८॥
सर्व - मंगल - मांगल्ये ! शिवे ! सर्वार्थ - साधिके ! शरण्ये ! त्र्यम्बके ! गौरि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥९॥
सृष्टि - स्थिति - विनाशानां शक्ति - भूते ! सनातनि ! गुणाश्रये ! गुण - मये ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१०॥
शरणागत - दीनार्त - परित्राण - परायणे ! सर्वस्यार्ति-हरे ! देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥११॥
हंस - युक्त - विमानस्थे ! ब्रह्माणी - रूप - धारिणि ! कौशाम्भः-क्षुरिके ! देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१२॥
त्रिशूल - चन्द्राहि - धरे ! महा - वृषभ - वाहिनि ! माहेश्वरी - स्वरूपेण नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१३॥
मयूर - कुक्कुट - वृते ! महा - शक्ति - धरेऽनघे ! कौमारी - रूप-संस्थाने ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१४॥
शंख - चक्र - गदा - शार्ंग - गृहीत - परमायुधे ! प्रसीद वैष्णवी - रूपे ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१५॥
गृहीतोग्र - महा - चक्रे ! दंष्ट्रोद्धृत - वसुन्धरे ! वराह - रूपिणि ! शिवे ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१६॥
नृसिह - रूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे ! त्रैलोक्य-त्राण - सहिते ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१७॥
किरीटिनि ! महा - वज्रे ! सहस्र - नयनोज्ज्वले ! वृत्र - प्राण-हरे ! चैन्द्रि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१८॥
शिवदूती - स्वरूपेण हत - दैत्य - महा - बले ! घोर-रूपे ! महा - रावे ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१९॥

दंष्ट्रा - कराल - वदने ! शिरो - माला - विभूषणे ! चामुण्डे ! मुण्ड - मथने ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥२०॥
लक्ष्मि ! लज्जे ! महा-विद्ये ! श्रद्धे ! पुष्टि-स्वधे ! ध्रुवे ! महा-रात्रि ! महा-विद्ये ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥२१॥
मेधे ! सरस्वति ! वरे ! भूति ! बाभ्रवि ! तामसि ! नियते ! त्वं प्रसीदेशे ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥२२॥
सर्वतः पाणि - पादां ते सर्वतोऽक्षि - शिरो - मुखे । सर्वतः श्रवण - घ्राणे नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥२३॥
सर्व - स्वरूपे सर्वेशे सर्व - शक्ति - समन्विते । भयेभ्यस्त्राहि नो देवि ! दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते ॥२४॥
एतत्ते वदनं सौम्यं लोचन - त्रय - भूषितम् । पातु नः सर्व - भीतिभ्यः कात्यायनि ! नमोऽस्तु ते ॥२५॥
ज्वाला - करालमत्युग्रमशेषासुर - सूदनम् । त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्र - कालि ! नमोऽस्तु ते ॥२६॥
हिनस्ति दैत्य - तेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् । सा घण्टा पातु नो देवि ! पापेभ्यो नः सुतानिव ॥२७॥
असुरासृग् - वसा - पंक - चर्चितस्ते करोज्ज्वलः । शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके ! त्वां नता वयम् ॥२८॥

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा ददासि कामान् सकलानभीष्टान् । त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥२९॥ एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाऽद्य धर्म-द्विषां देवि ! महासुराणाम् । रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्म-मूर्तिं कृत्वाऽम्बिके ! तत्प्रकरोति काऽन्या ॥३०॥ विद्यासु शास्त्रेषु विवेक - दीपेष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या । ममत्व-गर्तेऽति-महान्ध-कारे विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥३१॥ रक्षांसि यत्रोग्र-विषाश्च नागा यत्रारयो दस्यु-बलानि यत्र । दावानलो यत्र तथाऽब्धि-मध्ये तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ॥३२॥ विश्वेश्वरि ! त्वं परिपासि विश्वं विश्वात्मिका धारय-सीति विश्वम् । विश्वेश - वन्द्या भवती भवन्ति विश्वाश्रया ये त्वयि भक्ति-नम्राः ॥३३॥

देवि ! प्रसीद परिपालय नोऽरि - भीतेर्नित्यं यथासुर - क्षयादधुनैव सद्यः ।

पापानि सर्वं - जगतां प्रशमं नयाशु, उत्पात - पाक - जनितांश्च महोपसर्गान् ॥३४॥
प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि ! विश्वार्ति-हारिणि। त्रैलोक्य-वासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ॥३५॥

देव्युवाच

वरदाऽहं सुर - गणा ! वरं यन्मनसेच्छथ । तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥३६॥

देवा ऊचुः

सर्वा - बाधा - प्रशमनं त्रैलोक्यस्याऽखिलेश्वरि ! एवमेव त्वया कार्यमस्मद्-वैरि-विनाशनम् ॥३७॥

देव्युवाच

वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युगे । शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महासुरौ ॥३८॥
नन्द - गोप - गृहे जाता यशोदा - गर्भ - सम्भवा । ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचल - निवासिनी ॥३९॥
पुनरप्यति - रौद्रेण रूपेण पृथिवी - तले । अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ॥४०॥
भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान् वैप्रचित्तान् महासुरान् । रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमी - कुसुमोपमाः ॥४१॥
ततो मां देवताः स्वर्गे मर्त्य - लोके च मानवाः । स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्त - दन्तिकाम् ॥४२॥
भूयश्च शत - वार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि । मुनिभिः संस्तुता भूमौ सम्भविष्याम्ययोनिजा ॥४३॥
ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन् । कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षी एव मां ततः ॥४४॥
ततोऽहमखिलं लोकमात्म - देह - समुद्भवैः । भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राण - धारकैः ॥४५॥
शाकम्भरी च विख्याता तदा यास्याम्यहं भुवि । तत्रैव च नाशयिष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम् ॥४६॥

दुर्गा देवी च विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति । पुनश्चायं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले ।।४७।।
रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राण - कारणात् । तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्र - मूर्तयः ।।४८।।
भीमा देवी च विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति । यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महा - बाधां करिष्यति ।।४९।।
तदाऽहं भ्रामरं रूपं कृत्वाऽसंख्येय - षट् - पदम् । त्रैलोक्यस्य हितार्थाय नाशिष्यामि महासुरम् ।।५०।।
(भ्रामरी चैव मां लोकास्तदा तोष्यन्ति सर्वतः)
इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति । तदा तदाऽवतीर्याऽहं करिष्याम्यरि - संक्षयम् ।।५१।।
।। ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ।।

उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ें ।

वैदिक आहुति

१ पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इसमें विशेष पुष्प व पायस ही हैं । सब चीजें स्त्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आदिशो-व्विदिशऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।।

(यजु० सं० अ० ६ । १९ मन्त्र) ।

तान्त्रिक आहुति

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै लक्ष्मी-बीजाधिष्ठात्र्यै गरुड़ - वाहिन्यै नारायणी-देव्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ।।

सामान सब ऊपर लिखा है ।

द्वादशः

।। ध्यानम् ।।

ॐ विद्युद्दाम-सम-प्रभां मृगपति-स्कन्ध-स्थितां भीषणां, कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदासि-खेट-विशिखाँश्चापं गुणं तर्जनीं, बिभ्राणामनलात्मिकां शशि-धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ।।

देव्युवाच

एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः । तस्याऽहं सकलां बाधां नाशयिष्याम्यसंशयम् ।।१।।
मधु - कैटभ - नाशं च महिषासुर - घातनम् । कीर्तयिष्यन्ति ये तद्वद् क्षयं शुम्भ - निशुम्भयोः ।।२।।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैक - चेतसः । श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम् ।।३।।
न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद् दुष्कृतोत्था न चापदः । भविष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्ट - वियोजनम् ।।४।।
शत्रुतो न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः । न शस्त्रानल - तोयौघात् कदाचित् सम्भविष्यति ।।५।।
तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समाहिते । श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत् ।।६।।
उपसर्गानशेषाँस्तु महा - मारी - समुद्भवान् । तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम ।।७।।
यत्रैतत् पठ्यते सम्यङ् नित्यमायतने मम । सदा न तद्विमोक्ष्यामि सान्निध्यं तत्र मे स्थितम् ।।८।।
बलि - प्रदाने पूजायामग्नि - कार्ये महोत्सवे । सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च ।।९।।

जानताऽजानता वाऽपि बलि - पूजां तथा कृताम् । प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या वह्नि - होमं तथा कृतम् ।।१०।।

भगवती दुर्गा
Bajpai
निगमागम शक्ति शोध संस्थान
सिहोरा जबलपुर
सर्वाधिकारसुरक्षित
संदीप तमरहाई जबलपुर

शरत् - काले महा - पूजा क्रियते या च वार्षिकी । तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्ति - समन्वितः ॥११॥
सर्वा - बाधा - विनिर्मुक्तो धन - धान्य - सुतान्वितः । मनुष्यो मत् - प्रसादेन भविष्यति न संशयः ॥१२॥
श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं तथा चोत्पत्तयः शुभाः । पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् ॥१३॥
रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणं चोपपद्यते । नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम शृण्वताम् ॥१४॥
शान्ति - कर्मणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्न - दर्शने । ग्रह - पीडासु चोग्रासु माहात्म्यं शृणुयान्मम ॥१५॥
उपसर्गाः शमं यान्ति ग्रह - पीडाश्च दारुणाः । दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सु - स्वप्नमुपजायते ॥१६॥
बाल - ग्रहाभिभूतानां बालानां शान्ति - कारकम् । संघात - भेदे च नृणां मैत्री - करणमुत्तमम् ॥१७॥
दुर्वृत्तानामशेषाणां बल - हानि - करं परम् । रक्षो - भूत - पिशाचानां पठनादेव नाशनम् ॥१८॥
सर्वं ममैतन्माहात्म्यं मम सन्निधि - कारकम् । पशु - पुष्पार्घ्य - धूपैश्च गन्ध - दीपैस्तथोत्तमैः ॥१९॥
विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम् । अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या ॥२०॥
प्रीतिर्मे क्रियते सास्मिन् सुकृदुच्चरिते श्रुते । श्रुतं हरति पापानि तथाऽऽरोग्यं प्रयच्छति ॥२१॥
रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनम् मम । युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्ट - दैत्य - निबर्हणम् ॥२२॥
तस्मिञ्छ्रुते वैरि - कृतं भयं पुंसां न जायते । युष्माभिः स्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः ॥२३॥
ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम् । अरण्ये प्रान्तरे वाऽपि दावाग्नि - परिवारितः ॥२४॥
दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वापि शत्रुभिः । सिंह - व्याघ्रानुयातो वा वने वा वन - हस्तिभिः ॥२५॥
राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो बध्यो बन्ध - गतोऽपि वा । आघूर्णितो वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे ॥२६॥

पतत्सु चापि शस्त्रेषु संग्रामे भृश - दारुणे । सर्वा - बाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा ।।२७।।
स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत संकटात् । मम प्रभावात् सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा ।।२८।।

ऋषिरुवाच

दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम । उक्त्वैवं सा भगवती चण्डिका चण्ड - विक्रमा ।।२९।।
पश्यतामेव देवानां तत्रैवान्तरधीयत । तेऽपि देवा निरातंकाः स्वाधिकारान् यथा पुरा ।।३०।।
यज्ञ - भाग - भुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः । दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देव - रिपौ युधि ।।३१।।
जगद् - विध्वंसिनि तस्मिन् महोग्रेऽतुल - विक्रमे । निशुम्भे च महा - वीर्ये शेषाः पातालमाययुः ।।३२।।
एवं भगवती देवी सा नित्याऽपि पुनः पुनः । सम्भूय कुरुते भूप ! जगतः परि - पालनम् ।।३३।।
तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते । सा याचिता तु विज्ञानं तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति ।।३४।।
व्याप्तं तयैतत् सकलं ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर ! महा - काल्या महा-काले महा - मारी - स्वरूपया ।।३५।।
सैव काले महा - मारी सृष्टिर्भवत्यजा । स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी ।।३६।।
भव - काले नृणां सैव लक्ष्मीर्वृद्धि - प्रदा गृहे । सैवाऽभावे तथालक्ष्मीर्विनाशायोप - जायते ।।३७।।
स्तुता सम्पूजिता पुष्पैर्धूप - गन्धादिभिस्तथा । ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे गतिं शुभाम् ।।३८।।

।। ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तुः (यजमानस्य कामाः) श्रीजगदम्बार्पणमस्तु ।।
उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ें ।

वदिक आहुति

१ पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल। इसमें विशेष ऋतु-फल और केला ही हैं। सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः। पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा। दिशः प्रतिशऽ आद्दिशो-व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

तान्त्रिक आहुति

ॐ क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै वर-प्रदायै वैष्णवी-देव्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है।

त्रयोदशः

।। ध्यानम् ।।

ॐ बालार्क - मण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् । पाशांकुश - वराभीतीर्धारयन्तीं शिवां भजे ।।

ॐ ऋषिरुवाच

एतत्ते कथितं भूप ! देवी - माहात्म्यमुत्तमम् । एवं प्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत् ।।१।।
विद्या तथैव क्रियते भगवद् - विष्णु - मायया । तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः ।।२।।
मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे । तामुपैहि महाराज ! शरणं परमेश्वरीम् ।।३।।
(आराधिता सैव नृणां भोग - स्वर्गापवर्गदा)

मार्कण्डेय उवाच

एवं तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः । प्रणिपत्य महा - भागं तं ऋषिं शंसित - व्रतम् ।।४।।
निर्विण्णोऽति - ममत्वेन राज्यापहरणेन च । जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महा - मुने ! ।।५।।
सन्दर्शनार्थमम्बाया नदी - पुलिन - संस्थितः । स च वैश्यस्तपः तेपे देवी - सूक्तं परं जपन् ।।६।।
तौ तस्मिन् पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महो-मयीम् । अर्हणां चक्रतुस्तस्याः पुष्प - धपाग्नि - तर्पणैः ।।७।।
निराहारौ यताहारौ तन्मनस्कौ समाहितौ । ददतुस्तौ बलिं चैव निज - गात्रासृगुक्षितम् ।।८।।

एवं समाराधयतस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः । परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका ।।९।।

भगवती शिवा
निगमागम शक्ति शोध संस्थान
सर्वाधिकारसुरक्षित
संदीप तमरहाई ज़बलपुर

भगवती श्री बाला त्रिपुर सुन्दरी
सर्वाधिकार सुरक्षित

देव्युवाच

यत् प्रार्थ्यते त्वया भूप ! त्वया च कुल - नन्दन ! मत्तस्तत् प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत् ॥१०॥

मार्कण्डेय उवाच

ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्य - जन्मनि । अत्रैव च निजं राज्यं हत-शत्रु - बलं बलात् ॥११॥

राजोवाच

सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्ण - मानसः । ममेत्यहमेव प्राज्ञः संग - विच्युति - कारकम् ॥१२॥

देव्युवाच

स्वल्पैरहोभिर्नृपते ! स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान् । हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति ॥१३॥

मार्कण्डेय उवाच

मृतश्च भूयः सम्प्राप्य जन्म दैवाद् विवस्वतः । सावर्णिको नाम मनुर्भवान् भुवि भविष्यति ॥१४॥

वैश्य उवाच

वैश्यवर्य ! त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभि-वाञ्छितः । तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यै तव ज्ञानं भविष्यति ॥१५॥

मार्कण्डेय उवाच

एवं दत्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम् । बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता ॥१६॥

एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः । सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनु : ॥१७॥ क्लीं ॐ

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामाः) । जगदम्बार्पमणमस्तु ॥

उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ें ।

देव्युवाच

यत् प्रार्थ्यते त्वया भूप ! त्वया च कुल - नन्दन ! मत्तस्तत् प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत् ॥१०॥

मार्कण्डेय उवाच

ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंशयन्य - जन्मनि । अत्रैव च निजं राज्यं हत-शत्रु - बलं बलात् ॥११॥

राजोवाच

सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्ण - मानसः । ममेत्यहमेव प्राज्ञः संग - विच्युति - कारकम् ॥१२॥

देव्युवाच

स्वल्पैरहोभिर्नृपते ! स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान् । हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति ॥१३॥

मार्कण्डेय उवाच

मृतश्च भूयः सम्प्राप्य जन्म दैवाद् विवस्वतः । सावर्णिको नाम मनुर्भवान् भुवि भविष्यति ॥१४॥

वैश्य उवाच

वैश्यवर्य ! त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभि-वाञ्छितः । तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यै तव ज्ञानं भविष्यति ॥१५॥

मार्कण्डेय उवाच

एवं दत्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम् । बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता ॥१६॥

एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः । सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनु : ॥१७॥ क्लीं ॐ

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामाः) । जगदम्बार्पमणमस्तु ॥

उक्त वाक्य बोलकर जल छोड़ें ।

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग १ छोटी इलायची, गूगल। इसमें विशेष १ फल व फूल हैं। सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः। पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा। दिशः प्रतिशःऽ आदिशो व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

तान्त्रिक आहुति

ॐ क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै श्री-विद्यायै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है।

उपसंहार

इस प्रकार सप्तशती का पाठ पूरा होने पर पहले नवार्ण-जप, फिर देवी-सूक्त के पाठ का विधान है। अतः यहाँ भी नवार्ण-विधि उद्धृत की जाती है।

विनियोगः

श्रीगणपतिर्जयति। ॐ अस्य श्रीनवार्ण-मन्त्रस्य ब्रह्मा-विष्णु-रुद्रा ऋषयः। गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि। श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः। ऐं बीजम्। ह्रीं शक्तिः। क्लीं कीलकं। श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः॥

ऋष्यादि-न्यासः

ब्रह्मा-विष्णु-रुद्र-ऋषिभ्यो नमः शिरसि। गायत्र्युष्णिगनुष्टुप-छन्दोभ्यो नमः मुखे। श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-देवताभ्यो नमः हृदि। ऐं बीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं शक्तये नमः पादयोः। क्लीं कीलकाय नमः नाभौ। (ॐ) ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे सर्वाङ्गे।

मूलेन करौ संशोध्य—

कर-न्यासः

ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः। ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादि-न्यासः

ॐ ऐं हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ क्लीं शिखायै वषट्। ॐ चामुण्डायै कवचाय हुम्। ॐ

विच्चे नेत्र-त्रयाय वौषट् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट् ।

अक्षर-न्यासः

ॐ ऐं नमः शिखायां । ॐ ह्रीं नमः दक्षिण-नेत्रे । ॐ क्लीं नमः वाम-नेत्रे । ॐ चां नमः दक्षिण-कर्णे । ॐ मुं नमः वाम-कर्णे । ॐ डां नमः दक्षिण-नासा-पुटे । ॐ यैं नमः वाम नासा-पुटे । ॐ विं नमः मुखे । ॐ च्चें नमः गुह्ये ।

एवं विन्यस्याष्ट-वारं मूलेन व्यापकं कुर्यात् ।

दिङ्-न्यासः

ॐ ऐं प्राच्यै नमः । ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः । ॐ ह्रीं दक्षिणायै नमः । ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः । ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः । ॐ क्लीं वायव्यै नमः । ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः । ॐ चामुण्डायै ऐशान्यै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः ।

।। ध्यानम् ।।

खड्गं चक्र - गदेषु - चाप - परिघाँच्छूलं भुशुण्डीं शिरः, शङ्खं सन्दधतीं करैस्त्रि-नयनां सर्वांग - भूषावृताम् ।
नीलाश्म - द्युतिमास्य-पाद - दशकां सेवे महा-कालिकाम्, यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ।।१।।
अक्षस्त्रक् - परशुं गदेषु कुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां, दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुरा - भाजनम् ।
शूलं पाश - सुदर्शने च दधतीं हस्ते प्रसन्नाननाम्, सेवे सैरिभ - मर्दिनीमिह महा - लक्ष्मीं सरोज - स्थिताम् ।।२।।
घण्टा - शूल - हलानि शंख - मुसले चक्रं धनुः सायकं, हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त-विलसच्छीतांशु-तुल्य - प्रभाम् ।
गौरी - देह - समुद्भवां त्रि - जगतामाधार - भूतां महा - पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादि - दैत्यार्दिनीम् ।।३।।

इस प्रकार न्यास और ध्यान करके मानसिक उपचार से देवी की पूजा करें। फिर १०८ या १००८ बार नवार्ण-मन्त्र का जप करना चाहिए। जप आरम्भ करने से पहले 'ऐं ह्रीं अक्ष-मालायै नमः' इस मन्त्र से माला की पूजा करके प्रार्थना करें—

ॐ मां माले, महा-माये, सर्व-शक्ति-स्वरूपिणि ! चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥

ॐ अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे। जप-काले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥

ॐ अक्ष-मालाधिपतये सु-सिद्धिं देहि देहि सर्व-मन्त्रार्थ-साधिनि ! साधय साधय सर्व-सिद्धिं परिकल्पय मे स्वाहा।

इस प्रकार प्रार्थना करके नवार्ण-मन्त्र (ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे) का जप आरम्भ करें।

जप पूरा करके उसे भगवती को समर्पित करते हुये कहें—

गुह्याति-गुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देवि ! त्वत्-प्रसादान्महेश्वरि ॥

तत्पश्चात् फिर नीचे लिखे अनुसार न्यास करें—

कर-न्यासः

ॐ ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ चं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ डिं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ कां अनामिकाभ्यां नमः। ॐ यैं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं चण्डिकायै करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादि-न्यासः

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा। शंखिनी चापिनी बाण-भुशुण्डी-परिघायुधा—हृदयाय नमः

ॐ शूलेन पाहि नो देवि ! पाहि खड्गेन चाम्बिके ! घण्टा-स्वनेन नः पाहि चाप-ज्या-निःस्वनेन च—शिरसे स्वाहा।

ॐ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके ! रक्ष दक्षिणे। भ्रामणेनात्म-शूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि—शिखायै वषट्

ॐ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते। यानि चात्यर्थ-घोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम्—कवचाय हुम्।

ॐ खड्ग-शूल-गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ! कर-पल्लव-सङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः—नेत्र-त्रयाय वौषट् । ॐ सर्व-स्वरूपे ! सर्वेशे ! सर्व-शक्ति-समन्विते ! भयेभ्यस्त्राहि नो देवि ! दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते—अस्त्राय फट्

ध्यानम्

ॐ विद्युद्दाम-सम-प्रभां मृगपति-स्कन्ध-स्थितां भीषणाम्, कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदाऽसि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं, बिभ्राणामनलात्मिकां शशि-धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥

पर-देवी-सूक्तम्

ॐ अस्य श्रीपर-देवी-सूक्त-माला-मन्त्रस्य मार्कण्डेय-मेधसौ ऋषी । गायत्र्यादि-नाना-विध-छन्दांसि । त्रि-शक्ति-रूपिणी चण्डिका देवता । ऐं बीजम् । ह्रीं शक्तिः । क्लीं कीलकं । मम चिन्तित-सकल-मनोरथ-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यासः

ॐ मार्कण्डेय-मेधस-ऋषिभ्यां नमः शिरसि । ॐ गायत्र्यादि - नाना-विध - छन्दोभ्यो नमः मुखे । ॐ त्रिशक्ति-रूपिणी चण्डिका-देवतायै नमः हृदये । ॐ ऐं बीजाय नमः गुह्ये । ॐ ह्रीं शक्तये नमः पादयो । ॐ क्लीं कीलकाय नमः नाभौ । मम चिन्तित-सकल-मनोरथ-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

कर-न्यासः

ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ ऐं अनामिकाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ क्लीं करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः ।

हृदयादि (षडङ्ग) न्यासः

ॐ ऐं हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ क्लीं शिखायै वषट् । ॐ ऐं कवचाय हुं । ॐ ह्रीं नेत्र-त्रयाय वौषट् । ॐ क्लीं अस्त्राय फट् ।

ततः 'ऐं ह्रीं क्लीं' अनेन मन्त्रेण छोटिकाभिर्दिग-बन्धनम् ।

अथ ध्यानम्

ॐ योगाढ्यामर-काय-निर्गत-महा-तेजः समुत्पत्तनी, भास्वत्-पूर्ण-शशांक-चारु-धवला लीलोल्लसत्-भ्रू-लता ।
गौरी तुंग-कुच-द्वया तदुपरि स्फूर्जत्-प्रभा-मण्डला, बन्धूकारुण-काय-कान्ति-विलसच्छ्रीचण्डिका सर्वतः ॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैश्च सम्पूज्य सूक्तं पठेत्—

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं हुं सें हूं ह्सौं स्त्रौं जय जय महा-लक्ष्मी जगदाद्य-बीजे, सुरासुर-त्रिभुवन-निदाने, दया-करे, सर्व-सर्व-तेजो-रूपिणि, महा-महा-महिमे, महा-महा-रूपिणि, महा-महा-माये, महा-माया-स्वरूपिणि, विरञ्चि-संस्तुते, विधि-वरदे, चिदानन्दे, विष्णु-देहावृते, महा-मोहिनि (१०१); मधुकैटभ-जिघांसिनि, नित्य-वरदान-तत्परे, महा-सुधाब्धि-वासिनि, महा-महा-तेजो-धारिणि, सर्वाधारे, सर्व-कारण-कारणे, अचिन्त्य-रूपे, इन्द्रादि-निखिल-निर्जर-सेविते, साम-गान-गायिनि, पूर्णेन्द्रिय-कारिणि, विजये, जयन्ति, अपराजिते, सर्व-सुन्दरि, रक्तांशुके (१९८); सूर्य-कोटि-संकाशे, चन्द्र-कोटि-सुशीतले, अग्नि-कोटि-दहन-शोले, यम-कोटि-क्रूरे, वायु-कोटि-वहन-शोले, ओंकार-नाद-रूपिणि, निगमागम-मार्ग-दायिनि, महिषासुर-निर्दलिनि, धूम्रलोचन-क्षय-परायणे, चण्ड-मुण्डादि-शिरश्छेदिनि, रक्तबीजादि-रुधिर-शोषिणि (२९८); रक्त-पान-प्रिय-महा-योगिनि, भूत-वैताल-भैरवादि-तुष्टि-विधायिनि, शुम्भ-निशुम्भ-शिरच्छे-दिनि, निखिलासुर-खल-खादिनि, त्रिदश-राज्य-दायिनि, सर्व-स्त्री-रत्न-रूपिणि, दिव्य-देहे, निर्गुणे, सगुणे, सदसद्रूप-

धारिणि, स्कन्द-वरदे, भक्त-त्राण-तत्परे, वरे, वरदे (३९७); सहस्राक्षरे अयुताक्षरे, सप्त-कोटि-चामुण्डा-रूपिणि, नव-कोटि-कात्यायनि-स्वरूपे, अनेक-शक्त्यालक्ष्यालक्ष्य-स्वरूपे, इन्द्राणि, ब्रह्माणि, रुद्राणि, कौमारि, वैष्णवि, वाराहि, शिव-दूति, ईशानि, भीमे, भ्रामरि, नारसिंहि, त्रयस्त्रिंशत्-कोटि-देव-सेविते, अनन्त-कोटि-ब्रह्माण्ड-नायिके (५०१); चतुरशीति-लक्ष-मुनि-जन-संस्तुते, सप्त-कोटि-मन्त्र-स्वरूपे, महा-काल-रात्रि-प्रकाशे, कला-काष्ठादि-रूपिणि, चतुर्दश-भुवन-विभव-कारिणि, गरुड़-गामिनि, क्रोंकार-ह्रोंकार-ह्रौंकार-श्रींकार-क्लौंकार-जूंकार-सौंकार-ऐं-क्लींकार-कांकार-ह्सौंकार-नाना-बीज-कूट-निर्मित-शरीरे (६०१); नाना-बीज-मन्त्र-राज-विराजिते, सकल-सुन्दरी-गण-सेविते, चरणार-विन्दे, श्रीमहा-त्रिपुर-सुन्दरि, कामेश-दयिते, करुणैक-रस-कल्लोलिनि, कल्प-वृक्षाधः-स्थिते, चिन्ता-मणि-द्वीपावस्थिते, मणि-मन्दिर-निवासे, चापिनि, खड्गिणि, चक्रिणि, दण्डिनि, शंखिनि, पद्मिनि (६९४); निखिल-भैरवाराधिनि, समस्त-योगिनी-परिवृते, कालिके, कालि, तारे, तरले, सुतारे, ज्वालामुखि, छिन्न-मस्तिके, भुवनेश्वरि, त्रिपुरे, लोक-जननि, विष्णु-वक्षः-स्थलालंकारिणि, अजिते, अमिते, अमराधिपे, अनूप-चरिते, गर्भ-वास-दुःखापहारिणि (७९२); मुक्ति-क्षेत्रा-धिष्ठायिनि, शिवे, शान्ति-कुमारी-रूपे, देवी-सूक्त-दश-शताक्षरे, चन्द्रि, चामुण्डे, महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-त्रयी-विग्रहे ! प्रसीद प्रसीद, सर्व-मनोरथान् पूरय पूरय, सर्वारिष्ट-विघ्नाँश्छेदय छेदय, सर्व-ग्रह-पीडा-ज्वर-ग्रह-भयं विध्वंसय विध्वंसय (९०१); सर्वत्र त्रिभुवन-जीव-जातं वशय वशय, मोक्ष-मार्गान् दर्शय दर्शय, ज्ञान-मार्गं प्रकाशय प्रकाशय, अज्ञान-तमो नाशय नाशय, धन-धान्यादि-वृद्धिं कुरु कुरु, सर्व-कल्याणिनि ! कल्पय कल्पय, मां रक्ष रक्ष, सर्वापद्भ्यो निस्तारय निस्तारय, मम वज्र-शरीरं साधय साधय, ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा (१०००); नमस्ते नमस्ते नमस्ते स्वाहा ॥

परं देव्या इदं सूक्तं यः पठेत् प्रयतो नरः । सर्वं - सिद्धिमवाप्नोति सर्वत्र विजयी भवेत् ॥१॥
संग्रामेषु जयेच्छत्रून् मातंगानिव केसरी । वशयेन्निखिलान् लोकान् विशेषेण महीपतीन् ॥२॥
त्रि - कालं यः पठेन्नित्यं देव्याः सूक्तमिदं परम् । तस्य विघ्नाः प्रलीयन्ते ग्रह - पीडाश्च दारुणाः ॥३॥
पराभिचार - शमनं पर - कृत्या - निवारणम् । सर्वं - कल्याण - निलयं देव्याः सन्तोष-कारणम् ॥४॥
सहस्रावृत्तितो देवि ! मनोरथ - समृद्धिदम् । सहस्रावृत्ति - जपात् सर्वं - संकट - नाशनम् ॥५॥
त्रि-सहस्रावृत्तितस्तु वशं - कृद् राज-योषिताम् । शत - त्रयं जपेद् यस्तु वर्षं - त्रयमतन्द्रितः ॥६॥
पश्येत् स चण्डिकां साक्षात् वर-दान-कृतोद्यमाम् । इदं रहस्यं परमं गोपनीयं प्रयत्नतः ॥७॥
न वाच्यं कस्यचिद् देवि ! निधानमिव सुन्दरि ॥ ॐ श्रीं

॥ डामर-तन्त्रे उमा-महेश्वर-संवादे श्रीपर-देवी-सूक्तम् ॥

अथ प्राधानिक रहस्यम्

ॐ अस्य श्रीसप्तशती-रहस्य-त्रयस्य नारायण ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः । महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः । यथोक्त-फलावाप्त्यर्थं जपे विनियोगः ।

राजोवाच

भगवन्नव - तारा मे चण्डिकायास्त्वयोदिताः । एतेषां प्रकृतिं ब्रह्मन् ! प्रधानं वक्तुमर्हसि ॥१॥
आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन च द्विज ! विधिना ब्रूहि सकलं यथा - वत् प्रणतस्य मे ॥२॥

ऋषिरुवाच

इदं रहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते । भक्तोऽसीति न मे किञ्चित् तवावाच्यं नराधिप ।।३।।
सर्वस्याद्या महा - लक्ष्मीस्त्रिगुणा परमेश्वरी । लक्ष्यालक्ष्य-स्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं व्यवस्थिता ।।४।।
मातुलिंगं गदां खेटं पान - पात्रं च बिभ्रती । नागं लिंगं च योनिं च बिभ्रती नृप ! मूर्द्धनि ।।५।।
तप्त - काञ्चन - वर्णाभा तप्त - काञ्चन-भूषणा । शून्यं तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ।।६।।
शून्यं तदखिलं लोकं विलोक्य परमेश्वरी । बभार परमं रूपं तमसा केवलेन हि ।।७।।
सा भिन्नाञ्जन - संकाशा दंष्ट्रांकित - वरानना । विशाल - लोचना नारी बभूव तनु - मध्यमा ।।८।।
खड्ग - पात्र - शिरः - खेटैरलंकृत - चतुर्भुजा । कबन्ध - हारं शिरसा बिभ्राणा हि शिरः-स्रजम् ।।९।।
सा प्रोवाच महा - लक्ष्मी तामसीं प्रमदोत्तमा । नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्यं नमो नमः ।।१०।।
तां प्रोवाच महा - लक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् । ददामि तव नामानि यानि कर्माणि तानि ते ।।११।।
महा-माया महा - काली महा-मारी क्षुधा तृषा । निद्रा तृष्णा चैक - वीरा काल-रात्रिर्दुरव्यया ।।१२।।
इमानि तव नामानि प्रति-पाद्यानि कर्मभिः । एभिः कर्माणि ते ज्ञात्वा योऽधीते सोऽश्नुते सुखम् ।।१३।।
तामित्युक्त्वा महा - लक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप ! सत्त्वाख्येनाति - शुद्धेन गुणेनेन्दु - प्रभं दधौ ।।१४।।
अक्ष - मालांकुश-धरा वीणा - पुस्तक-धारिणी । सा बभूव वरा नारी नामान्यस्यै च सा ददौ ।।१५।।
महा-विद्या महा-वाणी भारती वाक् सरस्वती । आर्या ब्राह्मी काम-धेनुर्वेद - गर्भा च धीश्वरी ।।१६।।

अथोवाच महा - लक्ष्मीर्महा-कालीं सरस्वतीम् । युवां जनयतां देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः ।।१७।।

उक्त्वैवं ते महा-लक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयं। हिरण्य-गर्भौ रुचिरौ स्त्री-पुंसौ पद्मासनौ ॥१८॥
ब्रह्मन् विधे विरञ्चे तु धातरित्याह तं नरम्। श्रीपद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता च तां स्त्रियम् ॥१९॥
महा-कालो भारती च मिथुने सृजतः सह। एतयोरपि रूपाणि नामानि च वदामि ते ॥२०॥
नील-कण्ठं रक्त-बाहुं श्वेताङ्गं चन्द्र-शेखरम्। जनयामास पुरुषं महा-काली सितां स्त्रियम् ॥२१॥
स रुद्रः शंकरः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः। त्रयी विद्या काम-धेनुः सा स्त्री भाषाक्षरा स्वरा ॥२२॥
सरस्वतीं स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप! जनयामास नामानि तयोरपि वदामि ते ॥२३॥
विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः। उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शिवा ॥२४॥
एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे। चक्षुष्मन्तो नु पश्यन्ति नेतरेऽतद्विदो जनाः ॥२५॥
ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महा-लक्ष्मीर्नृप! त्रयीम्। रुद्राय गौरीं वरदां वासुदेवाय च श्रियम् ॥२६॥
स्वरया सह सम्भूय विरिञ्च्योऽण्डमजीजनत। बिभेद भगवान् रुद्रस्तद् गौर्या सह वीर्यवान् ॥२७॥
अण्ड-मध्ये प्रधानादि-कार्यं-जातमभून्नृप! महा-भूतात्मकं सर्वं जगत् स्थावर-जङ्गमम् ॥२८॥
पुपोष पालयामास तल्लक्ष्म्या सह केशवः। संजहार जगत् सर्वं सह गौर्या महेश्वरः ॥२९॥
महा-लक्ष्मीर्महा-राज! सर्व-सत्त्व-महीश्वरी। निराकारा च साकारा सैव नानाभिधान-भृत् ॥३०॥
नामान्तरैर्निरूप्येषा नाम्ना नान्येन केनचित् ॥३१॥

॥ श्रीप्राधानिक-रहस्यं सम्पूर्णम् ॥

अथ वैकृतिक रहस्यम्

ऋषिरुवाच

ॐ त्रिगुणा तामसी देवी सात्विकी यात्रधोदिता । सा शर्वा चण्डिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥१॥
योग - निद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमो - गुणा । मधु - कैटभ - नाशार्थे या तुष्टावाम्बुजासनः ॥२॥
दश - वक्त्रा दश - भुजा दश - पादाञ्जन-प्रभा । विशालया राज-माना त्रिशल्लोचन - मालया ॥३॥
स्फुरद् - दशन-दंष्ट्रा सा भीम - रूपाणि भूमिप ! रूप-सौभाग्य-कान्तीनां सा प्रतिष्ठा महा-श्रियः ॥४॥
खड्ग-बाण-गदा - शूल-चक्र-शंख - भुशुण्डि-भृत् । परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्च्योतद् रुधिरं दधौ ॥५॥
एषा सा वैष्णवी माया महा - काली दुरत्यया । आराधिता वशी - कुर्यात् पूजा कर्तुश्चराचरम् ॥६॥
सर्व - देव - शरीरेभ्यो याऽऽविर्भूतामित - प्रभा । त्रिगुणा सा महा-लक्ष्मीः साक्षान्महिष-मर्दिनी ॥७॥
श्वेतानना नील - भुजा सु - श्वेत-स्तन-मण्डला । रक्त - मध्या रक्त - पादा नील - जंघोरुरुन्मदा ॥८॥
सुचित्र - जघना चित्र - माल्याम्बर - विभूषणा । चित्रानुलेपना कान्ति - रूप - सौभाग्य-शालिनी ॥९॥
अष्टादश - भुजा पूज्या सा सहस्र - भुजा सती । आयुधान् यत्र वक्ष्यन्ते दक्षिणाधः-कर-क्रमात् ॥१०॥
अक्ष - माला च कमलं वाणोऽसिः कुलिशं गदा । त्रिशूलं परशुः चक्रं शंखो घण्टा च पाशकः ॥११॥
शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पान - पात्रं कमण्डलुः । अलंकृत - भुजामेभिरायुधैः कमलासनाम् ॥१२॥
सर्व - देव - मयीमीशां महा - लक्ष्मीमिमां नृप ! पूजयेत् सर्व - लोकानां स देवानां प्रभुर्भवेत् ॥१३॥

गौरी - देहात् समुद्भूता या सत्त्वैक - गुणाश्रया । साक्षात् सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुर-निबर्हिणी ॥१४॥

दधौ चाष्ट - भुजा बाण - मुसले शूल-चक्र-भृत् । शंखं घण्टा - लाङ्गलं च कार्मुकं वसुधाधिप ॥१५॥
एषा सम्पूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति । निशुम्भ - मथिनी देवी शुम्भासुर - निर्बर्हिणी ॥१६॥
उक्तान्येवं स्वरूपाणि मूर्तीनां तव पार्थिव ! उपासनं जगन्मातुः पृथगासां निशामय ॥१७॥
महा - लक्ष्मीर्यदा पूज्या महा - काली सरस्वती । दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुन - त्रयम् ॥१८॥
विरञ्चि स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या च दक्षिणे । वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरतो देवता - त्रयम् ॥१९॥
अष्टादश - भुजा - मध्ये वामे चास्या दशानना । अष्टादश - भुजा लक्ष्मीर्महती तु समर्चयेत् ॥२०॥
अष्टादश - भुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप ! दशानना चाष्ट - भुजा दक्षिणोत्तरयोस्तदा ॥२१॥
काल - मृत्यू च सम्पूज्यौ सर्वारिष्ट - प्रशान्तये । यदा चाष्ट - भुजा पूज्या शुम्भासुर-निर्बर्हिणी ॥२२॥
नवास्याः शक्तयः पूज्यास्तदा रुद्र - विनायकौ । नमो देव्यै स्तोत्रैश्चैव महालक्ष्मीं समर्चयेत् ॥२३॥
अवतार - त्रयार्चायां स्तोत्र - मन्त्रास्तदाश्रयाः । अष्टादश - भुजा चैषा पूज्या महिष-मर्दिनी ॥२४॥
महा - लक्ष्मीर्महा - काली सैव प्रोक्ता सरस्वती । ईश्वरी पुण्य - पापानां सर्व - लोक-महेश्वरी ॥२५॥
महिषान्त - करो येन पूजिता स जगत् प्रभुः । पूजयेज्जगतां धात्रीं चण्डिकां भक्त-वत्सलाम् ॥२६॥
अर्घ्यादिभिरलंकारैर्गन्ध - पुष्पैस्तथाक्षतैः । धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नाना - भक्ष्य - समन्वितैः ॥२७॥
रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप ! प्रणामाचमनीयेन चन्दनेन सुगन्धिना ॥२८॥
स - कर्पूरैश्च ताम्बूलैर्भक्ति - भाव - समन्वितैः । वाम - भागेऽग्रतो देव्याश्छिन्न-शीर्ष-महासुरम् ॥२९॥
पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं सायुज्यमीशया । दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥३०॥

वाहनं पूजयेद् देव्या धृतं येन चराचरम् । कुर्याच्च स्तवनं धीमाँस्तस्या चैकाग्र-मानसः ॥३१॥
ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत - चरितैरिमैः । एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ॥३२॥
चरितार्धं तु न जपेज्जपं छिद्रमवाप्नुयात् । प्रदक्षिणा नमस्कारान् कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः ॥३३॥
क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुरतन्द्रितः । प्रति-श्लोकं च जुहुयात् पायसं तिल-सर्पिषा ॥३४॥
जुहुयात् स्तोत्र - मन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः । भूयो नाम - पदैर्देवीं पूजयेत् सु - समाहितः ॥३५॥
प्रयतः प्राञ्जलिः प्रह्वः प्रणम्यारोप्य चात्मनि । सुचिरं भावयेदीशां चण्डिकां तन्मयो भवेत् ॥३६॥
एवं यः पूजयेद् भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम् । भुक्त्वा भोगान् यथा-कामं देवी-सायुज्यमाप्नुयात् ॥३७॥
यो न पूजयते नित्यं चण्डिकां भक्त - वत्सलाम् । भस्मी - कृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत् परमेश्वरी ॥३८॥
तस्मात् पूजय भूपाल ! सर्व - लोक - महेश्वरीम् । यथोक्तेन विधानेन चण्डिकां सुखमाप्स्यति ॥३९॥

॥ श्रीवैकृतिक-रहस्यं सम्पूर्णम् ॥

अथ मूर्ति-रहस्यम्

ऋषिरुवाच

ॐ नन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दजा । स्तुता सा पूजिता भक्त्या वशी-कुर्याज्जगत्-त्रयम् ॥१॥
कनकोत्तम-कान्तिः सा सु-कान्ति - कनकाम्बरा । देवी कनक - वर्णाभा कनकोत्तम - भूषणा ॥२॥
कमलांकुश - पाशाब्जैरलंकृत - चतुर्भुजा । इन्दिरा कमला लक्ष्मीः सा श्रीरुक्माम्बुजासना ॥३॥
या रक्त - दन्तिका नाम देवी प्रोक्ता मयाऽनघ ! तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्व - भयापहम् ॥४॥

रक्ताम्बरा रक्त - वर्णा रक्त - सर्वांग - भूषणा । रक्तायुधा रक्त - नेत्रा रक्त - केशाति-भीषणा ॥५॥
रक्त-तीक्ष्ण-नखा रक्त - दशना रक्त - दन्तिका । पतिं नारीवानुरक्ता देवी - भक्तं भजेज्जनम् ॥६॥
वसुधेव विशाला सा सुमेरु - युगल - स्तनी । दीर्घौ लम्बावति - स्थूलौ तावतीव मनोहरौ ॥७॥
कर्कशावति - कान्तौ तौ सर्वानन्द - पयोनिधि । भक्तान् सम्पाययेद् देवी सर्व-काम - दुघौ स्तनौ ॥८॥
खड्ग - पात्रं च मुसलं लाङ्गलं च बिभर्ति सा । आख्याता रक्त - चामुण्डा देवी योगेश्वरी तु च ॥९॥
अनया व्याप्तमखिलं जगत् स्थावर - जङ्गमम् । इमां यः पूजयेद् भक्त्या स चाप्नोति चराचरम् ॥१०॥
अधीते य इमं नित्यं रक्त-दन्त्या वपुः - स्तवम् । तं सा परिचरेद् देवी पतिं प्रियमिवाङ्गना ॥११॥
शाकम्भरो नील - वर्णा नीलोत्पल - विलोचना । गम्भीर - नाभिस्त्रिवली - विभूषित-तनूदरी ॥१२॥
सुकर्कश - समोत्तुङ्ग - वृत्त-पीन - घन - स्तनी । मुष्टि शिली - मुखापूर्णं कमलं कमलालया ॥१३॥
पुष्प - पल्लव-मूलादि - फलाढ्यं शाक-सञ्चयम् । काम्यानन्त - रसैर्युक्तं क्षुत्-तृण्मृत्यु-भयापहम् ॥१४॥
कार्मुकं च स्फुरत् - कान्ति विभ्रती परमेश्वरी । शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता ॥१५॥
विशोका दुष्ट - दमनी शमनी दुरितापदाम् । उमा गौरी सती चण्डी कालिका सा च पार्वती ॥१६॥
शाकम्भरीं स्तुवन् ध्यायञ्जपन् सम्पूजयन्नमन् । अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्न - पानामृतं फलम् ॥१७॥
भमाऽपि नील - वर्णा सा दंष्ट्रा-दशन-भासुरा । विशाल - लोचना नारी वृत - पीन-पयोधरा ॥१८॥
चन्द्र - हासं च डमरुं शिरः पात्रं च बिभ्रती । एक-वीरा काल-रात्रिः सैवोक्ता कामदा स्तुता ॥१९॥
तेजो-मण्डल - दुर्धर्षा भ्रामरी चित्र-कान्ति-भृत् । चित्रानुलेपना देवी चित्राभरण - भूषिता ॥२०॥

चित्र - भ्रमण - पाणिः सा महामारी तु गीयते । एवं च मूर्तयो देव्या याः ख्याता वसुधाधिप ॥२१॥
जगन्मातुश्चण्डिकायाः कीर्तिता काम - धेनवः । इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित् त्वया ॥२२॥
व्याख्यानं दिव्य - मूर्तीनामभीष्ट-फल-दायकम् । तस्मात् सर्वं - प्रयत्नेन देवीं जप निरन्तरम् ॥२३॥
सप्त - जन्मार्जितैर्घोरैर्ब्रह्म - हत्या - समैरपि । पाठ - मात्रेण मन्त्राणां मुच्यते सर्वं-किल्विषैः ॥२४॥
देव्या ध्यानं मया ख्यातं गुह्याद् गुह्य-तरं महत् । तस्मात् सर्वं - प्रयत्नेन सर्व-काम - फल-प्रदम् ॥२५॥
(एतस्याहं प्रसादेन सर्वं - मान्यो भविष्यसि) । सर्वं - रूप - मयी देवी सर्वं - देवी - मयं जगत् ।
अतोऽहं विश्व - रूपां तां नमामि परमेश्वरीम् ।

॥ श्रीमूर्ति-रहस्यं सम्पूर्णम् ॥

श्रीआपदुद्धारक बटुक-भैरव-स्तोत्रम्

ॐ अस्य श्री आपदुद्धारक-बटुक-भैरव-स्तोत्र-मन्त्रस्य वृहदारण्यक ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः । श्रीमदापदुद्धारक-बटुक-भैरवो देवता । वं ह्रीं बीजम् । ह्रीं बटुकाय शक्तिः । प्रणवः कीलकं । ममाभीष्ट-सिद्ध्यर्थे सप्तशती-पाठाङ्गत्वेन जपे (पाठे) विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यासः

वृहदारण्यक-ऋषये नमः शिरसि । अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे । श्रीमदापदुद्धारक-बटुक-भैरव-देवतायै नमः हृदये । वं ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये । ह्रीं बटुकाय शक्तये नमः पादयोः । ॐ कीलकाय नमः नाभौ । ममाभीष्ट-सिद्ध्यर्थे जपे (पाठे) विनियोगाय नमः सर्वांगे ।

कर-न्यासः

ॐ ह्रां वां ईशान-महादेवाय नमः अंगुष्ठाभ्यां नमः; हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं वीं तत्पुरुष-महादेवाय नमः तर्जनीभ्यां नमः; शिरसे स्वाहा । ॐ ह्रूं वूं अघोर-महादेवाय नमः मध्यमाभ्यां नमः; शिखायै वषट् । ॐ ह्रैं वैं वामदेव-महादेवाय नमः अनामिकाभ्यां नमः; कवचाय हुं । ॐ ह्रौं वौं सद्योजात-महादेवाय नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः; नेत्र-त्रयाय वौषट् । ॐ ह्रः वः पञ्चवक्त्र-महादेवाय नमः करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः; अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्

शान्तं पद्मासनस्थं शशि - मुकुट-धरं भ्रू-लतांगं त्रिनेत्रम् । शूलं खड्गं च वज्रं परशु-मुसलके दक्षिणांगे वहन्तम् ॥
नागं पाशं च घण्टां नलिन-कर-युतं सांकुशं वाम-भागे । नानालङ्कार-युक्तं स्फटिक-मणि-निभं नौमि तत्त्वं शिवाख्यम् ॥

ॐ भैरवो भूत - नाथश्च भूतात्मा भूत - भावनः । क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥१॥
श्मशान - वासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः । रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्ध - सेवितः ॥२॥
कङ्कालः काल - शमनः काम - काष्ठा तनूः कविः । त्रि - नेत्रो बहु - नेत्रश्च तथा पिंगल-लोचनः ॥३॥
शूल - पाणिः खड्ग-पाणिः कङ्काली धूम्र-लोचनः । अभीरुर्भैरवी - नाथो भूतपो योगिनी - पतिः ॥४॥
धनदोऽधन - हारी च धनवान् प्रतिभाग - वान् । नाग-हारो नाग-पाशो व्योम-केशः कपाल-भृत् ॥५॥
कालः कपाल - माली च कमनीयः कला - निधिः । त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोचनः ॥६॥
त्रिनेत्र - तनयो डिम्भ - शान्तः शान्त-जन-प्रियः । वटुको बहु - वेषश्च खट्वाङ्गः वर - धारकः ॥७॥
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारिकः । धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डु - लोचनः ॥८॥

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्कर - प्रिय - बान्धवः । अष्ट - मूर्तिर्निधीशश्च ज्ञान - चक्षुस्तपोमयः ।।९।।
अष्टाधारः षडाधारः सर्प - युक्तः शिखी - शखः । भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ।।१०।।
कङ्काल - धारी मुण्डी च आन्त्र-यज्ञोपवीत-वान् । जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ।।११।।
शुद्ध-नीलाञ्जन - प्रख्यो दैत्यहा मुण्ड - भूषितः । बलि-भुग् बलिभुग-नाथो बालोऽबाल-पराक्रमः ।।१२।।
सर्वापत् - तारणे दुर्गो दुष्ट - भूत - निषेवितः । कामी कला-निधिः कान्तः कामिनी-वश-कृद् वशी ।।१३।।
जगद्-रक्षा - करोऽनन्तो माया-मन्त्रौषधी - मयः । सर्व-सिद्धि - प्रदो वैद्यः प्रभुर्विष्णुरितीव हि ।।१४।।

।। अष्टोत्तर-शतं नाम्नां भैरवस्य महात्मनः ।।

सिद्धि-कुञ्जिका स्तोत्रम्

शिव उवाच

शृणु देवि ! प्रवक्ष्यामि कुञ्जिका-स्तोत्रमुत्तमम् । येन मन्त्र - प्रभावेण चण्डी - जापः शुभो भवेत् ।।१।।
न कवचं नार्गला - स्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम् । न सूक्तं नापि ध्यानं च न न्यासो न च वार्चनम् ।।२।।
कुञ्जिका - पाठ-मात्रेण दुर्गा-पाठ - फलं लभेत् ! अति - गुह्यतरं देवि ! देवानामपि दुर्लभम् ।।३।।
गोपनीयं प्रयत्नेन स्व - योनिरिव पार्वति ! मारणं मोहनं वश्यं स्तम्भनोच्चाटनादिकम् ।
पाठ-मात्रेण संसिद्धयेत् कुञ्जिका-स्तोत्रमुत्तमम् ।।४।।

अथ मन्त्र

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे । ॐ ग्लौं हुं क्लीं जूं सः ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं

बटुक भैरव
सिहोरा जबलपुर
सर्वाधिकार सुरक्षित
संदीप तमरहाई जबलपुर

नेगमागम शक्ति शोध संस्थान
सिहोरा जबलपुर

संदीप तमरहाई जबला

ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा ।

स्तोत्रम्

नमस्ते रुद्र - रूपिण्यै नमस्ते मधु - मर्दिनी । नमः कैटभ - हारिण्यै नमस्ते महिषार्दिनी ।।१।।
नमस्ते शुम्भ-हन्त्र्यै च निशुम्भासुर - घातिनि ।।२।।
जाग्रतं हि महा - देवि ! जपं सिद्धं कुरुष्व मे । ऐंकारी सृष्टि - रूपायै ह्रींकारी प्रति-पालिका ।।३।।
क्लीं कारी काम - रूपिण्यै बीज-रूपे नमोऽस्तु ते । चामुण्डा चण्ड-घाती च यैकारी वर - दायिनि ।।४।।
विच्चे चाभयदा नित्यं नमस्ते मन्त्र - रूपिणि ।।५।।
धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नीं वां वीं वूं वागधीश्वरी । क्रां क्रीं क्रूं कालिका देवि ! शां शीं शूं मे शुभं कुरु ।।६।।
हुं हुं हुंकार - रूपिण्यै जं जं जं जम्भ-नादिनि । भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी-भद्रे भवान्यै ते नमो नमः ।।७।।
अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दुं ऐं वीं हं क्षं धिजाग्रं । धिजाग्रं त्रोटय त्रोटय दीप्तं कुरु कुरु स्वाहा ।
पां पीं पूं पार्वती पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा ।।८।।
सां सीं सूं सप्तशती-देव्या मन्त्र-सिद्धिं कुरुष्व मे । इदं तु कुञ्जिका - स्तोत्रं मन्त्र-जागर्ति - हेतवे ।।९।।
अभक्तं नैव दातव्यं गोपितं रक्ष पार्वती ।।१०।।
यस्तु कुञ्जिकया देवि ! हीनां सप्तशतीं पठेत् । न तस्य जायते सिद्धिररण्ये रोदनं यथा ।।११।।

।। श्रीरुद्रयामले गौरी-तन्त्रे शिव-पार्वती-संवादे कुञ्जिका-स्तोत्रम् ।।

क्षमा-प्रार्थना

अपराध - सहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया । दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरि ॥१॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् । पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि ॥२॥
मन्त्र-हीनं क्रिया - हीनं भक्ति - हीनं सुरेश्वरि । यत् - पूजितं मया देवि ! परिपूर्णं तदस्तु मे ॥३॥
अपराध - शतं कृत्वा जगदम्ब तु चोच्चरेत् । यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुरः ॥४॥
सापराधोऽस्मि शरणं प्राप्तस्त्वां जगदम्बिके ! इदानीमनुकम्प्योऽहं यथेच्छसि तथा कुरु ॥५॥
अज्ञानाद् विस्मृतेर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् । तत्सर्वं क्षम्यतां देवि ! प्रसीद परमेश्वरि ॥६॥
कामेश्वरि ! जगन्मातः ! सच्चिदानन्द - विग्रहे ! गृहाणार्चामिमां प्रीत्या प्रसीद परमेश्वरि ॥७॥
गुह्यातिगुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपम् । सिद्धिर्भवतु मे देवि ! त्वत्-प्रसादात् सुरेश्वरि ॥८॥

॥ श्री दुर्गार्पणमस्तु ॥

श्री देवीजी की आरती

जग-जननी, जय जय माँ, जग-जननी, जय जय । भय-हारिणि, भव-तारिणि, भव-भामिनि, जय जय ॥
तू ही सत् - चित - सुख-मय शुद्ध - ब्रह्म - रूपा । सत्य सनातन सुन्दर पर - शिव - सुर - भूपा ॥१॥ जग०
आदि अनादि अनामय अविचल अविनाशी । अमल अनन्त अगोचर अज आनन्द - राशी ॥२॥ जग०
अविकारी अघ - हारी अकल कला - धारी । कर्त्ता विधि भर्त्ता हरि हर संहार - कारी ॥३॥ जग०
तू विधि - वधू रमा तू उमा महा - माया । मूल प्रकृति विद्या तू तू जननी - जाया ॥४॥ जग०

राम - कृष्ण तू सीता व्रज-रानी राधा। तू वाञ्छा - कल्पद्रुम हारिणि सब बाधा ॥५॥ जग०
दश - विद्या नव - दुर्गा नाना - शस्त्र - करा। अष्ट - मातृका योगिनि नव - नव - रूप-धरा ॥६॥ जग०
तू पर - धाम - निवासिनि महा - विलासिनि तू। तू ही श्मशान-विहारिणि ताण्डव - लासिनि तू ॥७॥ जग०
सुर - मुनि - मोहिनि सौम्या तू शोभाऽऽधारा। विवसन - विकट - स्वरूपा प्रलय-मयी धारा ॥८॥ जग०
तू ही स्नेह - सुधा - मयी तू अति गरल - मना। रत्न - विभूषित तू ही तू ही अस्थि - तना ॥९॥ जग०
मूलाधार - निवासिनि इह पर - सिद्धि - प्रदे ! कालातीता काली कमला तू वरदे ॥१०॥ जग०
शक्ति शक्ति - धर तू ही नित्य अभेद - मयी। भेद - प्रदर्शिनि वाणी विमले ! वेद - त्रयी ॥११॥ जग०
हम अति दीन दुःखी माँ, विपत जाल घेरे। हैं कपूत अति कपटी पर बालक तेरे ॥१२॥ जग०
निज स्वभाव - वश जननी दया - दृष्टि कीजै। करुणा - कर करुणा-मयि चरण - शरण दीजै ॥१३॥ जग०

॥ श्री देवी आरती सम्पूर्णम् ॥

अथ देव्यपराध–क्षमापन–स्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो। न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुति - कथाः ॥
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनम्। परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेश - हरणम् ॥१॥
विधेरज्ञानेन द्रविण - विरहेणालसतया। विधेयाशक्यत्वात् - तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ॥
तदेतत् क्षन्तव्यं जननि ! सकलोद्धारिणि शिवे ! कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥२॥
पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि ! बहवः सन्तिः सरलाः। परं तेषां मध्ये विरल - तरलोऽहं तव सुतः ॥

मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे ! कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३॥
जगन्मातर्मातस्तव चरण - सेवा न रचिता । न वा दत्तं देवि ! द्रविणमपि भूयस्तव मया ॥
तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे । कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४॥
परित्यक्ता देवा विविध - विध - सेवाकुलतया । मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ॥
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता । निरालम्बो लम्बोदर - जननि ! कं यामि शरणं ॥५॥
श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपम - गिरा । निरातंको रंको विहरति चिरं कोटि - कनकैः ॥
तवापर्णे ! कर्णे विशति मनु - वर्णे फलमिदं । जनः को जानीते जननि ! जपनीयं जप - विधौ ॥६॥
चिता - भस्मालेपो गरलमशनं दिक् - पट - धरो । जटा - धारी कण्ठे भुजग - पति - हारी पशु-पतिः ॥
कपाली भूतेशो भजति जगदीशैक - पदवीं । भवानि ! त्वत्-पाणि-ग्रहण - परिपाटी फलमिदम् ॥७॥
न मोक्षस्याकांक्षा भव-विभव-वाञ्छाऽपि च न मे । न विज्ञानापेक्षा शशि-मुखि ! सुखेच्छापि च न मे ॥
अतस्त्वां संयाचे जननि ! जननं यातु मम वै । मृडानी रुद्राणी शिव-शिव - भवानीति जपतः ॥८॥
नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः । किं रूक्ष - चिन्तन - परैर्न कृतं वचोभिः ॥
श्यामे ! त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे । धत्से कृपामुचितमम्ब ! परं तथैव ॥९॥
आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे ! करुणार्णवेशि ! नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधा-तृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥१०॥ जगदम्ब ! विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि । अपराध-परम्परा-परं न हि माता समुपे-

क्षते सुतम् ॥११॥ मत्-समः पातकी नास्ति पापघ्नो त्वत्-समा न हि । एवं ज्ञात्वा महा-देवि ! यथा योग्यं तथा कुरु ॥१२॥

॥ श्रीशंकराचार्य-विरचितं देव्यपराध-क्षमापन-स्तोत्रम् ॥

परिशिष्ट

१ सप्तशती–नायिकाया महाकाल्याश्चतुः–षष्ठि-योगिन्यः

जया च विजया चैव जयन्ती चापराजिता । दिव्य - पूर्वा[1] योगिनी च महा-पूर्वाथ[2] योगिनी ॥१॥
सिद्ध - पूर्वा[3] योगिनी च ततस्त्वथ गणेश्वरी । प्रेताशी डाकिनी चाथ कमला तु ततो मता ॥२॥
काल - रात्री ततः प्रोक्ता ततष्टङ्कारिणी मता । रौद्री चैवाऽथ वेताली ह्रूंकारी ऊर्ध्वं - केशिनी ॥३॥
विरूपाक्षी च शुष्कांगी ततस्तु नर - भोजिनी । फेट्-कारी चोर - चन्द्री च धूमाक्षी कलह-प्रिया ॥४॥
राक्षसी घोर - रक्ताक्षी विश्व - रूपी भयंकरी । चण्डयन्ता[4] चण्डमारी च वाराही मुण्ड-धारिणी ॥५॥
भैरवी ततः ऊर्ध्वाक्षी दुर्मुखी प्रेत - वाहिनी । खट्वांगी चैव लम्बोष्ठी मालिनी मति योगिनी ॥६॥
काली रक्ता च कंकाली ततस्तु भुवनेश्वरी । त्रोटाकी च महा - मारी यम - दूती करालिनी ॥७॥
केशिनी मेदिनी चैव रोम - गंगा प्रवाहिनी । विडाली चैव कान्तिश्च लोली चाथ जया स्मृता ॥८॥
अधो - मुखी ततः प्रोक्ता ततश्चण्डोग्र - धारिणी । व्याघ्री ततः कांक्षिणी च ततस्तु प्रेत - भक्षिणी ॥९॥
धूर्जटी विकटा चैव घोरा चाथ कपालिनी । विष-लम्बिनी ततः प्रोक्ता योगिन्यः स-क्रमं इमाः ॥१०॥
महाकाल्याश्चतुः - षष्ठिः पूजनीया विधानतः ।

१. दिव्य-योगिनी, २. महा-योगिनी, ३. सिद्ध-योगिनी ४. चण्डमारी, चण्डी

२ सप्तशती–नायिकाया महा–लक्ष्म्याश्चतुः–षष्ठि–योगिन्यः

दक्ष - कर्णा राक्षसी च क्षयन्ती च तथा पुनः । छाया क्षया पिंगलाक्षी अक्षया नाशिनी तथा ॥१॥
इला इलावती चैव लया लीना तथा मता । लंका लंकेश्वरी चैव लरसा विमला तथा ॥२॥
हुताशनी विशालाक्षी हूंकारी वडवा - मुखी । महा - रवा महा - क्रूरा क्रोधिनी च खरानना ॥३॥
सर्वज्ञा तरला तारा ततः श्रृग्वेदिनी मता । रौद्री तथा च सरसा ततस्तु रस - संग्रहा ॥४॥
शर्वरी ताल - जंघा च रक्ताक्षी तु ततः परम् । विद्युज्जिह्वा करंकिणी मेघ - नादा ततो मता ॥५॥
चण्डोग्रा काल - कर्णा च तथा चैव द्विपातना[१] । पद्मा पद्मावती चैव प्रपंचा ज्वलितानना ॥६॥
पिचु - वक्त्रा पिशाची च पिशिताशी च लोलुपा । पार्वती पावनी चैव तापिनी वामिनी तथा ॥७॥
विकृत-पूर्वाऽऽशया[२] चैव वृहत्-कुक्षिस्ततः परम् । दंष्ट्राली विश्व-रूपी[३] च यम-जिह्वा ततो मता ॥८॥
जयन्ती च दुर्जया च तथा चैव यमान्तिका । विडाला रेवती चाथ प्रेताशी विजया तथा ॥९॥
महालक्ष्म्यास्तु योगिन्यश्चतुः-षष्ठिः क्रमादिमाः । पूजनीयाः प्रयत्नेन सिद्धि - कामैस्तु साधकैः ॥१०॥

१. पाठान्तर : द्विपानना, २. विकृताशया, ३. पाठान्तर : विश्व-रूपा ।

३ सप्तशती–नायिकाया महा–सरस्वत्याः चतुः–षष्ठि–योगिन्यः

पिंगलाक्षी विषलाभी समृद्धिर्वृद्धिरेव च । श्रद्धा स्वाहा स्वधा भिक्षा माया संज्ञा वसुन्धरा ॥१॥
त्रैलोक्य - धात्री सावित्री गायत्री त्रिपदेश्वरी । सुरूपा बहु - रूपा च स्कन्द-माताऽच्युत - प्रिया ॥२॥
विमला कमला चैव दारुणी चारुणी तथा । प्रकृतिर्विकृतिश्चैव सृष्टिः स्थितिश्च संहृतिः ॥३॥

सन्ध्या माता सती हंसी तथा च मद-वर्जिका । परा तथा देव - माता ततो भगवती किल ॥४॥
देवकी चैव कमलालका[१] च त्रिमुखी तथा । सप्त-मुखी ततो देवी सुरासुर - विमर्दिनी ॥५॥
लम्बोष्ठी ऊर्ध्व-केशी च ततो बहु - शिरा मता । वृकोदरी रथ - रेखा शशि - रेखा ततः परम् ॥६॥
गगन - वेगा पवन-वेगा भुवन - पाला तथा मता । मदनातुरा अनंगा च अनंग - मदना तथा ॥७॥
अनंग - मेखलाऽनंग - कुसुमा च ततो मता । विश्व - रूपा तथा चैवाऽसुर - पूर्वा भयंकारी[२] ॥८॥
अक्षोभ्या च तथा देवी[३] मता वै सत्य - वादिनी । वज्र-रूपा वज्र-रेखा तथा शुचि - व्रता मता ॥९॥
वरदा चैव वागीशी[४] चतुः - षष्ठि - क्रमेण तु । महा - पूर्वा सरस्वत्याः योगिन्यस्तु मता इमाः ॥१०॥

१. पाठान्तर : कमलालया, २. असुर भयंकारी, ३. 'देवी' पद पूर्ति-हेतु है, नाम नहीं है, ४. पाठान्तर : वागेशी ।

टिप्पणी :—काठमाण्डू (नेपाल) से पं० लोकनाथ रेगमी के संग्रहालय से प्राप्त पुस्तक के अनुसार योगिनियाँ एवं उनके ७०० नाम ।

अतिरिक्त-श्लोकाः

सात सौ श्लोकों के अतिरिक्त जो श्लोक प्राप्त हुए हैं, वे यहाँ उद्धृत है । इनका सङ्केत क्रमशः पृष्ठ-संख्या ५० (१-२), ५१ (३, ४, ५, ६), ५२ (७), ५३ (८), ५७ (९, १०, ११, १२, १३, १४), ५८ (१५), ६५ (१६), ७० (१७), ७१ (१८, १९, २०), ७२ (२१, २२), ७४ (२३) पर दिया जा चुका है । कोष्ठक के अङ्क नीचे उद्धृत श्लोकों को सूचित करते हैं—

१. प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रयावनतो नृपम् । उपविश्य स्थिरो भूत्वा तमुवाच विशोत्तमः ॥
२. समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले । धनवान् धर्म - निपुणः सत्य - वागनुसूचकः ॥
३. प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रयावनतो नृपम् । उपविश्य स्थिरो भूत्वा तमुवाच विशोत्तमः ॥

राजोवाच

४. ममापि राज्यजं दुःखं दुनोति किल मानसम् । पृच्छावाद्य मुनिं शान्तं शोक - नाशनमौषधम् ॥
५. एवं कृत्वा मतिं तौ तु राजा वैश्यस्य जग्मतुः । मुनिं तौ विनयोपेतौ प्रष्टुं शोकस्य कारणम् ॥
६. आसीनं सम्यगासीनः शान्तं शान्तिमुपागताः ।

ऋषिरुवाच

७. शृणु राजन् ! प्रवक्ष्यामि कारणं बन्ध-मोक्षयोः । महा - मायेति विख्याता सर्वेषां प्राणिनामिह ॥
ब्रह्म - विष्णुस्तथेशान - तुराषाड् वरुणोऽनिलः । सर्वे देवा मनुष्याश्च गन्धर्वोरग - राक्षसाः ॥
वृक्षाश्च विविधा वल्ल्यः पशवो मृग - पक्षिणः । मायाधीनाश्च ते सर्वे भाजनं बन्ध - मोक्षयोः ॥
तया सृष्टमिदं सर्वं जगत् - स्थावर - जङ्गमम् । तद् - वशे वर्तते नूनं मोह - जालेन यन्त्रितम् ॥
त्वं कियान् मानुषेष्वेकः क्षत्रियो रजसाविलः । ज्ञानिनामपि चेतांसि मोहयत्यनिशं हि सा ॥
ब्रह्मेश - वासुदेवाद्या ज्ञाने सत्यप्यशेषतः । तेऽपि राग-वशाल्लोके भ्रमन्ति परिमोहिताः ॥
८. तुष्टाव बोधनार्थं तं शुभैः स्तोत्रैर्हरिः । नारायणं जगन्नाथं निस्पन्दं योग - निद्रया ॥

दीनानाथ, हरे, विष्णो, वामनोत्तिष्ठ माधव ! भक्तार्ति - हृद् हृषीकेश ! सर्वावास ! जगत्पते ॥
अन्तर्यामिन्नमेयात्मन्, वासुदेव, जगत्पते ! दुष्टारि - नाशन - करश्चित्त - चक्र - गदा-धर ॥
सर्वज्ञ, सर्व - लोकेश, सर्व - शक्ति - समन्वित ! उत्तिष्ठोत्तिष्ठ देवेश ! दुःख - नाशन ! पाहि मां ॥
विश्वम्भर, विशालाक्ष, पुण्य - श्रवण - कीर्तन ! जगद्योने निराकार्‌ा सर्ग - स्थित्यन्त - कारकः ॥
इमौ दैत्यौ महाराजं हन्तु - कामौ मदोद्धतौ । न जानात्यखिलाधारं कथं मां संकटे गतम् ॥
उपेक्षसेऽति - दुःखार्तं यदि मां शरणागतम् । पालक त्वं महा-विष्णो ! निराधारं भवेत् ततः ॥
एवं स्तुतोऽपि भगवान् न बुबोध यदा हरिः । योग - निद्रा - समाक्रान्तस्तदा ब्रह्मा ह्यचिन्तयत् ॥
न्यूनं शक्ति-समाक्रान्तो विष्णुर्निद्रा - वशं गतः । जजागार न धर्मात्मा किं करोम्यद्य दुःखितः ॥
हन्तु - कामावुभौ प्राप्तौ दानवौ मद - गर्वितौ । किं करोमि, क्व गच्छामि नास्ति मे शरणं क्वचित् ॥
एवं संचिन्त्य मनसा निश्चयं प्रतिपद्य च । विचार्य मनसाऽप्येवं शक्तिर्मे रक्षणे क्षमा ॥
यया ह्यचेतनो विष्णुः कृतोऽस्ति स्पन्द-वर्जितः । एवं कृत्वा मतिं ब्रह्मा पद्म - नाल - स्थितस्तदा ॥
९. निसृत्य हरि - देहात्तु संस्थिता पार्श्वतस्तदा । त्यक्त्वाङ्गानि च सर्वाणि विष्णोरतुल - तेजसः ॥
निर्गता योग - निद्रा सा नाशाय च तयोस्तदा । निष्पन्दित - शरीरोऽसौ यदा जातो जनार्दनः ॥
धाता परमिकां प्राप्तो मुदं दृष्ट्वा हरिं ततः । यदा विनिर्गता निद्रा देहात् तस्य जगद् - गुरोः ॥
१०. तदाऽपश्यत् स्थितं तत्र भय - त्रस्तं प्रजापतिम् । उवाच च महा - तेजा मेघ - गम्भीरया गिरा ॥

विष्णुरुवाच

किमागतोऽसि भगवँस्तपस्त्यक्त्वाऽत्र पद्मज ! कस्माच्चिन्तातुरोऽसि त्वं भयाकुलित - मानसः ॥

ब्रह्मोवाच

त्वत् - करामलजौ देव - दैत्यौ च मधु-कैटभौ । हन्तुं मां समुपायातौ घोर - रूपौ महा - बलौ ॥

विष्णुरुवाच

तिष्ठाद्य निर्भयो जातस्तौ हनिष्याम्यहं किल । युद्धायाजग्मतुर्मूढौ मत् - समीपं गतायुषौ ॥

११. न श्रान्तौ दानवौ घोरौ श्रान्तोऽहं चैतदद्भुतम् । हरिणा चिन्तितं तत्र कारणं मरणे तयोः ॥

१२. तुष्टोऽस्मि तव युद्धेन वासुदेवोद्भवेन च ।

१३. तच्छ्रुत्वा वचनं विष्णोस्तौ दैत्यौ चाति-विस्मितौ । वञ्चिताविति मन्वानौ तस्थतुः शोक - संयुतौ ॥

विचार्य मनसा तौ तु दानवौ विष्णुमूचतुः । प्रेक्ष्य सर्वं जल - मयं भूमि-स्थल - विवर्जितम् ॥

१४. निर्जले विपुले देशे हनस्व मधु - सूदन !

वध्यावावां तु भवतः सत्य - वाग्भव माधव ! स्मृत्वा चक्रं तदा विष्णुस्तावुवाच हसन् हरिः ॥

हन्म्यद्य वां महा - भागौ निर्जले विपुले स्थले । उक्त्वैवं देव - देवेशः ऊरू कृत्वाति - विस्तरौ ॥

दर्शयामास तौ तत्र निर्जलं च जलोपरि । भगवान् द्विगुणं चक्रे जघने विस्मितौ तदा ॥

शीर्षे सन्दधतां तत्र जघने परमाद्भुते । रथांगेन तदाऽभिन्ने विष्णुना प्रभविष्णुना ॥

१५. सागरः सकलो व्याप्तस्तदा वै मेदसा तयोः ।

देवा ऊचुः

१६. देवदेव, जगन्नाथ, सृष्टि - स्थित्यन्त - कारक ! दया - सिन्धोर्महाराज ! त्राहि नः शरणागतान् ॥

महिषेण महाराज ! पीडिताः पाप - कर्मणा । असाध्येनापि दुष्टेन वर - दृप्तेन पापिना ॥
यज्ञ - भागानसौ भुंक्ते ब्रह्मणः प्रतिपादितान् । अमरा गिरि - दुर्गेषु भ्रमन्ति च भयातुराः ॥
१७. कुतः केनायमत्युग्रः शब्दः कर्ण - व्यथा - करः । देवो वा दानवो वाऽपि यो भवेत् स्वन-कारकः ॥
गृहीत्वा तं दुरात्मानं मत् - समीपं नयन्त्विह । अहं गत्वा हनिष्यामि तं पापं वितथ - श्रमम् ॥
उक्त्वैवं तेन ते दूता देवीं सर्वांग - सुन्दरीम् । अष्टादश - भुजां दिव्यां सर्वाभरण - भूषिताम् ॥
सर्व - लक्षण - सम्पन्नां वरायुध - धरां शुभाम् । दधतीं चषकं हस्ते पिबतीं च मुहुर्मुहुः ॥
संवीक्ष्य भय - भीतास्ते जग्मुस्त्रस्ता सुशंकिताः । सकाशे महिषस्याशु तमूचुः स्वन - कारणम् ॥
१८. जगाम तरसा कामं गणाश्व - रथ - संयुतः ।

ऋषिरुवाच

१९. एवं तस्य वचः श्रुत्वा प्रहस्य प्रमदोत्तमा । तमुवाच महाराज ! मेघ - गंभीरया गिरा ॥
२०. गच्छ पातालमधुना जीवितेच्छा यदास्ति ते । नोचेत् कृपागसं दुष्टं हनिष्यामि रणांगणे ॥

ऋषिरुवाच

२१. एवं देव्याः वचः श्रुत्वा चिन्तयामास दानवः । यथाद्याभिहितं देव्या यथासीच्च करोतु सः ॥
एवं संचिन्त्य मेधावी जगाम नृप - सन्निधौ । प्रणम्य तमुवाचेदं कृताञ्जलिरमात्यजः ॥
२२. निर्गुणो निर्ममोऽनन्तो निरालम्बो निराश्रयः । सर्वज्ञः सर्वगः साक्षी पूर्णः पूर्णाशयः शिवः ॥
सर्वावासः क्षमः शान्तः सर्वं - दृक् सर्व-भावनः । समस्तैर्दानवैर्युक्तस्त्वन्यथा हन्मि संगरे ॥
२३. तिष्ठ तिष्ठेति चैवोक्त्वाऽन्ये दैत्या युयुधुर्मृधे । रुधिरौघ - विलुप्तांगा संग्रामे लोम - हर्षणे ॥

हवनात्मक सम्पूर्ण दुर्गा-सप्तशती

।। श्रीगुरवे नमः । श्री गणेशाय नमः ।।

ईशानाम्नायात्मिका नवाक्षरा दश-वक्त्रा महा-काली-ध्यान

खड्गं चक्र-गदेषु-चाप-परिघान् छूलं भुशुण्डीं शिरः, शङ्खं सन्दधतीं करैस्त्रि-नयनां सर्वाङ्ग-भूषावृताम् ।।
नीलाश्म-द्युतिमास्य-पाद-दशकां सेवे महा-कालिकाम् । यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधु-कैटभम् ।।
ईशानाम्नायगां चैव दश - वक्त्रां नवाक्षराम् । महा - कालीं सदा ध्यायेद् भक्तिदां ज्ञान - पोषिकाम् ।।

ॐ नमश्चण्डिकायै ।। ॐ ऐं मार्कण्डेय उवाच ।।

सावर्णिः सूर्य-तनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः । निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम । ॐ ऐं श्रां आद्यायै नमः स्वाहा ।।१।। महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः । स बभूव महा-भागः सावर्णिस्तनयो रवेः । ॐ ऐं ह्रीं काल्यै नमः स्वाहा ।।२।। स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्र-वंश-समुद्भवः । सुरथो नाम राजाऽभूत् समस्ते क्षिति-मण्डले । ॐ ऐं क्लीं करालयै नमः स्वाहा ।।३।। तस्य पालयतः सम्यक् प्रजाः पुत्रानिवौरसान् । बभूवुः शत्रवो भूपः कोला-विध्वंसिन स्तदा । ॐ ऐं श्रीं महा-काल्यै नमः स्वाहा ।।४।। तस्य तैरभवद् युद्धमति-प्रबल-दण्डिनः । न्यूनैरपि च तैर्युद्धैः कोला-विध्वंसिभिर्जितः । ॐ ऐं प्रीं कल्याण्यै नमः स्वाहा ।।५।। ततः स्वपुरमायातो निज-देशाधिपोऽभवत् । आक्रान्तः स महा-भागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः । ॐ ऐं ह्रीं कलावत्यै नमः स्वाहा ।।६।। अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः । कोशो बलं चापहृतं तत्रापि स्वपुरे ततः । ॐ ऐं ह्रीं महा-काल्यै नमः स्वाहा ।।७।। ततो मृगया-व्याजेन

हृत-स्वाम्यः स भूपतिः । एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम् । ॐ ऐं स्त्रौं कलि-दर्पघ्न्यै नमः स्वाहा ॥८॥ स तत्राश्रममद्राक्षीद् द्विज-वर्यस्य मेधसः । प्रशान्त श्वापदाकीर्णं मुनि-शिष्योपशोभितम् । ॐ ऐं प्रें कपर्दीश-कृपा-न्वितायै नमः स्वाहा ॥९॥ तस्थौ कंचित्स कालं च मुनिना तेन सत्कृतः । इतश्चेतश्च विचरँस्तस्मिन् मुनि-वराश्रमे । ॐ ऐं म्रीं कालिकायै नमः स्वाहा ॥१०॥ सोऽचिन्तयत् तदा तत्र ममत्वाकृष्ट-चेतनः । मत्-पूर्वैः पालितं पूर्वं मया हीनं पुरं हि तत् । ॐ ऐं ह्ल्रीं काल-मात्र्यै नमः स्वाहा ॥११॥ मद्-भृत्यैस्तैरसद्-वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा । न जाने स प्रधानो मे शूर-हस्ती सदा-मदः । ॐ ऐं क्लीं कालानल-सम-द्युत्यै नमः स्वाहा ॥१२॥ मम वैरि-वशं यातः कान् भोगानुपलप्स्यते । ये ममानुगता नित्यं प्रसाद-धन-भोजनैः । ॐ ऐं स्त्रीं कपर्दिन्यै नमः स्वाहा ॥१३॥ अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्य-महीभृताम् । असम्यग्-व्यय-शीलैस्तैः कुर्वद्भिः सततं व्ययम् । ॐ ऐं क्रां करालास्यायै नमः स्वाहा ॥१४॥ संचितः सोऽति-दुःखेन क्षयं कोशो गमिष्यति । एतच्चान्यच्च सततं चिन्तयामास पार्थिवः । ॐ ऐं ह्लीं करुणामृत-सागरायै नमः स्वाहा ॥१५॥ एवं चिन्ता-परो राजा वृक्ष-मूलं स्थितो यदा । तदाऽऽजगाम वैश्यस्तु कश्चिदार्ति-परस्तदा । ॐ ऐं क्रीं कृपा-मय्यै नमः स्वाहा ॥१६॥ तत्र विप्राश्रमाभ्याशे वैश्यमेकं ददर्श सः । स पृष्टस्तेन कस्त्वं भी हेतुश्चागमनेऽत्र कः । ॐ ऐं चां कृपाधारायै नमः स्वाहा ॥१७॥ स शोक इव कस्मात् त्वं दुर्मना इव लक्ष्यसे । अस्याकर्ण्य वचस्तस्य भूपतेः प्रणयोदितम् । ॐ ऐं भें कृपापारायै नमः स्वाहा ॥१८॥ ॥ **वैश्य उवाच** ॥

मित्राहं वैश्य-जातीयः समाधिर्नाम विश्रुतः । पुत्र-दारैर्निरस्तश्च धन-लाभादसाधुभिः । ॐ ऐं क्रीं कृपागमायै नमः स्वाहा ॥१९॥ विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम् । स्वजनेन च संत्यक्तः प्राप्तोऽस्मि वनमाशु वै । ॐ ऐं वैं कुशान्वै नमः स्वाहा ॥२०॥ वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाप्त-बन्धुभिः । सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां कुशलं कुशलात्मि-

काम् । ॐ ऐं ह्रौं कपिलायै नमः स्वाहा ॥२१॥ प्रवृत्ति स्व-जनानां च दाराणां चात्र संस्थितः । किं न तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम् । ॐ ऐं युं कृष्णायै नमः स्वाहा ॥२२॥ कथं ते किं नु सद्-वृत्ता दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः । कोऽसि त्वं भाग्यवान् भासि कथयस्व प्रियाधुना । ॐ ऐं जुं कृष्णानन्द-विवर्द्धन्यै नमः स्वाहा ॥२३॥ ॥**राजोवाच**॥ सुरथो नाम राजाऽहं दस्युभिः पीडितोऽभवम् । प्राप्तोऽस्मि गत-राज्योऽत्र मन्त्रिभिः परि-वंचितः । ॐ ऐं हं काल-रात्र्यै नमः स्वाहा ॥२४॥ कुटम्बं मे निरालम्बं मया हीनं सु-दुःखितम् । भविष्यति च चिन्तार्तं व्याधि-शोकाय तापितम् । ॐ ऐं शं काम-रूपायै नमः स्वाहा ॥२५॥ यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः पुत्र-दारादिभिर्धनैः । तेषु किं भवतः स्नेहमनु-बध्नाति मानसम् । ॐ ऐं रों काम-पाश-विमोचन्यै नमः स्वाहा ॥२६॥ .यैर्निरस्तोऽसि पुत्राद्यैरसद्-भूतैः सुवालिशैः । तान् दृष्ट्वा किं सुखं तेऽद्य भविष्यति महा-मते । ॐ ऐं यं कादम्बिन्यै नमः स्वाहा ॥२७॥ **वैश्य उवाच** ॥ एवमेतद् यथा प्राह भवानस्मद्-गतं वचः । मनो मे न स्थिरं राजन् ! भवदद्य दुःखितम् । ॐ ऐं विं कला-धारायै नमः स्वाहा ॥२८॥ चिन्तयात्र कुटुम्बस्य दुस्त्यजस्य दुरात्मभिः । किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मनः । ॐ ऐं वैं कलि-कल्मष-नाशिन्यै नमः स्वाहा ॥२९॥ यैः संत्यज्य पितृ-स्नेहं धन-लुब्धैर्निराकृतः । पतिः स्व-जन-हार्दं च हार्दितेष्वेव मे मनः । ॐ ऐं चें कुमारी-पूजन-प्रीतायै नमः स्वाहा ॥३०॥ किमेतन्नाभि-जानामि जानन्नपि महामते ! यत्-प्रेम-प्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु । ॐ ऐं ह्रीं कुमारी-पूजकालयायै नमः स्वाहा ॥३१॥ तेषां कृते मे निःश्वासो दौर्मनस्यं च जायते । करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम् । ॐ ऐं क्रूं कुमारी-भोजनानन्दायै नमः स्वाहा ॥३२॥ **मार्कण्डेय उवाच** ॥ ततस्तौ सहितौ विप्र तं मुनिं समुपस्थितौ । समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिव-सत्तमः । ॐ ऐं सं ह्रीं वं कुमारी-रूप-धारिण्यै नमः स्वाहा ॥३३॥ कृत्वा तु तौ यथा-न्यायं यथार्हं तेन संविदम् ।

उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्य-पार्थिवौ । ॐ ऐं कं कदम्ब-वन-संचारायै नमः स्वाहा ॥३४॥ गत्वा त्वं प्रणिपत्याह राजा ऋषिमनुत्तमम् । तमुवाच परं ज्ञानं शोक-मोह-विनाशनम् । ॐ ऐं श्रां कदम्ब-वन-वासिन्यै नमः स्वाहा ॥३५॥ **राजोवाच** ॥ भगवँस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत् । दुःखाय यन्मे मनसः स्वचित्तायत्ततां विना । ॐ ऐं त्रों कदम्ब-पुष्प-संतोषायै नमः स्वाहा ॥३६॥ ममत्वं गत-राज्यस्य राज्यांगेष्वखिलेष्वपि । जानतोऽपि यथाज्ञस्य किमेतन्मुनि-सत्तम । ॐ ऐं स्त्रां कदम्ब-पुष्प-मालिन्यै नमः स्वाहा । अयं च निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः । स्वजनेन च संत्यक्तेषु हार्दी तथाप्यति । ॐ ऐं ज्यों किशोर्यै नमः स्वाहा ॥३८॥ एवमेष तथाऽहं च द्वावप्यत्यन्त-दुःखितौ । दृष्ट-दोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्ट-मानसौ । ॐ ऐं रौं कालकंठायै नमः स्वाहा ॥३९॥ **राजोवाच** ॥ तत्-किमेतन्महा-भाग ! यन्मोहो ज्ञानिनोरपि । ममास्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढ़ता । ॐ ऐं द्रां कल-नाद-निनादिन्यै नमः स्वाहा ॥४०॥ मोहो नैवापसरति किं तत्-कारणमद्भुतम् । स्वामिँस्त्वमसि सर्वज्ञः सर्व-संशय-नाश-कृत् । ॐ ऐं द्रों कादम्बरी-पान-रतायै नमः स्वाहा ॥४१॥ **ऋषिरुवाच** ॥ ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषय-गोचरे । विषयश्च महा-भाग ! याति चैवं पृथक् पृथक् । ॐ ऐं ह्रीं कादम्बरी-प्रियायै नमः स्वाहा ॥४२॥ दिवान्धाः प्राणिनः केचिद् रात्रावन्धास्तथापरे । केचिद् दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्य-दृष्टयः । ॐ ऐं द्रूं कपाल-पात्र-निरतायै नमः स्वाहा ॥४३॥ ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किंतु ते नहि केवलम् । यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशु-पक्षि-मृगादयः । ॐ ऐं शीं कंकाल-माल्य-धारिण्यै नमः स्वाहा ॥४४॥ ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां मृग-पक्षिणाम् । मनुष्याणां च यत्तेषां तुल्य-मन्यत्तथोभयोः । ॐ ऐं मीं कमलासन-संतुष्टायै नमः स्वाहा ॥४५॥ ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान् पतङ्गाञ्छाव-चञ्चुषु । कण-मोक्षाद् ऋतान्मोहात् पीड्यमानानपि क्षुधा । ॐ ऐं श्रों कमलासन-वासिन्यै नमः स्वाहा ॥४६॥ मानुषा

मनुज-व्याघ्र-साभिलाषाः सुतान् प्रति । लोभात् प्रत्युपकाराय नन्वेतान् किं न पश्यसि । ॐ ऐं जुं कमलालय-मध्य-स्थायै नमः स्वाहा ॥४७॥ तथापि ममतावर्ते मोह-गर्ते निपातिताः । महामाया-प्रभावेण संसार-स्थिति-कारिणा । ॐ ऐं ह्ल्रूं कमलामोद-मोदिन्यै नमः स्वाहा ॥४८॥ तन्नात्र विस्मयः कार्यो योग-निद्रा जगत्पतेः । महा-माया हरेश्चैषा तया संमोह्यते जगत् । ॐ ऐं श्रूं कल-हंस-गत्यै नमः स्वाहा ॥४९॥ ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा । बलादाकृष्य मोहाय महा-माया प्रयच्छति । ॐ ऐं प्रीं क्लैव्य-नाशिन्यै नमः स्वाहा ॥५०॥ तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम् । सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये । ॐ ऐं रं काम-रूपिण्यै नमः स्वाहा ॥५१॥ सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतु-भूता सनातनी । संसार-बन्ध-हेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी । ॐ ऐं वं काम-रूप-कृतावासायै नमः स्वाहा ॥५२॥ **राजोवाच** ॥ भगवन् ! का हि सा देवी महा-मायेति यां भवान् । ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च किं द्विज । ॐ ऐं व्रीं काम-पीठ-विलासिन्यै नमः स्वाहा ॥५३॥ यत्-प्रभावा च सा देवी यत्-स्वरूपा यदुद्भवा । तत्-सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्म-विदां वर । ॐ ऐं ब्लूं कमनीयायै नमः स्वाहा ॥५४॥ **ऋषिरुवाच** ॥ नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् । तथापि तत्-समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम । ॐ ऐं स्त्रों कल्प-लतायै नमः स्वाहा ॥५५॥ देवानां कार्य-सिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा । उत्पन्ना तु तदा लोके सा नित्याप्यभिधीयते । ॐ ऐं ल्वां कमनीय-विभूषणायै नमः स्वाहा ॥५६॥ योग-निद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवी-कृते । आस्तीर्य शेषमभजत् कल्पान्ते भगवान् प्रभुः । ॐ ऐं लूं कमनीय-गुणाराध्यायै नमः स्वाहा ॥५७॥ तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधु-कैटभौ । विष्णु-कर्ण-मलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ । ॐ ऐं सां कोमलाङ्ग्यै नमः स्वाहा ॥५८॥ स नाभि-कमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजा-पतिः । दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तं च जनार्दनम् । ॐ ऐं रौं कृशोदर्यै नमः स्वाहा ॥५९॥ तुष्टाव योग-निद्रां तामेकाग्र-हृदय-

स्थितः । विबोधनार्थाय हरेर्हरि-नेत्र-कृतालयाम् । ॐ ऐं स्हौं कारणामृत-सन्तोषायै नमः स्वाहा ॥६०॥ विश्वेश्वरीं
जगद्धात्रीं स्थिति-संहार-कारिणीम् । निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः । ॐ ऐं क्रूं कारणानन्द-सिद्धिदायै नमः
स्वाहा ॥६१॥ **ब्रह्मोवाच** ॥ त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कार-स्वरात्मिका । सुधा त्वमक्षरे ! नित्या त्रिधा मात्रात्मिका
स्थिता । ॐ ऐं शौं कारणानन्द-जापिष्ठायै नमः स्वाहा ॥६२॥ अर्धं-मात्रा-स्थिता नित्या याऽनुच्चार्या विशेषतः ।
त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि ! जननी परा । ॐ ऐं श्रौं कारणार्चित-हर्षितायै नमः स्वाहा ॥६३॥ त्वयैतद्धार्यते
विश्वं त्वयैतत् सृज्यते जगत् । त्वयैतत् पाल्यते देवि ! त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा । ॐ ऐं वं कारणार्णव-समग्रायै नमः
स्वाहा ॥६४॥ विसृष्टौ सृष्टि-रूपा त्वं स्थिति-रूपा च पालने । तथा संहृति-रूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये । ॐ ऐं
त्रूं कारण-व्रत-पालिन्यै नमः स्वाहा ॥६५॥ महा-विद्या महा-माया महा-मेधा महा-स्मृतिः । महा-मोहा च भवती
महा-देवी महासुरी । ॐ ऐं क्रौं कस्तूरी-सौरभामोदायै नमः स्वाहा ॥६६॥ प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुण-त्रय-विभा-
विनी । काल-रात्रिर्महा-रात्रिर्मोह-रात्रिश्च दारुणा । ॐ ऐं क्लूं कस्तूरी-तिलकोज्ज्वलायै नमः स्वाहा ॥६७॥ त्वं
श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोध-लक्षणा । लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च । ॐ ऐं क्लीं
कस्तूरी-पूजन-रतायै नमः स्वाहा ॥६८॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा । शङ्खिनी चापिनी बाण-
भुशुण्डी-परिघायुधा । ॐ ऐं श्रीं कस्तूरी-पूजक-प्रियायै नमः स्वाहा ॥६९॥ सौम्या सौम्य-तराशेष-सौम्येभ्यस्त्वति-
सुन्दरी । परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी । ॐ ऐं ब्लूं कस्तूरी-दाह-जनन्यै नमः स्वाहा ॥७०॥ यच्च किञ्चित्
क्वचिद् वस्तु सदसद् वाखिलात्मिके । तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा किं त्वं स्तूयसे सदा । ॐ ऐं ठां कस्तूरी-मृग-तोषिण्यै
नमः स्वाहा ॥७१॥ यया त्वया जगत् सृष्टा जगत् पात्यत्ति यो जगत् । सोऽपि निद्रा-वशं नीतः कस्त्वां स्तोतु-

मिहेश्वरः । ॐ ऐं ठ्रीं कस्तूरी-भोजन-प्रीतायै नमः स्वाहा ॥७२॥ विष्णुः शरीर-ग्रहणमहमीशान एव च । कारिस्तास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्ति-मान् भवेत् । ॐ ऐं स्नां कर्पूर-चन्दनोक्षितायै नमः स्वाहा ॥७३॥ सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि ! संस्तुता । मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधु-कैटभौ । ॐ ऐं क्लूं कर्पूर-कारणाह्लादायै नमः स्वाहा ॥७४॥ प्रबोधं च जगत्-स्वामी नीयतामच्युतौ लघु । बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ । ॐ ऐं क्रैं कर्पूरामृत-पायिन्यै नमः स्वाहा ॥७५॥ देवि ! त्वमस्य जगतः किल कारणं हि । ज्ञातं मया एकल-वेद-वचोभिरम्ब ! यद्-विष्णुरप्यखिल-लोक-विवेक-कर्ता । निद्रा-वशं च गमितः पुरुषोत्तमो यः । ॐ ऐं च्रां कर्पूर-सागर-स्नातायै नमः स्वाहा ॥७६॥ को वेद ते जननि ! विलास-लीलां । मूढोऽस्म्यहं हरिरयं विवशश्च शेते । ईदृक्-तया सकल-भूत-मनो-निवासे । विद्वत्तमो विबुध-कोटिषु निर्गुणाय । ॐ ऐं फ्रां कर्पूर-सागर-लयायै नमः स्वाहा ॥७७॥ सांख्या वहन्ति पुरुषं प्रकृतिं च यां तां । चैतन्य-भाव-रहितां जगतश्च कर्त्रीम् । किं सादृशाऽसि कथमत्र जगन्निवासश्चैतन्यता-विरहितो विहितस्त्वयाद्य । ॐ ऐं ज्रीं कूर्चं-बीज-जप-प्रीतायै नमः स्वाहा ॥७८॥ नाट्यं तनोषि सगुणा विविध-प्रकारं । नो वेत्ति कोऽपि तव कृत्य-विधान-योगम् । ध्यायन्ति यां मुनि-गणा नियतं त्रिकालं । सन्ध्या तु नाम परिकल्प्य गुणा भवानि । ॐ ऐं जूं कूर्च-जाप-पारायणायै नमः स्वाहा ॥७९॥ बुद्धिर्हि बोध-करणा जगतां सदस्वं । श्रीश्चासि देवि ! सततं सुखदा सुराणाम् । कीर्तिस्तथा मति-धृतो किल कान्तिरेव । श्रद्धा रतिश्च सकलेषु जनेषु मातः । ॐ ऐं स्लूं कुलीनायै नमः स्वाहा ॥८०॥ नातः परं किल वितर्क-शतैः प्रमाणं । प्राप्तं मया यदिह दुःखमतिर्गतेन । त्वं चात्र सर्व-जगतां जननी तु सत्यं । निद्रालुतां वितरता हरिणात्र दृष्टम् । ॐ ऐं नों कौलिकाऽराध्यायै नमः स्वाहा ॥८१॥ त्वं देवि ! वेद-विदुषामपि दुर्विभाव्या । वेदोऽपि नूनमखिलार्थं-तया न वेद । यस्मात् त्वदुद्भवमसौ

श्रुतिराप्नुवाना । प्रत्यक्षमेव सकलं तव कार्यमेतत् । ॐ ऐं स्त्रीं कौलिक-प्रिय-कारिण्यै नमः स्वाहा ॥८२॥ कस्ते चरितमखिलं भुवि वेद धीमान्नाहं । हरिर्न च भवो न सुरास्तथान्ये । ज्ञातुं क्षमाश्च मुनयो न ममात्मजाश्च । दुर्वाच्य एव महिमा तव सर्व-लोके । ॐ ऐं ध्रीं दं कुलाचारायै नमः स्वाहा ॥८३॥ यज्ञेषु देवि ! यदि नाम न ते वदन्ति । स्वाहा च वेद-विदुषो हवने कृतेऽपि । न प्राप्नुवन्ति सततं मख-भाग-धेयं । देवास्त्वमेव विवुधेश्वरि ! वृत्ति-दासी । ॐ ऐं स्रूं कौतुकिन्यैं नमः स्वाहा ॥८४॥ त्राता वयं भगवति ! प्रथमं त्वया वै । देवारि-सम्भव-भयादधुना तथैव । भीतोऽस्मि देवि ! वरदे ! शरणं गतोऽस्मि । घोरं निरीक्ष्य मधुना सह कैटभं च । ॐ ऐं ज्रां कुल-मार्ग-प्रदर्शिन्यै नमः स्वाहा ॥८५॥ नो वेत्ति विष्णुरधुना मम दुःखमेतज्जाने । त्वयात्म-विवशी-कृत देह-यष्टिः । मुञ्चादि-देवमथवा जहि दानवेन्द्रौ । यद् रोचते तव कुरुष्व महानुभावे । ॐ ऐं वों काशीश्वर्यैं नमः स्वाहा ॥८६॥ जानन्ति ये न तव देवि ! परं प्रभावं । ध्यायन्ति ते हरिहरावपि मन्द-चित्ताः । ज्ञातं ममाद्य जननि ! प्रकटं प्रमाणं । यद्-विष्णुरप्यति-तरा विवशोऽथ शेते । ॐ ऐं ओं कष्ट-हर्त्र्यैं नमः स्वाहा ॥८७॥ सिन्धूद्भवाऽपि न हरिं प्रति-बोधितं वै । शक्तायति तव वशानुगमाद्य शक्त्या । मन्ये त्वया भगवति ! प्रसभं रमाऽपि । प्रस्वापिता न बुबुधे विवशी-कृतेव । ॐ ऐं श्रौं काशीश-वर-दायिन्यै नमः स्वाहा ॥८८॥ धन्यास्त एव भुवि भक्ति-परास्तवांघ्रौ । त्यक्त्वान्यदेव भजनं त्वयि लीन-भावाः । कुर्वन्ति देवि ! भजनं सकलं निकामं । ज्ञात्वा समस्त-जननीं किल काम-धेनुम् । ॐ ऐं ऋं काशीश्वर-कृत-मोदायै नमः स्वाहा ॥८९॥ धी-कान्ति-कीर्ति-शुभ-वृत्ति-गुणादयस्ते । विष्णोर्गुणास्तु परिहृत्य गताः क्व चाद्य । वन्दी-कृतो हरिरसौ ननु निद्रयाऽत्र । शक्त्या तवैव भगवत्यति-मानवत्या । ॐ ऐं रुं काशीश्वर-मनोर-मायै नमः स्वाहा ॥९०॥ त्वं शक्तिरेव जगतामखिल-प्रभावा । त्वन्निर्मितं च सकलं खलु भाव-मात्रम् । त्वं क्रीडसे

निज-विनिर्मित-मोह-जाले । नाट्ये यथा विहरते स्व-कृते च नृत्ये । ॐ ऐं क्लीं कल-मंजीर-चरणायै नमः स्वाहा ॥९१॥ विष्णुस्त्वया प्रकटितः प्रथमं युगादौ । दत्ता च शक्तिरमला खलु पालनाय । त्रातं च सर्वमखिलं विवशोऽक्ततोऽद्य । यद्-रोचते तव तथा प्रकरोषि नूनम् । ॐ ऐं दुं क्वणत्-काञ्ची-विभूषणायै नमः स्वाहा ॥९२॥ सृष्ट्वाऽत्र मां भगवति ! प्रविनाशितुं चेन्नेच्छास्ति ते कुरु दयां परिहृत्य मौनम् । कस्मादिमौ प्रकटितौ किल काल-रूपौ । यद्वा भवानि हसितुं नु किमिच्छसे माम् । ॐ ऐं ह्रीं कांचनाद्रि-कृतागारायै नमः स्वाहा ॥९३॥ ज्ञातं मया तव विचेष्टितमद्भुतं वै । कृत्वाऽखिलं जगदि रमसे स्वतन्त्रा । लीनं करोषि सकलं किल मां तथैव । हन्तुं स्व-मिच्छसि भवानि ! किमत्र चित्रम् । ॐ ऐं गूं कांचनाचल-कौमुद्यै नमः स्वाहा ॥९४॥ कामं कुरुष्व क्षयमद्य ममैव मातर्दुःखं । न मे मरणजं जगदम्बिकेऽत्र । कर्ता त्वमेव विहितः प्रथमं स चायं । दैत्याहतोऽथ मृत एव यशोगरिष्ठम् । ॐ ऐं लां काम-बीज-जपानन्दायै नमः स्वाहा ॥९५॥ उत्तिष्ठ देवि ! कुरु रूपमिवाद्भुतं त्वां । मां वा त्विमौ जहि यथेच्छसि बाल-लीले ! नोचेत् प्रबोधय हरिं निहनेदिमौ यस्त्वत्-साध्यमेतदखिलं किल कार्यं-जातम् । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं काम-बीज-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा ॥९६॥ **ऋषिरुवाच** ॥ एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेधसा । विष्णोः प्रबोध-नार्थाय निहन्तुं मधु-कैटभौ । ॐ ऐं गं कु-मतिघ्न्यै नमः स्वाहा ॥९७॥ नेत्रास्य-नासिका-बाहु-हृदयेभ्यस्तथोरसः । निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्त-जन्मनः । ॐ ऐं ऐं कुलीनार्ति-नाशिन्यै नमः स्वाहा ॥९८॥ उत्तस्थौ च जगन्नाथ-स्तया मुक्तो जनार्दनः । एकार्णवेऽहि-शयनात् ततः स ददृशे च तौ । ॐ ऐं श्रौं कुल-कामिन्यै नमः स्वाहा ॥९९॥ मधु-कैटभौ दुरात्मानावति-वीर्य-पराक्रमौ । क्रोध-रक्तेक्षणावत्तुं ब्रह्माणं जनितोद्यमौ । ॐ ऐं जुं ऐं कारायै नमः स्वाहा ॥१००॥ समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान् हरिः । पञ्च-वर्ष-सहस्राणि बाहु-प्रहरणो विभुः । ॐ ऐं डें

महा-कराल्यायै नमः स्वाहा ॥१०१॥ तावप्यति-बलोन्मत्तौ महा-माया-विमोहितौ । उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तो व्रियता-मेव केशव ! ॐ ऐं श्रौं महा-पिंगलायै नमः स्वाहा ॥१०२॥ प्रार्थयस्व हृषीकेश ! मनोऽभिलषितं वरम् । तयोस्तद्-वचन श्रुत्वा प्रत्युवाच जनार्दनः । ॐ ऐं छ्रां काल-काल्यै नमः स्वाहा ॥१०३॥ **विष्णुरुवाच** ॥ भवेतामद्य मे तुष्टौ मम हन्यावुभावपि । किमन्येन वरेणाऽत्र एतावृद्धि वृतं मम । ॐ ऐं क्रीं ह्लीं श्रीं काल-कंटक-घातिन्यै नमः स्वाहा ॥१०४॥ **ऋषिरुवाच** ॥ वञ्चिताभ्यां ततः तदा सर्वमापो-मयं जगत् । विलोक ताभ्यां गदितो भगवान् कमलेक्षणः । ॐ ऐं ह्लीं शं काम-क्रोध-विवर्जितायै नमः स्वाहा ॥१०५॥ आवां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता । तथा तूक्त्वा भगवता शंख-चक्र-गदा-भृता । ॐ ऐं ह्लीं हं काम-संहर्त्यै नमः स्वाहा ॥१०६॥ कृत्वा चक्रेण वैच्छिन्ने जघने शिरसी तयोः । गत-प्राणौ तदा जातौ दानवौ मधु-कंटभौ । ॐ ऐं ह्लौं कामाक्ष्यै नमः स्वाहा ॥१०७॥ एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम् । प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते । ॐ ऐं श्रीं शिवायै नमः स्वाहा ॥१०८॥

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) श्रीजगदम्बार्पणमस्तु ॥

वैदिक आहुति

एक उल्टे साबुत पान पर शाकल्य, घी में भिगोकर १ कमलगट्टा, १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल शहद ये सब चीजें स्रुची में रखकर खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽम्बिकेऽम्बालिके नमानयति कश्चनः । ससस्त्श्वकः सुभद्रिकां कांपीलवासिनी ॐ स्वाहा ॥२२।२३॥

बाद में स्रुवे से ५ बार घी छोड़ते हुए इस मन्त्र को बोल—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानाः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आदिशो

व्विदिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।।

(यजु० सं० अ० ६ । १९ मन्त्र)।

तान्त्रिक आहुति

ॐ सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै ऐं बीजाधिष्ठात्र्यै महा-कालिकायै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः ।।

इतना कहकर आहुति छोड़ें। सामान सब ऊपर लिखा है।

मध्यम चरित

आग्नेयाम्नायात्मिका नवाक्षरा महालक्ष्मी ध्यानम्

अक्ष-स्रक्-परशु-गदेशु-कुलिशं पद्मं धनुः-कुण्डिकाम् । शङ्खं चक्रमसिं च चर्म-जलजं घण्टां सुरा-भाजनम् ।।
शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननाम् । सेवे सैरिभ-मर्दिनीमिह महा-लक्ष्मीं सरोज-स्थिताम् ।।

ॐ ह्रीं **ऋषिरुवाच** ।। देवासुरमभूद् युद्धं पूर्णमब्द-शतं पुरा । महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे । ॐ ऐं ह्रीं श्रौं महा-लक्ष्म्यै नमः स्वाहा ।।१।। तत्रासुरैर्महा-वीर्यैं देव-सैन्यं पराजितम् । जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभू-न्महिषासुरः । ॐ ऐं ह्रीं ह्सूं दुर्गायै नमः स्वाहा ।।२।। ततः पराजिता देवा पद्म-योनिं प्रजापतिम् । पुरस्कृत्य गता-स्तत्र यत्रेश-गरुड़ध्वजौ । ॐ ऐं ह्रीं ह्रौं महा-गौर्यै नमः स्वाहा ।।३।। **देवा ऊचुः** ।। यथा-वृत्तं तयोस्तद्-वन्महिषासुर-चेष्टितम् । त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभि-भव-विस्तरम् । ॐ ऐं ह्रीं ह्रीं चण्डिकायै नमः स्वाहा ।।४।। सूर्येन्द्राग्न्य-निलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च । अन्येषां चाधिकारान् स स्वयमेवाधितिष्ठति । ॐ ऐं ह्रीं अं सर्वज्ञायै नमः

स्वाहा ।।५।। स्वर्गान्निराकृतः सर्वे तेन देव-गणा भुवि । विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्व-लोकेशायै नमः स्वाहा ।।६।। एतद् वः कथितं सर्वममरारि-विचेष्टितम् । शरणं वः प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम् । ॐ ऐं ह्रीं चां सर्व-कर्म-फल-प्रदायै नमः स्वाहा ।।७।। **ऋषिरुवाच** ।। श्रुत्वा तद्-वचनं विष्णुस्तानुवाच हसन्निव । **विष्णुरुवाच** ।। युद्धं कृतं पुराऽस्माभिस्तथापि न मृतौ ह्यसौ । ॐ ऐं ह्रीं मुं सर्व-तीर्थ-मयायै नमः स्वाहा ।।८।। अद्य सर्व-सुराणां वै तेजोभी-रूप-सम्पदा । उत्पन्ना चेद् वरारोहा स हन्यात्तं रणे बलात् । ॐ ऐं ह्रीं डां पुण्यायै नमः स्वाहा ।।९।। हयारिं वर-दृप्तं च माया-गत-विशारदम् । हन्तुं योग्या भवेन्नारी शक्यं तै निर्मिता हि नः । ॐ ऐं ह्रीं यैं देव-योनये नमः स्वाहा ।।१०।। प्रार्थयन्तु च तेजोंऽशान् स्त्रियोऽस्माकं तथा पुनः । उत्पन्नैस्तैश्च तेजोंऽशैस्तेजो-राशिर्भवेद् यथा । ॐ ऐं ह्रीं विं अयोनिजायै नमः स्वाहा ।।११।। आयुधानि वयं दद्मः सर्वे रुद्र-पुरोगमाः । तस्यै सर्वाणि दिव्यानि त्रिशूलादीनि । ॐ ऐं ह्रीं च्चें भूमिजायै नमः स्वाहा ।।१२।। सर्वायुध-धरा नारी सर्व-तेजः-समन्विता । हनिष्यति दुरात्मानं तं पाप-मद-गर्वितम् । ॐ ऐं ह्रीं ईं कोटि-सूर्य-सम-प्रभायै नमः स्वाहा ।।१३।। **ऋषिरुवाच** ।। इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधु-सूदनः । चकार कोपं शम्भुश्च भ्रकुटी-कुटिलाननौ । ॐ ह्री सौं महा-मात्रे नमः स्वाहा ।।१४।। ततोऽति-कोप-पूर्णस्य चक्रिणो वदनात् ततः । निश्चक्राम महत्-तेजो ब्रह्मणः शंकरस्य च । ॐ ऐं ह्रीं व्रां तेजोवत्यै नमः स्वाहा ।।१५।। अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः । निर्गतं सुमहत्-तेजस्तच्चक्यं समगच्छतः । ॐ ऐं ह्रीं व्रों विन्ध्य-वासिन्यै नमः स्वाहा ।।१६।। अतीव-तेजसः कूट ज्वलन्तमिव पर्वतम् । ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वाला-व्याप्त दिगन्तरम् । ॐ ऐं ह्रीं लूं वनीशायै नमः स्वाहा ।।१७।। रक्त-वर्णं शुभाकारं पद्म-राग-मणि-प्रभम् । किञ्चिच्छीतं तथा चोष्णं मरीचि-जाल-मण्डितम् । ॐ ऐं ह्रीं वं देव-मात्रे नमः

स्वाहा ॥१८॥ निःसृतं हरिणा दृष्टं हरेण च महात्मना। विस्मितौ तौ महाराजौ बभूवतु-रुरु-क्रमौ। ॐ ऐं ह्रीं वं कमलायै नमः स्वाहा ॥१९॥ शंकरस्य शरीरात्तु निःसृतं महदद्भुतम्। रक्त-वर्णमभूत् तीव्रं दुर्दर्शं दारुणं महत्। ॐ ह्रीं ह्रां सर्व-विद्याधि-देवतायै नमः स्वाहा ॥२०॥ भयंकरं च दैत्यानां देवानां विस्मय-प्रदम्। घोर-रूपं गिरि-प्रख्यं तमो-गुणमिवापरम्। ॐ ऐं ह्रीं सौं वाण्यै नमः स्वाहा ॥२१॥ ततो विष्णु-शरीरात्तु तेजो-राशिमिवापरम्। नीलं सत्व-गुणोपेतं प्रादुरास महा-द्युतिः। ॐ ऐं ह्रीं यं सर्व-लोक-प्रियायै नमः स्वाहा ॥२२॥ ततश्चेन्द्र-शरीरात्तु चित्र-रूपं दुरासदम्। आविरासीत् सु-संवृतं तेजः सर्व-गुणात्मकम्। ॐ ह्रीं ऐं सर्व-गर्व-विमर्दिन्यै नमः स्वाहा ॥२३॥ कुबेर-यम-वह्नीनां शरीरेभ्यः समन्ततः। निश्चक्राम महत्तेजो वरुणस्य तथैव च। ॐ ऐं ह्रीं मं निरहंकारायै नमः स्वाहा ॥२४॥ अन्येषां चैव देवानां शरीरेभ्योऽति-भास्वरम्। निर्गतं तन्महा-तेजो-राशिरासीन्महोज्ज्वलः। ॐ ऐं ह्रीं सः निर्गुणायै नमः स्वाहा ॥२५॥ तं दृष्ट्वा विस्मिताः सर्वे देवा विष्णु-पुरोगमाः। तेजो-राशिं महा-दिव्यं हिमाचल-मिवापरम्। ॐ ह्रीं हं अनीश्वर्यै नमः स्वाहा ॥२६॥ पश्यतां तत्र देवानां तेजः-पुञ्ज-समुद्भवा। बभूवाति-वरा नारी सुन्दरी विस्मय-प्रदा। ॐ ऐं ह्रीं सं आधार-शक्त्यै नमः स्वाहा ॥२७॥ अतुलं तत्र तत्-तेजः सर्व-देव-शरीर-जम्। एकस्थं तदभून्नारी व्याप्त-लोक-त्रयं त्विषा। ॐ ऐं ह्रीं सों निर्गुणायै नमः स्वाहा ॥२८॥ त्रिगुणा सा महा-लक्ष्मीः सर्व-देव-शरीरजा। अष्टादश-भुजा रम्या त्रि-वर्णा विश्व-मोहिनी। ॐ ऐं ह्रीं म्बीं सर्व-कर्म-विवर्जितायै नमः स्वाहा ॥२९॥ श्वेतानना कृष्ण-नेत्रा संरक्ताधर-पल्लवा। ताम्र-पाणि-तला कान्ता दिव्य-भूषण-भूषिता। ॐ ऐं ह्रीं यूं धर्म-निष्ठायै नमः स्वाहा ॥३०॥ अष्टादश-भुजा देवी सहस्र-भुज-मण्डिता। यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम्। ॐ ऐं ह्रीं तूं धर्म-ज्ञानायै नमः स्वाहा ॥३१॥ याम्येन चाभवन्केशा बाहवो विष्णु-तेजसा। सौम्येन

स्तनयोर्युग्मं मध्यं चैन्द्रेण चाभवत् । ॐ ऐं ह्रीं स्त्रीं सर्व-संहार-कारिण्यै नमः स्वाहा ।।३२।। वारुणेन च जङ्घोरू नितम्बस्तेजसा भुवः । ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदंगुल्योऽर्क-तेजसा । ॐ ऐं ह्रीं आं कान्तायै नमः स्वाहा ।।३३।। वसूनां च करांगुल्यः कौवेरेण च नासिका । तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः प्राजापत्येन तेजसा । ॐ ऐं ह्रीं प्रें कर्म-ज्ञान-प्रदायै नमः स्वाहा ।।३४।। नयन-त्रितयं जज्ञे तथा पावक-तेजसा । भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च । ॐ ऐं ह्रीं शं गुण-त्रय-विवर्जितायै नमः स्वाहा ।।३५।। अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा । ततः समस्त-देवानां तेजो-राशि-समुद्भवाम् । ॐ ऐं ह्रीं ह्रां गुण-मध्यायै नमः स्वाहा ।।३६।। तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः । स्वायुधेभ्यः समुत्पाद्य तेजो-युक्तानि सत्वरा । ॐ ऐं ह्रीं स्मूं गुण-त्रयायै नमः स्वाहा ।।३७।। ततो देवा ददुस्तस्यै स्वानि स्वान्यायुधानि च । ऊचुर्जय जय तूच्चैर्जयन्ती च जयैषिणः । ॐ ऐं ह्रीं ऊं वर्ण-रूपिण्यै नमः स्वाहा ।।३८।। शूलं शूलाद् विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाक-धृक् । चक्रं च दत्तवान् कृष्णः समुत्पाद्य स्व-चक्रतः । ॐ ऐं ह्रीं गूं सदोजसे नमः स्वाहा ।।३९।। शंखं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः । मारुतो दत्तवाँश्चापं बाण-पूर्णे तथेषुधी । ॐ ऐं ह्रीं श्रूं वह्नि-रूपायै नमः स्वाहा ।।४०।। वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य कुलिशादमराधिपः । ददौ तस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद् गजात् । ॐ ऐं ह्रीं ह्रूं देवतायै नमः स्वाहा ।।४१।। काल-दण्डाद् यमो दण्डं पाशं चाम्बु-पतिर्ददौ । प्रजापतिश्चाक्ष-मालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् । ॐ ऐं ह्रीं भें शांकर्यै नमः स्वाहा ।।४२।। समस्त-रोम-कूपेषु निज-रश्मीन् दिवाकरः । कालश्च दत्तवान् खड्गं तस्याश्चर्म च निर्मलं । ॐ ऐं ह्रीं ह्रां शाम्भव्यै नमः स्वाहा ।।४३।। क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाम्बरे । चूड़ा-मणिं तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि च । ॐ ऐं ह्रीं क्रूं शान्तायै नमः स्वाहा ।।४४।। अर्धं-चन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरान् सर्व-बाहुषु । नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम् ।

ॐ ऐं ह्रीं मूं चन्द्र-सूर्याग्नि-लोचनायै नमः स्वाहा ।।४५।। अंगुलीयक-रत्नानि समस्ताष्वंगुलीषु च । विश्व-कर्मा ददौ तस्यै परशुं चाति-निर्मलम् । ॐ ऐं ह्रीं ल्रीं सुजातायै नमः स्वाहा ।।४६।। अस्त्राण्यनेक-रूपाणि तथाऽभेद्यं च दंशनम् । अम्लान-पंकजां मालां शिरस्युपरि चापराम् । ॐ ऐं ह्रीं श्रां जय-भूमिष्ठायै नमः स्वाहा ।।४७।। अददज्जल-धिस्तस्यै पंकजं चाति-शोभनम् । हिमवान् वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च । ॐ ऐं ह्रीं द्रूं जाह्नव्यै नमः स्वाहा ।।४८।। ददावशून्यं सुरया पान-पात्रं धनाधिपः । शेषश्च सर्व-नागेशो महा-मणि-विभूषितम् । ॐ ऐं ह्रीं ह्रूं जन-पूजितायै नमः स्वाहा ।।४९।। नाग-हारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथ्वीमिमाम् । अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधै-स्तथा । ॐ ऐं ह्रीं ह्म्लौं शास्त्रायै नमः स्वाहा ।।५०।। सम्मानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः । तस्या नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः । ॐ ऐं ह्रीं क्रां शास्त्र-मयायै नमः स्वाहा ।।५१।। अमायतातिमहता प्रति-शब्दो महानभूत् । चक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे । ॐ ऐं ह्रीं स्ह्रौं नित्यायै नमः स्वाहा ।।५२।। चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च महीधराः । जयतु देवाश्च मुदा तामूचुः सिंह-वाहिनीम् । ॐ ऐं ह्रीं म्लूं शुभायै नमः स्वाहा ।।५३।। सायुधां भूषणैर्युक्तां दृष्ट्वा ते विस्मयं गताः । तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्ति-नम्रात्म-मूर्तयः । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चन्द्रार्ध-मस्तकायै नमः स्वाहा ।।५४।। **देवा ऊचुः** ।। नमः शिवायै कल्याण्यै शान्त्यै पुष्ट्यै नमो नमः । भगवत्यै नमो देव्यै रुद्राण्यै सततं नमः । ॐ ऐं ह्रीं गैं भारत्यै नमः स्वाहा ।।५५।। काल-रात्र्यै तथाम्बाया इन्द्राण्यै ते नमो नमः । सिद्ध्यै बुद्ध्यै तथा वृद्ध्यै वैष्णव्यै ते नमो नमः । ॐ ऐं क्रूं भ्रामर्यै नमः स्वाहा ।।५६।। पृथिव्यां या स्थिता पृथ्व्या न ज्ञाता पृथिवी तु च । अन्तः-स्थिता प्रेक्षति च वन्दे तामीश्वरीं पराम् । ॐ ऐं ह्रीं त्रीं कल्याण्यै नमः स्वाहा ।।५७।। कल्याणं कुरु भो मातः ! त्राहि नः शत्रु-तापितान् । जहि पापं हयारि त्वं तेजसा स्वेन मोहितम् ।

ॐ ऐं ह्रीं क्स्त्रीं कराल्यै नमः स्वाहा ॥५८॥ खलं मायाविनं घोरं स्त्री-वश्यं वर-दर्पितम् । दुःखदं सर्व-देवानां नाना-रूप-धरं शठम् । ॐ ऐं ह्रीं कं योग-निष्ठायै नमः स्वाहा ॥५९॥ त्वमेका सर्व-देवानां शरणं भक्त-वत्सले ! पीडितान् दानवेनाद्य त्राहि देवि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं ह्रीं फ्रौं काल-संहार-कारिण्यै नमः स्वाहा ॥६०॥ **ऋषिरुवाच** । एवं स्तुता तदा देवी सुरैः सर्व-सुख-प्रदा । तानुवाच महा-देवी स्मित-पूर्वं शुभं वचः । ॐ ऐं ह्रीं ह्रीं कलातीतायै नमः स्वाहा ॥६१॥ **देव्युवाच** । भयं त्यजतु गीर्वाणा महिषान् मन्द-तेजसः । हनिष्यामि रणेऽद्यैव वर-दृप्तं विमोहितम् । ॐ ऐं ह्रीं शां कात्यायन्यै नमः स्वाहा ॥६२॥ **ऋषिरुवाच** । जय कृत्वा स्मितं देवी साट्टहासं चकार ह । उच्चैः शब्दं महा-घोरं दानवानां भय-प्रदम् । ॐ ऐं ह्रीं क्ष्म्रीं कमलालयायै नमः स्वाहा ॥६३॥ चकम्पे वसुधा तत्र श्रुत्वा तच्छब्दमद्भुतं । चेलुश्च पर्वताः सर्वे चुक्षोभाब्दिश्च वीर्यवान् । ॐ ऐं ह्रीं रों कामिन्यै नमः स्वाहा ॥६४॥ मेरुश्चचाल शब्देन दिशः सर्व-प्रपूरिताः । भयं जग्मुस्तदा श्रुत्वा दानवास्तं स्वनं महत् । ॐ ऐं ह्रीं ङ्गं ब्रह्माण्ड-कोटि-संस्थानायै नमः स्वाहा ॥६५॥ जय पाहि तु देवास्तामूचुः परम-हर्षिताः । महिषोऽपि स्वनं श्रुत्वा चुकोप मद-गर्वितः । ॐ ऐं ह्रीं श्रौं जगत्-सृष्ट्यादि-कारिण्यै नमः स्वाहा ॥६६॥ किमेतदेव तान् दैत्यान् पपृच्छ स्वन-शंकितः । गच्छन्तु त्वरिता दूता ज्ञातुं शब्द-समुद्भवम् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं महा-मायायै नमः स्वाहा ॥६७॥ दूता ऊचुः॥ देवी दैत्येश्वर ! प्रौढ़ा दृश्यते काचिदंगना । सर्वांग-भूषणा नारी सर्व-रत्नोपशोभिता । ॐ ऐं ह्रीं सां इन्दिरायै नमः स्वाहा ॥६८॥ न मानुषी नासुरी सा दिव्य-रूप-मनोहरा । सिंहारूढ़ाऽऽयुध-धरा चाष्टादश-करा वरा । ॐ ऐं ह्रीं व्रों ज्येष्ठायै नमः स्वाहा ॥६९॥ सा नादं कुरुते नारी लक्ष्यते मद-गर्विता । सुरा-पान-रता कामं जानीमो न स-भर्तृका । ॐ ऐं ह्रीं प्रूं चन्द्रामृत-परिस्नुतायै नमः स्वाहा ॥७०॥ अन्तरिक्ष-स्थिता देवा तां स्तुवन्ति मदा-

न्विताः । द्रष्टुं नैव समर्थाः स्मस्तत्-तेजः-परिधर्षिताः । ॐ ऐं ह्रीं ग्लौं रौद्रयै नमः स्वाहा ॥७१॥ **महिष उवाच** । गच्छ वीर ! मयादिष्टो मन्त्रि-श्रेष्ठ ! बलान्वित ! सामादिभिरुपायैस्त्वं समानय शुभाननाम् । ॐ ऐं ह्रीं क्रौं नारायण्यै नमः स्वाहा ॥७२॥ **ऋषिरुवाच** । महिषस्य वचः श्रुत्वा पेशलं मन्त्रि-सत्तमः । गत्वा दूर-तरं स्थित्वा तामुवाच मनस्विनीम् । ॐ ऐं ह्रीं व्रीं व्राह्म्यै नमः स्वाहा ॥७३॥ **मन्त्री उवाच** । काऽसि त्वं मधुरालापे किमत्रा-गमनं कृतम् । पृच्छति त्वां महाभागे ! मन्मुखेन मम प्रभुः । ॐ ऐं ह्रीं स्लीं कृष्ण-पिंगलायै नमः स्वाहा ॥७४॥ स जेता सर्व-देवानामनश्यं तु नरैः किल । द्रष्टुमिच्छति राजा मे महिषो नाम पार्थिवः । ॐ ऐं ह्रीं ह्रीं योगि-गम्यायै नमः स्वाहा ॥७५॥ वशगोऽसौ तवात्यर्थं रूप-संश्रवणात् तव । करभोरु ! वदाऽऽशु त्वं संविधेयं मया यथा । ॐ ऐं ह्रीं ह्रौं योगि-ध्येयायै नमः स्वाहा ॥७६॥ **देव्युवाच** । मन्त्रि-वर्य ! सुराणां वै जननीं विद्धि मां किल । श्री-महालक्ष्मीं विख्यातां सर्व-दैत्य-निषूदिनीम् । ॐ ऐं ह्रीं श्रां तपस्विन्यै नमः स्वाहा ॥७७॥ प्रार्थिताऽहं सुरैः सर्वै-र्महिषस्य क्षयाय च । तस्मादिहागतास्म्यद्य तद् नाशाय कृतोद्यमा । ॐ ऐं ह्रीं ग्रीं ज्ञानि-रूपायै नमः स्वाहा ॥७८॥ मघवा स्वर्गमाप्नोतु देवाः सन्तु हविर्भुजः । यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ । ॐ ऐं ह्रीं क्रूं निराकारायै नमः स्वाहा ॥७९॥ **मन्त्री उवाच** । राजन् ! देवी वरारोहा सिंहस्योपरि संस्थिता । अष्टादश-भुजा रम्या वरायुध-धरा परा । ॐ ऐं ह्रीं क्रीं भक्ताभीष्ट-फल-प्रदायै नमः स्वाहा ॥८०॥ सा मयोक्ता महाराज ! महिषं भज भामिनि ! महिषी भव राज्ञस्त्वं त्रैलोक्याधिपतेः प्रिया । ॐ ऐं ह्रीं यां भूतात्मिकायै नमः स्वाहा ॥८१॥ एवं मद्-वचनं श्रुत्वा सा स्मयावेश-मोहिता । मामुवाच विशालाक्षी स्मित-पूर्वमिदं वचः । ॐ ऐं ह्रीं द्लूं भूत-मात्रे नमः स्वाहा ॥८२॥ करिष्येऽहं मृधे युद्धं हनिष्ये त्वां सुराप्रियम् । गच्छ वा दुष्ट ! पातालं जीवितेच्छा यदस्ति ते । ॐ ऐं ह्रीं द्रूं भूतेशायै

नमः स्वाहा ॥८३॥ महिष उवाच । गच्छ ताम्र ! महाभाग ! युद्धाय कृत-निश्चयः । तामानय वरारोहां जित्वा धर्मेण मानिनीम् । ॐ ऐं ह्रीं क्षं भूत-धारिण्यै नमः स्वाहा ॥८४॥ **ऋषिरुवाच** । एवं तद्-भाषितं श्रुत्वा ताम्रः काल-वशं गतः । निर्गतः सैन्य-संयुक्तः प्रणम्य महिषं नृपम् । ॐ ऐं ह्रीं ओं स्वधा नारी-मध्य-गतायै नमः स्वाहा ॥८५॥ स गत्वा तां समालोक्य देवीं सिंहोपरि-स्थिताम् । स्तूयमानां सुरैः सर्वैं सर्वायुध-विभूषिताम् । ॐ ऐं ह्रीं क्रौं षडाधारादि-वर्तिन्यै नमः स्वाहा ॥८६॥ तामुवाच विनीतः सन् वाक्यं मधुरया गिरा । देवि ! दैत्येश्वरः शृङ्गी स्वरूप-गुण-मोहितः । ॐ ऐं ह्रीं क्ष्म्क्लरीं मोहदायै नमः स्वाहा ॥८७॥ स्पृहां करोति महिषस्त्वत्-पाणि-ग्रहणाय वै । भुंक्ष्व राज्य-सुखं पूर्णं वर्षाणामयुतायुतम् । ॐ ऐं ह्रीं वां अंशु-भवायै नमः स्वाहा ॥८८॥ **देव्युवाच** । गच्छ ताम्र ! पतिं ब्रूहि मुमूर्षं मद-चेतसम् । महिषं चाति-कामार्तं मूढं ज्ञान-विवर्जितम् । ॐ ऐं ह्रीं श्रूं शुभ्रायै नमः स्वाहा ॥८९॥ नाहं पतिवरा नारी वर्तते मे पतिः प्रभुः । सर्व-कर्त्ता सर्व-साक्षी ह्यकर्ता निस्पृहः स्थिरः । ॐ ऐं ह्रीं ग्लूं सूक्ष्मायै नमः स्वाहा ॥९०॥ तं त्यक्त्वा महिषं मत्तं कथं सेवितुमुत्सहे । जीवितेच्छाऽस्ति चेत् पाप ! गच्छ पातालमाशु वै । ॐ ऐं ह्रीं ल्रीं सर्व-गतायै नमः स्वाहा ॥९१॥ **ऋषिरुवाच** । उक्त्वैवं सा तदा देवी जगर्ज भृश-मद्भुतम् । कल्पान्त-सदृशं नादं चक्रे दैत्य-भयावहम् । ॐ ऐं ह्रीं प्रें सर्वदायै नमः स्वाहा ॥९२॥ ताम्रः श्रुत्वा च तं शब्दं भय-त्रस्त-मनास्तदा । पलायनं ततः कृत्वा जगाम महिषान्तिकम् । ॐ ऐं ह्रीं ह्रूं दुर्लभ-रूपिण्यै नमः स्वाहा ॥९३॥ ताम्रः समागतं दृष्ट्वा ह्यारिरपि मोहितः । दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं त्रैलोक्यममरारयः । ॐ ऐं ह्रीं ह्रौं सत्यायै नमः स्वाहा ॥९४॥ सन्नद्धाखिल-सैन्यांस्ते समुत्तस्थुरुदायुधाः । आः किमेतदेवं क्रोधादाभाष्य महिषासुरः । ॐ ऐं ह्रीं दें अनन्तायै नमः स्वाहा ॥९५॥ अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः । स ददर्श ततो देवीं

व्याप्त-लोक-त्रयां त्विषा । ॐ ऐं ह्रीं नूँ सर्व-ज्ञान-प्रदायै नमः स्वाहा ।।९६।। पादाक्रान्त्या नत-भुवं किरीटोल्लिखि-ताम्बराम् । क्षोभिताशेष-पातालां धनुर्ज्या-निःस्वनेन ताम् । ॐ ऐं ह्रीं आं परायै नमः स्वाहा ।।९७।। दिशो भुज-सहस्रेण समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम् । ततः प्रववृते युद्धं तया देव्या सुर-द्विषाम् । ॐ ऐं ह्रीं फ्रां हरायै नमः स्वाहा ।।९८।। शस्त्रास्त्रैर्बहुधा मुक्तैरादीपित-दिगन्तरम् । महिषासुर-सेनानी चिक्षुराख्यो महासुरः । ॐ ऐं ह्रीं प्रीं नित्यानन्दायै नमः स्वाहा ।।९९।। युयुधे चामरश्चान्येश्चतुरंग-बलान्वितः । रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महासुरः । ॐ ऐं ह्रीं दं नील-संकाशायै नमः स्वाहा ।।१००।। अयुद्धयतायुतानां च सहस्रेण महा-हनुः । पञ्चाशद्भिश्च नियतैर-सिलोमा महासुरः । ॐ ऐं ह्रीं फ्रीं निम्नगायै नमः स्वाहा ।।१०१।। अयुतानां शतै षड्भिर्वाष्कलो युयुधे रणे । गज-वाजि-सहस्रौघैरनेकैः परिवारितः । ॐ ऐं ह्रीं ह्रीं निरालसायै नमः स्वाहा ।।१०२।। वृतो रथानां कोट्या च युद्धे तस्मिन्नयुद्धचतः । विडालाख्योऽयुतानां च पञ्चाशद्भि रथायुतैः । ॐ ऐं ह्रीं गूं मात्रायै नमः स्वाहा ।।१०३।। युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः । अन्ये च तत्रायुतशो रथ-नाग-हयैर्वृताः । ॐ ऐं ह्रीं श्रौं लक्ष्म्यै नमः स्वाहा ।।१०४।। युयुधुः सयुगे देव्या सह तत्र महासुराः । कोटि-कोटि-सहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा । ॐ ऐं ह्रीं सां पद्मायै नमः स्वाहा ।।१०५।। हयानां च वृतो युद्धे तत्राऽभून्महिषासुरः । तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्तिभिर्मुसलैस्तथा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं पद्मालयायै नमः स्वाहा ।।१०६।। युयुधुः संयुगे देव्याः खड्गै परशु-पट्टिशैः । केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः केचित् पाशाँ-स्तथापरे । ॐ ऐं ह्रीं जुं कमलालयायै नमः स्वाहा ।।१०७।। देवीं खड्ग-प्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः । साऽपि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका । ॐ ऐं ह्रीं हूं भियै नमः स्वाहा ।।१०८।। लीलयैव प्रचिच्छेद निज-शस्त्रास्त्र-वर्षिणी । अनायस्ताननना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः । ॐ ऐं ह्रीं सं हरि-प्रियायै नमः स्वाहा ।।१०९।।

मुमोचासुर-देहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी । सोऽपि क्रुद्धो धुत-सटो देव्या वाहन-केशरी । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं राघव -प्रियायै नमः स्वाहा ॥११०॥ चचारासुर-सैन्येषु वनेष्विव हुताशनः । निःश्वासान् मुमुचे यांश्च युद्धयमाना रणेऽम्बिका । ॐ ऐं ह्रीं सौं रमायै नमः स्वाहा ॥१११॥ त एव सद्य सम्भूता गणाः शत-सहस्रशः । युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपालाऽसि-पट्टिशैः । ॐ ऐं ह्रीं दीं परमायै नमः स्वाहा ॥११२॥ नाशयन्तोऽसुर-गणान् देवी शक्त्युपबृंहिता । अवादयन्तः पटहान् गणाः शंखाँस्तथापरे । ॐ ऐं ह्रीं प्रं शोभनायै नमः स्वाहा ॥११३॥ मृदंगाश्च तथैवान्ये तस्मिन् युद्ध-महोत्सवे । ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्ति-वृष्टिभिः । ॐ ऐं ह्रीं यां पद्म-वासायै नमः स्वाहा ॥११४॥ खड्गादि-भिश्च शतशो निजघान महासुरान् । पातयामास चैवान्यान् घण्टा-स्वन-विमोहितान् । ॐ ऐं ह्रीं रूं विष्णु-प्रियायै नमः स्वाहा ॥११५॥ असुरान् भुवि पाशेन बद्ध्वा चान्यानकर्षयत् । केचिद् द्विधा कृतास्तीक्ष्णै खड्ग-पातैस्तथापरे । ॐ ऐं ह्रीं भं कृष्ण-प्रियायै नमः स्वाहा ॥११६॥ विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते । वेमुश्च केचिद् रुधिरं मुसलेन भृशं हताः । ॐ ऐं ह्रीं सूं राम-प्रियायै नमः स्वाहा ॥११७॥ केचिन्निपतिता भूमौ भिन्नाः शूलेन वक्षसि । निरन्तरा शरौघेण कृताः केचिद् रणाजिरे । ॐ ऐं ह्रीं श्रां शौरि-प्रियायै नमः स्वाहा ॥११८॥ श्येनानुकारिणः प्राणान् मुमुचुस्त्रि-दशार्दनाः । केषांचिद् बाहवश्छिन्नाश्छिन्न-ग्रीवास्तथापरे । ॐ ऐं ह्रीं ओं जिष्णु-प्रियायै नमः स्वाहा ॥११९॥ शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः । विच्छिन्न-जंघास्त्वपरे पेतुरुर्व्यां महासुराः । ॐ ऐं ह्रीं लूं माधव-प्रियायै नमः स्वाहा ॥१२०॥ एक-बाह्वक्षि-चरणाः केचिद् देव्या द्विधा कृताः । छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिताः पुनरुत्थिताः । ॐ ऐं ह्रीं डूं क्षीरोद-तनयायै नमः स्वाहा ॥१२१॥ कबन्धाश्छिन्न-शिरसः खड्ग-शक्त्यृष्टि-पाणयः । ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूर्य-लयाश्रिताः । ॐ ऐं ह्रीं जुं कमल-वासिन्यै नमः स्वाहा ॥१२२॥

कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीत-परमायुधाः । तिष्ठ तिष्ठ तु भाषन्तो देवीमन्ये महासुराः । ॐ ऐं ह्रीं धूं क्षीराब्धि-तनयायै नमः स्वाहा ।।१२३।। पातिते रथ-नागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा । अगम्या साभवत् तत्र यत्राभूत् स महा-रणः । ॐ ऐं ह्रीं त्वं नारायण्यै नमः स्वाहा ।।१२४।। शोणितौघा महा-नद्याः सद्यस्तत्र प्रसुस्रुवुः । मध्ये चासुर-सैन्यस्य वारणासुर-वाजिनाम् । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शुभायै नमः स्वाहा ।।१२५।। क्षणेन तन्महा-सैन्यमसुराणां तथाऽम्बिका । निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृण-दारु-महा-चयम् । ॐ ऐं ह्रीं ह्रीं शिवायै नमः स्वाहा ।।१२६।। स च सिंहो महा-नादमुत्सृजन् धुत-केशरः । शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति । ॐ ऐं ह्रीं ईं कल्याण्यै नमः स्वाहा ।।१२७।। देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं महासुरैः । यथैषां तुतुषुर्देवाः पुष्प-वृष्टि-मुचो दिवि । ॐ ऐं ह्रीं ह्रां क्षेमायै नमः स्वाहा ।।१२८।।

।। ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ।।

वैदिक आहुति

१ पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर, १ सुपारी, २ लौंग, २ छोटी इलायची, गूगल । इस अध्याय में विशेष गूगल ही है । सब चीजें स्रु ची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र पढ़ें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावाना । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा ।। दिशः प्रतिशऽ आदिशो व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।।

तान्त्रिक आहुति

ह्रीं सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै श्रीमहा-लक्ष्म्यै सप्त-विंशति-वर्णात्मिकायै लक्ष्मो-बीजाधिष्ठात्र्यै नमः महाऽऽहुतिं समर्पयामि स्वाहा ।

सामान सब वही है ।

तृतीयः

ध्यानम्

ॐ उद्यद्भानु-सहस्र-कान्तिमरुण-क्षौमां शिरो-मालिकां । रक्तालिप्त-पयोधरां जप-वटीं विद्यामभीतिं वरम् ।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्र-विलसद्-वक्त्रारविन्द-श्रियम् । देवीं बद्ध-हिमांशु-रत्न-मुकुटां वन्देऽरविन्द-स्थिताम् ।।

ॐ **ऋषिरुवाच** । निहन्यमानं तत्-सैन्यमवलोक्य महासुरः । सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद् ययौ योद्धुमथाम्बिकाम् । ॐ ऐं ह्रीं ह्लूं भावुकायै नमः स्वाहा ।।१।। स देवीं शर-वर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः । यथा मेरु-गिरेः शृङ्गं तोय-वर्षेण तोयदः । ॐ ऐं ह्रीं क्लूं कुशलायै नमः स्वाहा ।।२।। तस्यच्छित्वा ततो देवी लोलयैव शरोत्करान् । जघान तुरगान् वाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम् । ॐ ऐं ह्रीं क्रां भद्रायै नमः स्वाहा ।।३।। चिच्छेद च धनुः सद्यो ध्वजं चाति-समुच्छ्रितम् । विव्याध चैव गात्रेषु छिन्न-धन्वानमाशुगैः । ॐ ऐं ह्रीं ल्लूं शस्तायै नमः स्वाहा ।।५।। सच्छिन्न-धन्वा विरथो हताश्वो हत-सारथिः । अभ्यधावत तां देवीं खड्ग-चर्म-धरोऽसुरः । ॐ ऐं ह्रीं फ्रें भद्रायै नमः स्वाहा ।।५।। सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्ण-धारेण मूर्धनि । आजघान भुजे सव्ये देवीमप्यति-वेगवान् । ॐ ऐं ह्रीं क्रीं वीर-मर्दन्यै नमः स्वाहा ।।६।। तस्य खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृप-नन्दन ! ततो जग्राह शूलं स कोपादरुण-लोचनः । ॐ ऐं ह्रीं म्लूं देव्यै नमः स्वाहा ।।७।। चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्र-काल्यां महासुरः । जाज्वल्यमानं तेजोभी रवि-विम्बमिवाम्बरात् । ॐ ऐं ह्रीं ध्रें वैकुण्ठ-वासिन्यै नमः स्वाहा ।।८।। दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवी शूलममुञ्चत । तच्छूलं शतधा तेन नीतं स च महासुरः । ॐ ऐं ह्रीं श्रौं धनदायै नमः स्वाहा ।।९।। हते तस्मिन् महा-वीर्ये महिषस्य चमू-पतौ । आजगाम

गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः । ॐ ऐं ह्रीं ह्रौं सुखदायै नमः स्वाहा ॥१०॥ सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ देव्यास्तामम्बिका द्रुतम् । हुंकाराभिहतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम् । ॐ ऐं ह्रीं ब्रीं शुभदायै नमः स्वाहा ॥११॥ भग्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा क्रोध-समन्वितः । चिक्षेप चामरः शूलं बाणैस्तदपि साच्छिनत । ॐ ऐं ह्रीं क्रीं शिवदायै नमः स्वाहा ॥१२॥ ततः सिंहः समुत्पत्य गज-कुम्भान्तरे स्थितः । बाहु-युद्धेन युयुधे तेनोच्चैस्त्रि-दशारिणा । ॐ ऐं ह्रीं त्रौं विष्णु-वल्लभायै नमः स्वाहा ॥१३॥ युद्धचमानौ ततस्तौ तु तस्मान्नागान्महीं गतौ । युयुधातेऽति-संरब्धे प्रहारैरति-दारुणैः । ॐ ऐं ह्रीं ह्लौं देव-देव्यै नमः स्वाहा ॥१४॥ ततो वेगात् खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा । कर-प्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक् कृतम् । ॐ ऐं ह्रीं गीं कामदायै नमः स्वाहा ॥१५॥ उदग्रश्च रणे देव्या शिला-वृक्षादिभिर्हतः । दन्त-मुष्टि-तलैश्चैव करालश्च निपातितः । ॐ ऐं ह्रीं यूं अर्थदायै नमः स्वाहा ॥१६॥ देवी क्रुद्धा गदा-पातैश्चूर्णयामास चोद्धतम् । वाष्कलं भिन्दिपालेन बाणैस्ताम्रं तथान्धकम् । ॐ ऐं ह्रीं ह्लीं भक्त-प्रियायै नमः स्वाहा ॥१७॥ उग्रास्यमुग्र-वीर्यं च तथैव च महा-हनुम् । त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी । ॐ ऐं ह्रीं ह्लूं भक्त्यै नमः स्वाहा ॥१८॥ विडालस्यासिना कायात् पातयामास वै शिरः । दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्ये यम-क्षयम् । ॐ ऐं ह्रीं श्रौं बुद्धिदायै नमः स्वाहा ॥१९॥ हाहाकारो महानासीत् सैन्ये तस्य दुरात्मनः । चुक्रुशू रुरुदुश्चैव त्राहि त्राहि तु भाषणैः । ॐ ऐं ह्रीं ओं धन-प्रदायै नमः स्वाहा ॥२०॥ अन्ये ये सैनिका राजन् !. सिंहेन भक्षिताश्च ते । तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां महिषो दुर्मनास्तदा । ॐ ऐं ह्रीं अं अर्थ-प्रदायै नमः स्वाहा ॥२१॥ तेषां तद्-वचनं श्रुत्वा क्रोध-युक्तो नराधिपः । दारुकं प्राह तरसा रथमानय मेऽद्भुतम् । ॐ ऐं ह्रीं म्लौं महा-देव्यै नमः स्वाहा ॥२२॥ सहस्र-खर-संयुक्तं पताका-ध्वज-भूषितम् । आयुधैः संयुतं शुभ्रं सुचक्रं चारु-कूबरम् । ॐ ऐं ह्रीं प्रीं दण्ड-पाणि-

प्रियायै नमः स्वाहा ॥२३॥ आनीतं तं रथं ज्ञात्वा दानवेन्द्रो महा-बलः । सर्वायुध-समायुक्तो वरास्तरण-संयुतः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं दण्ड-पाणि-मात्रे नमः स्वाहा ॥२४॥ मानुषं देहमास्थाय संग्रामे गन्तुमुद्यतः । त्यक्त्वा तन्माहिषं रूपं बभूव पुरुषः शुभः । ॐ ऐं ह्रीं त्रों दण्ड-निधये नमः स्वाहा ॥२५॥ दिव्याम्बर-धरः कान्तः पुष्प-वाण इवापरः । तमायान्तं समालोक्य दैत्यानामधिपं तदा । ॐ ऐं ह्रीं ह्सौं दण्ड-पाणि-समाराध्यै नमः स्वाहा ॥२६॥ बहुभिः संवृतं वीरैर्देवी शंखमवादयत् । समीपमेत्य देव्यास्तु तामुवाच हसन्निव । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दण्ड-पाणि-प्रपूजितायै नमः स्वाहा ॥२७॥ **महिष उवाच** । देवि ! संसार-चक्रेऽस्मिन् वर्तमाने जनः किल । नरो वाऽथ तथा नारी सुखं वाञ्छति सर्वथा । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं दण्ड-पाणि-गृहासक्तायै नमः स्वाहा ॥२८॥ नारी-पुरुषयोः कान्ते ! समान-वयसोः सदा । संयोगो यः समाख्यातः स एवात्युत्तमः स्मृतः । ॐ ऐं ह्रीं स्त्रीं दण्ड-पाणि-प्रियंवदायै नमः स्वाहा ॥२९॥ तं चेत् करोषि संयोगं वीरेण च मया सह । अत्युत्तम-सुखस्यैव प्राप्तिः स्यात् ते न संशयः । ॐ ऐं ह्रीं प्लूं दण्ड-पाणि-प्रियतमायै नमः स्वाहा ॥३०॥ इन्द्रादयः सुरा सर्वे संग्रामे विजिता मया । रत्नानि यानि दिव्यानि भवनेऽस्मिन् ममाधुना । ॐ ऐं ह्रीं स्त्रीं दण्ड-पाणि-मनोहरायै नमः स्वाहा ॥३१॥ भुङ्क्ष्व त्वं तानि सर्वाणि यथेष्टं देहि वा यथा । पट्ट-राज्ञी भवाद्य त्वं दासोऽस्मि तव सुंदरि ! ॐ ऐं ह्रीं व्रीं दण्ड-पाणि-हृत-प्राणायै नमः स्वाहा ॥३२॥ **ऋषिरुवाच** । एवं ब्रुवाणं तं दैत्यं देवी भगवती हि सा । प्रहस्य सस्मितं वाक्यमुवाच वर-वर्णिनी । ॐ ऐं ह्रीं लूं दण्ड-पाणि-सुसिद्धिदायै नमः स्वाहा ॥३३॥ **देव्युवाच** । नाहं पुरुषमिच्छामि परमं पुरुषं बिना । तस्य चेच्छाम्यहं दैत्य ! सृजामि सकलं जगत् । ॐ ऐं ह्रीं द्रां दण्ड-पाणि-पराऽमृतायै नमः स्वाहा ॥३४॥ स मां पश्यति विश्वात्मा तस्याऽहं प्रकृतिः शिवा । मूर्खस्त्वमसि मन्दात्मन् यत् स्त्री-संगं चिकीर्षसि । ॐ ऐं ह्रीं क्ष्मीं दण्ड-पाणि-प्रहर्षितायै

नमः स्वाहा ।।३५।। नरस्य बन्धनार्थाय श्रृङ्खला स्त्री प्रकीर्तिता। नारी-संगे महद्-दुःखं जानन् कं त्वं विमुह्यसि। ॐ ऐं ह्रीं स्कं दण्ड-पाणि-विघ्न-हरायै नमः स्वाहा ।।३६।। त्यज वैरं सुरैः सार्धं यथेष्टं विचिरावनौ। पातालं गच्छ वा कामं जीवितेच्छा यदास्ति ते। ॐ ऐं ह्रीं त्रूं नारायण्यै नमः स्वाहा ।।३७।। अथवा कुरु संग्रामं बलवत्यस्मि साम्प्रतम्। प्रेषिताऽहं सुरैः सर्वैस्तव नाशाय दानव ! ॐ ऐं ह्रीं द्रीं दण्ड-पाणि-शिरोधृतायै नमः स्वाहा ।।३८।। हनिष्यामि महाबाहो ! त्वामहं नात्र संशयः। **ऋषिरुवाच**। उक्तस्तु स तया देव्या धनुरादाय दानवः। (मुमोच तरसा बाणान् कर्णाकृष्टाञ्छिलाशितान्)। देवी चिच्छेद तान् बाणैः क्रोधान्मुक्तैरयोमुखैः। ॐ ऐं ह्रीं म्लूं वाराह्यै नमः स्वाहा ।।३९।। तयोः परस्परं युद्धं सम्बभूव भय-प्रदम्। स पदाति-रथं सैन्यं देव्या सिंहेन नाशितम्। ॐ ऐं ह्रीं शां दण्ड-पाणि-प्राप्त-चर्चायै नमः स्वाहा ।।४०।। एवं संक्षीयमाणे तु स्व-सैन्ये महिषासुरः। माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान् गणान्। ॐ ऐं ह्रीं ल्लीं दण्ड-पाणि-प्राप्त-पदायै नमः स्वाहा ।।४१।। काँश्चित्तुण्ड-प्रहारेण क्षुरक्षेपैस्तथापरान्। लांगूल-ताडिताँश्चान्यान् श्रृङ्गाभ्यां च विदारितान्। ॐ ऐं ह्रीं लूं दण्ड-पाण्युन्मुख्यै (मुखायै) नमः स्वाहा ।।४२।। वेगेन काश्चिदपरान् नादेन भ्रमणेन च। निःश्वास-पवनेनान्यान् पातयामास भूतले। ॐ ऐं ह्रीं श्रूं दण्ड-पाणि-वरोन्मुख्यै नमः स्वाहा ।।४३।। निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः। सिंहं हन्तुं महा-देव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका। ॐ ऐं ह्रों क्लां दण्ड-हस्तायै नमः स्वाहा ।।४४।। सोऽपि कोपान्महा-वीर्यः क्षुर-क्षुण्ण-महीतलः। श्रृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चाँश्चिक्षेप च ननाद च। ॐ ऐं ह्रीं ह्लीं दंड-प्राप्त-पदायै नमः स्वाहा ।।४५।। वेग-भ्रमण-विक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत। लांगूलेनाहतः साब्धिः प्लावयामास सर्वतः। ॐ ऐं ह्रीं गां दण्ड-बाहवे नमः स्वाहा ।।४६।। धुत-श्रृङ्ग-विभिन्नाश्च खण्डं खण्डं ययुर्घनाः। श्वासानिलास्ताः शतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः। ॐ ऐं

क्लीं ल्लूं विश्व-रूपायै नमः स्वाहा ॥४७॥ एवं क्रोध-समाध्मातमापतन्तं महासुरं । दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं तद्-नाशाय तदाकरोत् । ॐ ऐं ह्रीं स्मलीं दण्ड-मात्रे नमः स्वाहा ॥४८॥ सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबन्ध महा-सुरम् । तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महामृधे । ॐ ऐं ह्रीं उं दण्ड-करायै नमः स्वाहा ॥४९॥ ततः सिंहोऽभवत् सद्यो यावत् तस्याम्बिका शिरः । छिन्नति तावत् पुरुषः खड्ग-पाणिरदृश्यत । ॐ ऐं ह्रीं ह्लूं मोहिन्यै नमः स्वाहा ॥५०॥ तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः । तं खड्ग-चर्मणा सार्द्धं ततः सोऽभून्महा-गजः । ॐ ऐं ह्रीं ह्लूं दण्ड-चित्त-कृतास्पदायै नमः स्वाहा ॥५१॥ करेण च महा-सिंहं तं चकर्ष जगर्ज च । कर्षतस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत । ॐ ऐं हीं स्त्रां दण्ड-विद्यायै नमः स्वाहा ॥५२॥ ततो महासुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः । तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं सचराचरम् । ॐ ऐं ह्रीं म्क्लीं रुक्मिण्यै नमः स्वाहा ॥५३॥ ततः क्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम् । पपौ पुनः पुनश्चैव जहासारुण-लोचना । ॐ ऐं ह्रीं भैं दण्डि-प्रियायै नमः स्वाहा ॥५४॥ ननर्द चासुरः सोऽपि बल-वीर्य-मदोद्धतः । विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान् । ॐ ऐं ह्रीं हौं दंडि-पूज्यायै नमः स्वाहा ॥५५॥ सा च तान् प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः । उवाच तं मदोद्धूत-मुख-रागाकुलाक्षरम् । ॐ ए ह्रीं चें दंडि-संतोष-दायिन्यै नमः स्वाहा ॥५६॥ **देव्युवाच** । मा गर्वं कुरु मन्दात्मँस्तिष्ठ तिष्ठ रणांगणे । करिष्यामि निरातंकान् हत्वा त्वां सुर-सत्तमान् । ॐ ऐं ह्रीं श्रौं सर्व-मोहिन्यै नमः स्वाहा ॥५७॥ गर्ज गर्ज क्षणं मूढ ! मधु यावत् पिबाम्यहम् । मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः । ॐ ऐं ह्रीं स्क्रीं पद्मायै नमः स्वाहा ॥५८॥ **ऋषिरुवाच** । उक्त्वैवं चषकं हैमं गृहीत्वा सुरया युतम् । पपौ पुनः पुनः क्रोधाद्धन्तु-कामा महासुरम् । ॐ ऐं ह्रीं कं विजयायै नमः स्वाहा ॥५९॥ एवमुक्त्वा समुत्पत्य साऽऽरूढा तं महासुरम् । पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैन-

मताडयत् । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं लक्ष्म्यै नमः स्वाहा ॥६०॥ ततः सोऽपि पदाऽऽक्रान्तस्तया निज-मुखात् ततः । अर्ध-निष्क्रांत एवासीद् देव्या वीर्येण संवृतः । ॐ ऐं ह्रीं स्कलीं अपराजितायै नमः स्वाहा ॥६१॥ अर्ध-निष्क्रान्त एवाऽसौ युद्धचमानो महासुरः । तया महासिंना देव्या शिरश्छित्वा निपातितः । ॐ ऐं ह्रीं ह्रौं महा-लक्ष्म्यै नमः स्वाहा ॥६२॥ ततो हाहा-कृतं सर्वं दैत्य-सैन्यं ननाश तत् । प्रहर्षं च परं जग्मुः सकला देवता-गणाः । ॐ ऐं ह्रीं ऐं महा-लक्ष्म्यै नमः स्वाहा ॥६३॥ एवं स महिषो नाम स-सैन्यः स-सुहृद्-गणः । त्रैलोक्यं मोहयित्वा तु तया देव्या निपातितः । ॐ ऐं ह्रीं क्षम्ब्लूं लक्ष्म्यै नमः स्वाहा ॥६४॥ त्रैलोक्यस्थैस्तदा भूतैर्महिषे विनिपातिते । जयतूक्तं वचं सर्वे स-देवा सुर-मानुषैः । ॐ ऐं ह्रीं त्रौं दधीचि-पूज्यायै नमः स्वाहा ॥६५॥ तुष्टुवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः । जगुर्गन्धर्व-पतयो ननृतुश्चाप्सरो-गणाः । ॐ ह्रीं प्रीं भक्ति-प्रियायै नमः स्वाहा ॥६६॥

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सार्वणिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) श्रीजगदम्बार्पणमस्तु ॥

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य, १ कमलगट्टा घी में भिगोकर, १ सुपारी, २ लौंग, २ छोटी इलायची, गूगल । इस अध्याय में भैंसा गूगल विशेष है ।

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानाः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आदिशो व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।

तान्त्रिक आहुति

ॐ जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै लक्ष्मी-बीजाधिष्ठात्र्यै महाहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामाग्री वही है

चतुर्थः

ध्यानम्

ॐ कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुल-भयदां मौलि-बद्धेन्दु-रेखां । शंखं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्रां ॥ सिंह-स्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं । ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदश-परिवृतां सेवितां सिद्धि-कामैः ॥

॥ ॐ **ऋषिरुवाच** ॥ अथ प्रमुदिताः सर्वे इन्द्र-पुरोगमाः । स्तुतिमारभिरे कर्तुं निहते महिषासुरे । ॐ ऐं ह्रीं ओं दधीचि-प्रीतायै नमः स्वाहा ॥१॥ शक्रादयः सुर-गणा निहतेऽति-वीर्ये, तस्मिन् दुरात्मनि सुरारि-बले च देव्या । तां तुष्टुवुः प्रणति-नम्र-शिरोधरांसा, वाग्भिः प्रहर्ष-पुलकोद्गम-चारु-देहाः । ॐ ऐं ह्रीं क्लूं दधीचि-वर-दायिन्यै नमः स्वाहा ॥२॥ **देवा ऊचुः** ॥ देव्या तया ततमिदं जगदात्म-शक्त्या, निःशेष-देव-गण-शक्ति-समूह-मूर्त्या । तामम्बिका-मखिल-देव-महर्षि-पूज्यां, भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः । ॐ ऐं ह्रीं नें दधीचोष्ट-देवतायै नमः स्वाहा ॥३॥ यस्या प्रभावमतुलं भगवाननन्तो, ब्रह्मा हरश्च नहि वक्तुमलं बलं च । सा चण्डिकाऽखिल-जगत्-परि-पालनाय, नाशाय चाशुभ-भयस्य मतिं करोतु । ॐ ऐं ह्रीं हस्लीं दधीचि-मोक्ष-दायिन्यै नमः स्वाहा ॥४॥ या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः, पापात्मनां कृत-धियां हृदयेषु बुद्धिः । श्रद्धा सतां कुल-जन-प्रभवस्य लज्जा, तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि ! विश्वम् । ॐ ऐं ह्रीं प्रें पद्मावत्यै नमः स्वाहा ॥५॥ किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्य-मेतत्, किं चाति-वीर्यमसुर-क्षय-कारि भूरि । किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि, सर्वेषु देव्यसुर-देव-गणादिकेषु । ॐ ऐं ह्रीं औं विशालाक्ष्यै नमः स्वाहा ॥६॥ हेतुः समस्त-जगतां त्रिगुणाऽपि दोषैर्न ज्ञायसे हरि-हरादिभिरप्यपारा ।

सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंश-भूतमव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या । ॐ ऐं ह्रीं म्लूं नागाक्ष्यै नमः स्वाहा ॥७॥ यस्या समस्ता सुरता समुदीरणेन, तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि ! स्वाहाऽसि वै पितृ-गणस्य च तृप्ति हेतु-रुच्चार्यसे त्वमतएव जनैः स्वधा च । ॐ ऐं ह्रीं नों दत्त-धनायै नमः स्वाहा ॥८॥ या मुक्ति-हेतुरविचिन्त्य-महा-व्रता त्वमभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रिय-तत्त्व-सारैः । मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्त-समस्त-दोषैर्विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवि । ॐ ऐं ह्रीं सौं पीत-वासायै नमः स्वाहा ॥९॥ शब्दात्मिका सु-विमलर्ग्यजुषां निधानमुद्गीथ-रम्य-पद-पाठवतां च साम्नाम् । देवी त्रयी भगवती भव-भावनाय, वार्ता च सर्व-जगतां परमार्ति-हन्त्री । ॐ ऐं ह्रीं स्लीं जय-मालायै नमः स्वाहा ॥१०॥ मेधासि देवि ! विदिताऽखिल-शस्त्र-सारा, दुर्गासि दुर्ग-भव-सागर-नौर-संगा । श्री-कैटभारि-हृदयैक-कृताधि-वासा, गौरी त्वमेव शशि-मौलि-कृत-प्रतिष्ठा । ॐ ऐं ह्रीं ह्रीं मंगलाक्ष्यै नमः स्वाहा ॥११॥ ईषत्-सहासममलं परिपूर्ण-चन्द्रबिम्बानुकारि-कनकोत्तम-कान्ति-कान्तम् । अत्यद्भुतं प्रहृतमात्त-रुषा तथापि, वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण । ॐ ऐं ह्रीं फ्रूं सर्व-मंगलायै नमः स्वाहा ॥१२॥ दृष्ट्वा तु देवि ! कुपितं भ्रुकुटी-कराल-मुद्यच्छशाङ्क-सदृशच्छवि-यन्न सद्यः । प्राणान् मुमोच महिषस्तदतीव-चित्रं, कैर्जीव्यते हि कुपितान्तक-दर्शनेन । ॐ ऐं ह्रीं श्लीं दत्त-दारिद्रय-नाशिन्यै नमः स्वाहा ॥१३॥ देवि ! प्रसीद परमा भवती भवाय, सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि । विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेतन्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य । ॐ ऐं ह्रीं क्रीं सिद्धयै नमः स्वाहा ॥१४॥ ते सम्मता जन-पदेषु धनानि तेषां, तेषां यशांसि न च सीदति धर्म-वर्गः । धन्यास्त एव निभृतात्मज-भृत्य-दारा, येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना । ॐ ऐं ह्रीं ह्लौं त्रैलोक्य-मोहिन्यै नमः स्वाहा ॥१५॥ धर्म्याणि देवि ! सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रति-दिनं सुकृती करोति । स्वर्गं प्रयाति च ततो भवती-प्रसादाल्लोक-त्रयेऽपि फलदा ननु देवि ! तेन ।

ॐ ऐं ह्रीं स्ल्लीं देवानां हित-कारिण्यै नमः स्वाहा ॥१६॥ दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः, स्वस्थै स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि । दारिद्रय-दुःख-भय-हारिणि का त्वदन्या, सर्वोपकार-करणाय सदाऽऽर्द्र-चित्ता । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कमलायै नमः स्वाहा ॥१७॥ एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते, कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् । संग्राम-मृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु, मत्वा तु नूनमहितान् विनिर्हंसि देवि ! ॐ ऐं ह्रीं ह्रौं सूक्ष्मायै नमः स्वाहा ॥१८॥ दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म, सर्वासुरानरिषु यत् प्रहिणोषि शस्त्रम् । लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्र-पूता, इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽति-साध्वी । ॐ ऐं ह्रीं श्रां महा-बलायै नमः स्वाहा ॥१९॥ खड्ग-प्रभा-निकर-विस्फुरणैस्तथोग्रैः, शूलाग्र-कान्ति-निवहेन दृशोऽसुराणाम् । यन्नागता विलयमंशुमदिन्दु-खण्ड-योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् । ॐ ऐं ह्रीं ह्सूं मोहिन्यै नमः स्वाहा ॥२०॥ दुर्वृत्त-वृत्त-शमनं तव देवि ! शीलं, रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः । वीर्यं च हन्तृ-हृत-देव-पराक्रमाणां, वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् । ॐ ऐं ह्रीं क्स्लीं सर्व-मंगलायै नमः स्वाहा ॥२१॥ केनोपमा भवति तेऽस्य पराक्रमस्य, रूपं च शत्रु-भय-कार्यतिहारि कुत्र । चित्ते कृपा समर निष्ठुरता च दृष्टा, त्वय्येव देवि ! वरदे भुवन-त्रयेऽपि । ॐ ऐं ह्रीं स्तूं प्रियायै नमः स्वाहा॥२२॥ त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपु-नाशनेन, त्रातं त्वया समर-मूर्धनि तेऽपि हत्वा । नीता दिवं रिपु-गणा भयमप्यपास्तमस्माकमुन्मद-सुरारि-भवं नमस्ते । ॐ ऐं ह्रीं स्हौं भुक्ति-प्रदायिन्यै नमः स्वाहा ॥२३॥ ब्रह्मा सृजत्यवति विष्णुरिदं महेशः, शक्त्या तवैव हरते ननु चान्त-काले । ईशा न तेऽपि च भवन्ति त्वया विहीनास्तस्मात् त्वमेव जगतः स्थिति-नाश-कर्त्री । ॐ ऐं ह्रीं ग्लौं आर्त-परित्राणायै नमः स्वाहा ॥२४॥ कीर्तिर्मतिः स्मृति-गती करुणा दया त्वं, श्रद्धा धृतिश्च वसुधा कमलालया च । पुष्टिः कलाऽथ विजया गिरजा जया त्वं, तुष्टिः प्रभा त्वमसि बुद्धिरुमा रमा च । ॐ ऐं ह्रीं म्लीं वैष्णव्यै नमः स्वाहा ॥२५॥ विद्या

क्षमा जगति कापिरपोह मेधा, सर्वं त्वमेव विदिता भुवन-त्रयेऽस्मिन् । आभिर्विना तव तु शक्तिभिराशु कर्तुं, को वा क्षमः सकल-लोक-निवास-भूमौ । ॐ ऐं ह्रीं ज्स्ह्रीं वाराह्यै नमः स्वाहा ॥२६॥ त्वं धारणा ननु न चेदसि कूर्म-नागौ, धर्तुं क्षमौ कथमिलामपि तौ भवेताम् । पृथ्वी न चेत् त्वमसि वा गगने कथं स्थास्यत्येतदम्ब ! निखिलं बहु-भार-युक्तम् । ॐ ऐं ह्रीं स्तुं नारसिंह्यै नमः स्वाहा ॥२७॥ ये वा स्तुवन्ति मनुजा अमरान् विमूढा, माया-गुणैस्तव चतुर्मुख-विष्णु-रुद्रान् । शुभ्रांशुर्वह्नि-यम-वायु-गणेश-मुख्यान्, किं त्वामृते जननि ! ते प्रभवन्ति कार्ये । ॐ ऐं ह्रीं ल्लूं लक्ष्म्यै नमः स्वाहा ॥२८॥ ये जुह्वति प्रवितवेऽल्प-धियोऽम्ब ! यज्ञे, वह्नौ सुरान् समधिकृत्य हविः समिद्धम् । स्वाहा न चेत् त्वमसि ते कथमापुरद्धा, त्वामेव किं न हि यजन्ति सतो हि मूढाः । ॐ ऐं ह्रीं क्स्रीं नारायण्यै नमः स्वाहा ॥२९॥ भोग-प्रदाऽसि भवतीह चराचराणां, स्वांशैर्ददासि खलु जीवनमेव नित्यम् । स्वीयान् सुरान् जननि ! पोषयसीह यद्वत् तद्वत्, परानपि च पालयसि सु-हेतोः । ॐ ऐं ह्रीं ह्रौं विश्व-मायायै नमः स्वाहा ॥३०॥ चित्रं त्वमोयदसुभी रहिता न सन्ति, त्वच्चिन्तितेन दनुजाः प्रथित-प्रभावाः । येषां कृते जननि ! देह-निबन्धनं ते, क्रीडा-रसस्तव न चान्य-तरोऽत्र हेतुः । ॐ ऐं ह्रीं क्रीं महा-मायायै नमः स्वाहा ॥३१॥ विद्या त्वमेव सुखदाऽसुरदाऽप्यविद्या, मातस्त्वमेव जननार्ति-हरा नराणाम् । मोक्षार्थिभिस्तु कलिता किल मन्दधीभिर्नाराधिता जननि ! भोग-परैस्तथाऽज्ञैः । ॐ ऐं ह्रीं ईं महिषासुर-मर्दिन्यै नमः स्वाहा ॥३२॥ **ऋषिरुवाच** । एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः । अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सुख-कर्यै नमः स्वाहा ॥३३॥ भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता । प्राह प्रसाद-सुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान् । ॐ ऐं ह्रीं क्रूं भक्त-प्रियायै नमः स्वाहा ॥३४॥ **देव्युवाच** । व्रियतां त्रिदशाः ! सर्वं यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् । एवं ददाम्यहम् प्रीत्या स्तवैरेभिः

सुपूजिता । ॐ ऐं ह्रीं सः धन-धान्य-प्रदायै नमः स्वाहा ॥३५॥ देवा ऊचुः । भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते । यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः । ॐ ऐं ह्रीं स्लूं भक्त-रक्षिकायै नमः स्वाहा ॥३६॥ यदि चापि वरो देयस्त्वया- स्माकं महेश्वरि ! (संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथा परमापदः) । यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ! ॐ ऐं ह्रीं प्रें भोगदायै नमः स्वाहा ॥३७॥ तस्य वित्तर्धि-विभवैर्धन-दारादि-सम्पदाम् । वृद्धयेऽस्मत्-प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाऽम्बिके । ॐ ऐं ह्रीं सूं ऋद्धि-प्रदायै नमः स्वाहा ॥३८॥ **ऋषिरुवाच** । एवं प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथात्मनः । तथा तूक्त्वा भद्रकाली बभूवाऽन्तर्हिता नृप ! ॐ ऐं ह्रीं प्लीं वृद्धि-प्रदायै नमः स्वाहा ॥३९॥ एतत्तु कथितं भूप ! सम्भूता सा यथा पुरा । देवी देव-शरीरेभ्यो जगत्-त्रय-हितैषिणी । ॐ ह्रीं ओं विष्णु-मायायै नमः स्वाहा ॥४०॥ पुनश्च गौरी-देहात् सा समुद्भूता यथाऽभवत् । नाशाय दुष्ट-दैत्यानां तथा शुम्भ-निशुम्भयोः । ॐ ऐं ह्रीं औं सर्व-मोहिन्यै नमः स्वाहा ॥४१॥ रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी । तच्छृणुष्व मयाख्यातं यथा-वत् कथयामि ते । ॐ ऐं ह्रीं ह्लौं वरदायै नमः स्वाहा ॥४२॥

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सार्वणिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामाः) । जगदम्बार्पणमस्तु ॥

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग १ छोटी इलायची, गूगल । इस अध्याय में विशेष मिश्री एवं पायस हैं । सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा ॥ अम्बेऽम्बिकेऽम्बालिके नमानयति कश्चनः । ससस्त्यश्चकः सुभद्रिकां कांपीलवासिनी स्वाहा ॥

इतना बोलकर पान पर रखा पदार्थ अग्नि में छोड़कर आगे लिखे मंत्र को बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः। पिवतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा। दिशः प्रतिशऽआद्दिशो व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

तान्त्रिक आहुति

ह्रीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै श्रीमहालक्ष्म्यै सप्त-विंशति-वर्णात्मिकायै लक्ष्मी-बीजाधिष्ठात्र्यै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है।

पंचमः उत्तम चरित

घण्टा-शूल-हलानि शङ्ख-मुशले चक्रं धनुः-सायकम्। हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त-विलसच्छीतांशु-तुल्य-प्रभाम् ॥

गौरी-देह-समुद्भवां त्रि-जगतामाधार-भूतां महा-पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादि-दैत्यार्दिनीम् ॥

॥ ॐ क्लीं **ऋषिरुवाच** ॥ पुरा शुम्भ-निशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शची-पतेः। त्रैलोक्य-यज्ञ-भागाश्च हृता मद-बलाश्रयात्। ॐ ऐं क्लीं श्रौं दिव्य-रूपायै नमः स्वाहा ॥१॥ तावेव सूर्यतां तद्-वदधिकारं तथैन्दवम्। कौबेरमथ याम्यं च चक्राते वरुणस्य च। ॐ ऐं क्लीं ओं महा-तेजायै नमः स्वाहा ॥२॥ तावेव पवनर्द्धिं च चक्रतुर्वह्नि-कर्म च। ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्ट-राज्याः पराजिताः। ॐ ऐं क्लीं लरीं योगिन्यै नमः स्वाहा ॥३॥ हृताधिकारास्त्रि-दशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः। महासुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम्। ॐ ऐं क्लीं क्रीं सिद्ध-योगिन्यै नमः स्वाहा ॥४॥ तयाऽस्माकं वरो दत्तो यथाऽऽपत्सु स्मृताऽखिलाः। भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात् परमापदः। ॐ ऐं क्लीं ह्रीं योगेश्वर्यै नमः स्वाहा ॥५॥ एवं कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम्। जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णु-मायां प्रतुष्टुवुः। ॐ ऐं क्लीं हूं हाकिन्यै नमः स्वाहा ॥६॥ देवा ऊचुः ॥

नमो देव्यै महा-देव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् । ॐ ऐं क्लीं रौं महा-घोरायै नमः स्वाहा ॥७॥ रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्य्यै धात्र्यै नमो नमः । ज्योत्स्नायै चेन्दु-रूपिण्यै सुखायै सततं नमः । ॐ ऐं क्लीं म्लीं काल-रात्र्यै नमः स्वाहा ॥८॥ कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः । नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं स्हौं कालिकायै नमः स्वाहा ॥९॥ दुर्गायै दुर्ग-पारायै सारायै सर्व-कारिण्यै । ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः । ॐ ऐं क्लीं ग्लूं सिंह-वाहिन्यै नमः स्वाहा ॥१०॥ अति-सौम्याति-रौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः । नमो जगत्-प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं सौं ब्रह्माण्यै नमः स्वाहा ॥११॥ या देवी सर्व-भूतेषु विष्णु-माया तु शब्दिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं ल्लूं चर्चिकायै नमः स्वाहा ॥१२॥ या देवी सर्व-भूतेषु चेतना त्वभिधीयते । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं क्सां चंड्यै नमः स्वाहा ॥१३॥ या देवी सर्व-भूतेषु बुद्धि-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं ग्ल्मौं गौर्य्यै नमः स्वाहा ॥१४॥ या देवी सर्व-भूतेषु निद्रा-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं स्क्लूं दोष-हारिण्यै नमः स्वाहा ॥१५॥ या देवी सर्व-भूतेषु सुधा-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं क्रों शिवायै नमः स्वाहा ॥१६॥ या देवी सर्व-भूतेषु च्छाया-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं ह्लीं वत्सलायै नमः स्वाहा ॥१७॥ या देवी सर्व-भूतेषु शक्ति-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं लीं दोषाकर-वधू-प्राणायै नमः स्वाहा ॥१८॥ या देवी सर्व-भूतेषु तृष्णा-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं स्त्रूं महोदर्यै नमः स्वाहा ॥१९॥ या देवी सर्व-भूतेषु क्षान्ति-रूपेण संस्थिता ।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं लीं दुर्गायै नमः स्वाहा ॥२०॥ या देवी सर्व-भूतेषु जाति-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं सं क्षान्त्यै नमः स्वाहा ॥२१॥ या देवी सर्व-भूतेषु लज्जा-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं ह्यूं शैलिन्यै नमः स्वाहा ॥२२॥ या देवी सर्व-भूतेषु शान्ति-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं जूं सावित्र्यै नमः स्वाहा ॥२३॥ या देवी सर्व-भूतेषु श्रद्धा-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं ह्लूीं दोषाकर-वध्वे नमः स्वाहा ॥२४॥ या देवी सर्व-भूतेषु कान्ति-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं स्कीं कपालिन्यै नमः स्वाहा ॥२५॥ या देवी सर्व-भूतेषु लक्ष्मी-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं श्रूं कात्यायन्यै नमः स्वाहा ॥२६॥ या देवी सर्व-भूतेषु धृति-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं हूं महा-देव्यै नमः स्वाहा ॥२७॥ या देवी सर्व-भूतेषु वृत्ति-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं क्लूं काल-रात्र्यै नमः स्वाहा ॥२८॥ या देवी सर्व-भूतेषु स्मृति-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं द्रौं दण्डपायै नमः स्वाहा ॥२९॥ या देवी सर्व-भूतेषु दया-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं क्लूं वसुन्धरायै नमः स्वाहा ॥३०॥ या देवो सर्व-भूतेषु तुष्टि-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं सं शिव-दूत्यै नमः स्वाहा ॥३१॥ या देवी सर्व-भूतेषु पुष्टि-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं [illegible] नमः स्वाहा ॥३२॥ या देवी सर्व-भूतेषु मातृ-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं फ्रीं महा-तेजायै नमः

स्वाहा ।।३३।। या देवी सर्व-भूतेषु भ्रान्ति-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं स्लां दोषा-पूज्यायै नमः स्वाहा ।।३४।। इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या । भूतेषु सततं तस्यै व्याप्ति-देव्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं फ्रें दण्ड-दोष्कायै नमः स्वाहा ।।३५।। चिति-रूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत् । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः । ॐ ऐं क्लीं ओं विश्वेश्वर्यै नमः स्वाहा ।।३६।। स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्ट-संश्रयात् तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता । करोति सा नः शुभ-हेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभि-हन्तु चापदः । ॐ ऐं क्लीं ह्रां माहेन्द्र्यै नमः स्वाहा ।।३७।। या साम्प्रतं चोद्धत-दैत्य-तापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते । या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्ति-विनम्र-मूर्तिभिः । ॐ ऐं क्लीं नं रौद्र्यै नमः स्वाहा ।।३८।। **ऋषिरुवाच** ।। एवं स्तवा द-युक्तानां देवानां तत्र पार्वती । स्नातुमभ्याययौ तोये जाह्नव्या नृप-नन्दन ! ॐ ऐं क्लीं वं रुद्राण्यै नमः स्वाहा ।।३९।। **देव्युवाच** ।। साऽब्रवीत्तान् सुरान् सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का । शरीर-कोशतश्चास्याः समुद्भूताऽब्रवीच्छिवा । ॐ ऐं क्लीं भं दण्डि-खण्डक-नाशिन्यै नमः स्वाहा ।।४०।। स्तोत्रं ममैतत् क्रियते शुम्भ-दैत्य-निराकृतैः । देवैः समेतैः समरे निशुम्भेन पराजितैः । ॐ ऐं क्लीं श्रां दस्यु-रतायै नमः स्वाहा ।।४१।। **ऋषिरुवाच** ।। शरीर-कोशाद् यत्तस्याः पार्वत्या निःसृताम्बिका । श्रीकौशिकी समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते । ॐ ऐं क्लीं लं क्षमायै नमः स्वाहा ।।४२।। तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाऽभूत् साऽपि पार्वती । क्रीं कालिके समाख्याता हिमाचल-कृताश्रया । ॐ ऐं क्लीं ल्लूं उमायै नमः स्वाहा ।।४३।। ततोऽम्बिका परं रूपं विभ्राणां सुमनोहरम् । ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुम्भ-निशुम्भयोः । ॐ ऐं क्लीं ईं सारंगिण्यै नमः स्वाहा ।।४४।। **चण्ड-मुण्डौ उवाच** ।। ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा । काप्यास्ते स्त्री महाराज ! भासयन्ती हिमा-

चलम् । ॐ ऐं क्लीं क्लीं गंगायै नमः स्वाहा ।।४५।। नैव तादृक् क्वचिद् रूपं दृष्टं केनचिदुत्तमम् । ज्ञायतां काऽप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर ! ॐ ऐं क्लीं ह्लीं दस्यु-पूज्यायै नमः स्वाहा ।।४६।। स्त्री-रत्नमति-चार्वंगी द्योतयन्ती दिशत्विषा । सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र ! तां भवान् द्रष्टुमर्हति । ॐ ऐं क्लीं क्ष्मल्रीं इन्द्राण्यै नमः स्वाहा ।।४७।। यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो ! त्रैलोक्ये तु समस्तानि साम्प्रतं भान्ति ते गृहे । ॐ ऐं क्लीं पूं ईश्वर्यै नमः स्वाहा ।।४८।। ऐरावतः समानीतो गज-रत्नं पुरन्दरात् । पारिजात-तरुश्चायं तथैवोच्चैःश्रवा हयः । ॐ ऐं क्लीं श्रौं दस्यु-द्रविण-दायिन्यै नमः स्वाहा ।।४९।। विमानं हंस-संयुक्तमेतत् तिष्ठति तेऽङ्गणे । रत्न-भूत-मिहानीतं यदासीद् वेधसोऽद्भुतम् । ॐ ऐं क्लीं ह्रौं स्वधायै नमः स्वाहा ।।५०।। निधिरेष महा-पद्मः समानीतो धनेश्वरात् । किञ्जल्किनीं ददौ चाब्धिर्मालामम्लान-पंकजाम् । ॐ ऐं क्लीं भ्रूं दस्यु-वर्ग-कृताहार्यै नमः स्वाहा ।।५१।। छत्रं ते वारुणं गेहे काञ्चन-स्रावि तिष्ठति । तथाऽयं स्यन्दन-वरो यः पुरासीत् प्रजापतेः । ॐ ऐं क्लीं क्स्त्रीं कौमार्यै नमः स्वाहा ।।५२।। मृत्योरुत्क्रांतिदा नाम शक्तिरीश ! त्वया हृता । पाशः सलिल-राजस्य भ्रातस्तव परिग्रहे । ॐ ऐं क्लीं आं शंकर्यै नमः स्वाहा ।।५३।। निशुम्भश्चाब्धि-जाताश्च समस्ता रत्न-जातयः । वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्नि-शौचे च वाससी । ॐ ऐं क्लीं क्रूं दस्यु-निर्णाशिन्यै नमः स्वाहा ।।५४।। एवं दैत्येन्द्र ! रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते । स्त्री-रत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते । ॐ ऐं क्लीं त्रूं खड्गिने नमः स्वाहा ।।५५।। ऋषिरुवाच ।। निशम्य तु वचः शुम्भः स तदा चण्ड-मुण्डयोः । प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महासुरम् । ॐ ऐं क्लीं उं दस्यु-कुल-निर्णाशिन्यै नमः स्वाहा ।।५६।। एवमेव च वक्तव्या सा गत्वा वचनात्मम । यथा चाभ्येति सम्प्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु । ॐ ऐं क्लीं जां वाम-नेत्र्यै नमः स्वाहा ।।५७।। स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽति-शोभने । सा देवी तां ततः

प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा । ॐ ऐं क्लीं ह्लूं दस्यु-प्रिय-कर्यै नमः स्वाहा ।।५८।। **दूत उवाच** ।। देवि ! दैत्येश्वरः
शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः । दूतोऽहं प्रेषितस्तेन त्वत्-सकाशमिहागतः । ॐ ऐं क्लीं फ्रौं दशेश्वर्यै नमः स्वाहा ।।५९।।
अव्याहताज्ञः सर्वासु यः सदा देव-योनिषु । निर्जिताखिल-दैत्यारिः स यदाह श्रृणुष्व तत् । ॐ ऐं क्लीं क्रौं दस्यु-
नृत्य-दर्शन-तत्परायै नमः स्वाहा ।।६०।। मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः । यज्ञ-भागानहं सर्वानुपाश्नामि
पृथक् पृथक् । ॐ ऐं क्लीं किं गायत्र्यै नमः स्वाहा ।।६१।। त्रैलोक्ये वर-रत्नानि मम वश्यान्यशेषतः । तथैव गज-
रत्नं च हृत्वा देवेन्द्र-वाहनम् । ॐ ऐं क्लीं ग्लूं दुष्ट-दण्ड-कर्यै नमः स्वाहा ।।६२।। क्षीरोद-मथनोद्भूतमश्व-रत्नं
ममामरैः । उच्चैःश्रव-ससंज्ञं तत्-प्रणिपत्य समर्पितं । ॐ ऐं क्लीं ध्क्लीं महा-मेधायै नमः स्वाहा ।।६३।। यानि
चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च । रत्न-भूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने । ॐ ऐं क्लीं रं दुष्ट-वर्ग-विद्राविण्यै नमः
स्वाहा ।।६४।। स्त्री-रत्न-भूतां त्वां देवि ! लोके मन्यामहे वयम् । सा त्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्न-भुजो वयम् ।
ॐ ऐं क्लीं ह्लूं मोहिन्यै नमः स्वाहा ।।६५।। मां वा ममानुजं वाऽपि निशुम्भमुरु-विक्रमम् । भज त्वं चपलापाङ्गि !
रत्न-भूताऽसि वै यतः । ॐ ऐं क्लीं क्सैं कामाक्षायै नमः स्वाहा ।।६६।। परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते मत्-परिग्रहात् ।
एतद् बुद्धया समालोच्य मत्-परिग्रहतां व्रज । ॐ ऐं क्लीं स्हूं दुष्ट-वर्ग-निग्रहार्हायै नमः स्वाहा ।।६७।। **ऋषिरुवाच** ।
उक्त्वैवं सा तदा देवी गम्भीरान्तः-स्मिता । दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत् । ॐ ऐं क्लीं श्र् श्रीं दूषकं प्राण-
नाशिन्यै नमः स्वाहा ।।६८।। **देव्युवाच** ।। सत्यमुक्तं त्वया नात्र मिथ्या किञ्चित् त्वयोदितम् । त्रैलोक्याधिपतिः
शुम्भो निशुम्भश्चापि तादृशः । ॐ ऐं क्लीं ओं त्रि-नेत्रायै नमः स्वाहा ।।६९।। किं त्वत्र यत्-प्रतिज्ञातं मिथ्या
तत् क्रियते कथम् । श्रूयतामल्प-बुद्धित्वात् प्रतिज्ञा या कृता पुरा । ॐ ऐं क्लीं लूं दूषकोत्ताप-जनन्यै नमः

स्वाहा ॥७०॥ यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति । यो मे प्रति-बलो लोके स मे भर्ता भविष्यति । ॐ ऐं क्लीं ह्लूं डाकिन्यै नमः स्वाहा ॥७१॥ तदागच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः । मां जित्वा किं चिरेणात्र पाणिं गह्णातु मे लघु । ॐ ऐं क्लीं ल्लूं दूषकारिष्ट-कारिण्यै नमः स्वाहा ॥७२॥ **दूत उवाच ॥** अवलिप्तासि मैवं त्वं देवि ! ब्रूहि ममाग्रतः । त्रैलोक्ये कः पुमांस्तिष्ठेदग्रे शुम्भ-निशुम्भयोः । ॐ ऐं क्लीं स्खौं दूषक-द्वेषण-कर्यै नमः स्वाहा ॥७३॥ अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि । तिष्ठन्ति सम्मुखे देवि ! किं पुनः स्त्री त्वमेकिका । ॐ ऐं क्लीं स्भ्रौं कालिकायै नमः स्वाहा ॥७४॥ इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे । शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यसि सम्मुखम् । ॐ ऐं क्लीं क्ष्म्लीं दाहिकायै नमः स्वाहा ॥७५॥ सा त्वं गच्छ मयैवोक्ता पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः । केशाकर्षण-निर्धूत-गौरवा मा गमिष्यसि । ॐ ऐं क्लीं ब्रीं कपालिन्यै नमः स्वाहा ॥७६॥ **देव्युवाच ॥** एवमेतद् बली शुम्भो निशुम्भश्चाति-वीर्यवान् । किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा । ॐ ऐं क्लीं सीं दहना-त्मिकायै नमः स्वाहा ॥७७॥ स त्वं गच्छ मयोक्तं ते यदेतत् सर्वमादृतः । तदाचक्ष्वासुरेन्द्राय स च युक्तं करोतु तत् । ॐ ऐं क्लीं भूं चामुण्डायै नमः स्वाहा ॥७८॥

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥

वैदिक आहुति

१ पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इस अध्याय में विशेष कपूर पुष्प व ऋतु-फल ही हैं । सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा ॥ दिशः प्रतिशऽ आद्दिशो व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्भ्यः स्वाहा ॥

क्लीं जयन्ती साङ्गायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै धूम्राक्ष्यै विष्णु-मायादि चतुर्विंशद्देवताभ्यो महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है।

षष्ठः

ॐ नागाधीश्वर-विष्टरां फणि - फणोत्तंसोरु-रत्नावलीं । भास्वद्-देह-लतां दिवाकर-निभां नेत्र-त्रयोद्भासिताम् ॥
माला-कुम्भ-कपाल-नीरज-करां चन्द्रार्ध-चडां परां । सर्वज्ञेश्वर-भैरवाङ्क-निलयां पद्मावतीं चिन्तये ॥

॥ ॐ **ऋषिरुवाच** ॥ आकर्ण्य तु वचो देव्याः स दूतोऽमर्ष-पूरितः । समाचष्ट समागम्य दैत्य-राजाय विस्तराद् ।
ॐ ऐं क्लीं श्रौं दर्भ-तनवे नमः स्वाहा ॥१॥ तस्य दूतस्य तद्-वाक्यमाकर्ण्यासुर-राट् ततः । स-क्रोधः प्राह दैत्या-
नामधिपं धूम्र-लोचनम् । ॐ ऐं क्लीं लां दारिकारि-निहंत्र्यै नमः स्वाहा ॥२॥ **शुम्भ उवाच** ॥ हे धूम्रलोचनाशु !
त्वं स्व-सैन्य-परिवारितः । तामानय बलाद् दुष्टां केशाकर्षण-विह्वलाम् । ॐ ऐं क्लीं श्रौं योगिन्यै नमः स्वाहा ॥३॥
तत्-परित्राणदः कश्चिद् यदि वोत्तिष्ठतेऽपरः । स हन्तव्योऽमरो वाऽपि यक्षो गन्धर्व एव वा । ॐ ऐं क्लीं स्हें दारु-
केश्वर-पूजितायै नमः स्वाहा ॥४॥ **ऋषिरुवाच** ॥ तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्र-लोचनः । वृतः षष्ट्या
सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं पतंगायै नमः स्वाहा ॥५॥ स दृष्ट्वा तां ततो देवीं तुहिनाचल-
संस्थिताम् । जगादोच्चैः प्रयाहि तु मूलं शुम्भ-निशुम्भयोः । ॐ ऐं क्लीं श्रीं गणेश्वर्य्यै नमः स्वाहा ॥६॥
॥**धूम्रलोचन उवाच** ॥ न चेत् प्रीत्याद्य भवती मद्भर्तारमुपैष्यति । ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षण-विह्वलाम् ।

ॐ ऐं क्लीं रुं दारुकेश्वर-वंदितायै नमः स्वाहा ॥७॥ **देव्युवाच** ॥ दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान् बल-संवृतः । बलान्नयसि मामेवं ततः किं ते करोम्यहम् । ॐ ऐं क्लीं च्छूं शैलायै नमः स्वाहा ॥८॥ **ऋषिरुवाच** ॥ अभ्युक्तः सोऽभ्यधावत् तामसुरो धूम्र-लोचनः । हुंकारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः । ॐ ऐं क्लीं फ्रें दारुकेश्वर-मात्रे नमः स्वाहा ॥९॥ अथ क्रुद्धं महा-सैन्यमसुराणां तथाम्बिका । ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्ति-परश्वधैः । ॐ ऐं क्लीं ह्लूं दर्भ-हस्तायै नमः स्वाहा ॥१०॥ ततो धुत-सटः कोपात् कृत्वा नादं सुभैरवम् । पपातासुर-सेनायां सिंहो देव्या स्व-वाहनः । ॐ ऐं क्लीं द्रें दर्भ-युतायै नमः स्वाहा ॥११॥ काश्चित् कर-प्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान् । आक्रम्य चाधरेणान्यान् स जघान् महासुरान् । ॐ ऐं क्लीं सां दर्भ-कर्म-विवर्जितायै नमः स्वाहा ॥१२॥ केषाञ्चित् पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी । तथा तल-प्रहारेण शिरांसि कृतवान् पृथक् । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं कृष्ण-वर्णायै नमः स्वाहा ॥१३॥ विच्छिन्न-बाहु-शिरसः कृतास्तेन तथापरे । पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धुत-केसरः । ॐ ऐं क्लीं ऐं दर्भ-मय्यै नमः स्वाहा ॥१४॥ क्षणेन तद्-बलं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना । तेन केसरिणा देव्या वाहनेनाति-कोपिना । ॐ ऐं क्लीं प्रों यम-दूत्यै नमः स्वाहा ॥१५॥ श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्र-लोचनम् । बलं च क्षयितं कृत्स्नं देवी केसरिणा ततः । ॐ ऐं क्लीं त्रूं दर्भ-सर्व-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा ॥१६॥ चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भः प्रस्फुरिता-धरः । आज्ञापयामास च तौ चण्ड-मुण्डौ महासुरौ । ॐ ऐं क्लीं क्रौं दर्भ-कर्माचार-रतायै नमः स्वाहा ॥१७॥ ॥ **शुम्भ उवाच** ॥ हे चण्ड ! हे मुण्ड ! बलैर्बहुभिः परिवारितौ । तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु । ॐ ऐं क्लीं श्रौं भद्र-काल्यै नमः स्वाहा ॥१८॥ केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वा संशयो युधि । तदाशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् । ॐ ऐं क्लीं त्रीं दर्भ-हस्त-कृतार्हणायै नमः स्वाहा ॥१९॥ तस्यां हतायां दुष्टायां सिंहे च

विनिपातते । शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकाम् । ॐ ऐं क्लीं दर्भानुकूलायै नमः स्वाहा ।।२०।।

।। ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सार्वणिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ।।

वैदिक आहुति

१ पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर, १ सुपारी, २ लौंग, २ छोटी इलायची, गूगल । इस अध्याय में विशेष भोजपत्र है । सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र पढ़ें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावाना । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा ।। दिशः प्रतिशऽ आदिशो व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।।

तान्त्रिक आहुति

ह्रीं सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै श्रीमहा-लक्ष्म्यै सप्त-विंशति-वर्णात्मिकायै लक्ष्मी-बीजाधिष्ठात्र्यै नमः महाऽऽहुतिं समर्पयामि स्वाहा ।

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ।।

सामान सब ऊपर लिखा है ।

सप्तमः

ध्यानम्

ॐ ध्यायेयं रत्न-पीठे शुक-कल-पठितं शृण्वतीं श्यामलाङ्गीं । न्यस्तैकाङ्घ्रि-सरोजे शशि-शकल-धरां वल्लकीं वादयन्तीम् । कह्लाराबद्ध-मालां नियमित-विलसच्चोलिकां रक्त-वस्त्रां । मातंगीं शंख-पात्रां मधुर-मधु-मदां चित्र-कोद्भासि-मालाम् ।।

।। ॐ **ऋषिरुवाच** ।। आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्ड-मुण्ड-पुरोगमाः । चतुरंग-बलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः । ॐ ऐं क्लीं श्रौं युगेश्वर्यै नमः स्वाहा ।।१।। ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्-हासां व्यवस्थिताम् । सिंहस्योपरि शैलेन्द्र-शृंगे महति काञ्चने । ॐ ऐं क्लीं प्रों सरस्वत्यै नमः स्वाहा ।।२।। ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यताः । आकृष्ट-चापासि-धरास्तथान्ये तत्-समीपगाः । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं दांभर्यायै नमः स्वाहा ।।३।। ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन् प्रति । कोपेन चास्या वदनं मषीवर्णमभूत् तदा । ॐ ऐं क्लीं ह्रौं यम-दूत्यै नमः स्वाहा ।।४।। भृकुटी-कुटिलात् तस्या ललाट-फलकाद् द्रुतम् । काली कराल-वदना विनिष्क्रान्ताऽसि-पाशिनी । ॐ ऐं क्लीं श्रौं दर्भ-कर्माचार-रतायै नमः स्वाहा ।।५।। विचित्र-खट्वांग-धरा नर-माला-विभूषणा । द्वीपि-चर्म-परीधाना शुष्क-मांसाति-भैरवा । ॐ ऐं क्लीं ओं दर्भानुकूलायै नमः स्वाहा ।।६।। अति-विस्तार-वदना जिह्वा-ललन-भीषणा । निमग्ना रक्त-नयना नादापूरित-दिङ्-मुखा । ॐ ऐं क्लीं श्रीं सरस्वत्यै नमः स्वाहा ।।७।। सा वेगेनाभि-पतिता घातयन्ती महासुरान् । सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत् तद्-बलम् । ॐ ऐं क्लीं क्रां दांभर्यै नमः स्वाहा ।।८।। पार्ष्णि-ग्राहांकुश-ग्राहि-योध-घण्टा-समन्वितान् । समादायैक-हस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान् । ॐ ऐं क्लीं हूं कृत्यै नमः स्वाहा ।।९।। तथैव योधं तुरगैः रथं सारथिना सह । निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयन्त्यति-भैरवम् । ॐ ऐं क्लीं छ्रां दर्वी-पात्रानुदामिन्यै नमः स्वाहा ।।१०।। एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम् । पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसान्यमपोथयत् । ॐ ऐं क्लीं ल्लूं दम-घोष-प्रपूज्यायै नमः स्वाहा ।।११।। तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथा सुरैः । मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथितान्यपि । ॐ ऐं क्लीं सौं शिवायै नमः स्वाहा ।।१२।। बलिनां तद्-बलं सर्वमसुराणां दुरात्मनाम् । ममर्दाभक्षयच्चान्यानन्यांश्चाताडयत् तथा । ॐ ऐं क्लीं ह्रौं दम-घोष-समाराध्यायै नमः स्वाहा ।।१३।। असिना निहता

केचित् केचित् खटवांग-ताडिताः । जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभिहतास्तथा । ॐ ऐं क्लीं क्रूं यक्षान्यै नमः स्वाहा ।।१४।। क्षणेन तद्-बलं सर्वमसुराणां निपातितम् । दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमति-भीषणाम् । ॐ ऐं क्लीं सौं दम-घोष-वर-प्रदायै नमः स्वाहा ।।१५।। शर-वर्षैर्महा-भीमैर्भीमाक्षीं तां महासुरः । छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः । ॐ ऐं क्लीं कुं दावाग्नि-रूपिण्यै नमः स्वाहा ।।१६।। तानि चक्राण्यनेकानि विशमानानि तन्मुखम् । बभुर्यथार्क-बिम्बानि सुबहूनि घनोदरम् । ॐ ऐं क्लीं ह्लीं हुङ्कार्यै नमः स्वाहा ।।१७।। ततो जहासाति-रुषा भीमं भैरव-नादिनी । काली कराल-वक्त्रान्तर्दुर्दर्श-दशनोज्ज्वला । ॐ ऐं क्लीं ह्लूं दन्त-चर्चित-हस्तिकायै नमः स्वाहा ।।१८।। उत्थाय च महा-सिंहं देवी चण्डमधावत । गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत् । ॐ ऐं क्लीं मूं सहस्राक्ष्यै नमः स्वाहा ।।१९।। अथ मुण्डोऽभ्यधावत् तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । तमप्यपातयद् भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा । ॐ ऐं क्लीं (ह्रौं) ह्रां जयन्त्यै नमः स्वाहा ।।२०।। छिन्ने शिरसि दैत्येन्द्रश्चक्रे नादं सु-भैरवम् । तेन नादेन महता भासितं भुवन-त्रयम् । ॐ ऐं क्लीं ह्सूं द्वार-वासिन्यै नमः स्वाहा ।।२१।। हत-शेषं ततः सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । मुण्डं च सु-महा-वीर्यं दिशो भेजे भयातुरम् । ॐ ऐं क्लीं क्रें आकर्षण्यै नमः स्वाहा ।।२२।। शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च । प्राह प्रचण्डाट्टहास-मिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम् । ॐ ऐं क्लीं लूं भैरव्यै नमः स्वाहा ।।२३।। **देव्युवाच** ।। मया तवात्रोपहृतौ चण्ड-मुण्डौ महा-पशू । युद्ध-यज्ञे स्वयं शुम्भं निशुम्भं च हनिष्यसि । ॐ ऐं क्लीं प्लूं मृडान्यै नमः स्वाहा ।।२४।। **ऋषिरुवाच** ।। तयानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्ड-मुण्डौ महासुरौ । उवाच कालीं कल्याणी ललितं चण्डिका वचः । ॐ ऐं क्लीं शां दम्भ-हन्त्र्यै नमः स्वाहा ।।२५।। यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता । चामुण्डा तु ततो लोके ख्याता देवि ! भविष्यसि । ॐ ऐं क्लीं ह्स्रीं धृत्यै नमः स्वाहा ।।२६।।

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) श्रीजगदम्बार्पणमस्तु ॥

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य, १ कमलगट्टा घी में भिगोकर, १ सुपारी, २ लौंग, २ छोटी इलायची, गूगल। इस अध्याय में जायफल विशेष है। सब चीजें स्रुची में रखकर खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानाः। पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा। दिशः प्रतिशऽ आदिशो व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा।

तान्त्रिक आहुति

ॐ जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै काली चामुण्डा देव्यै कर्पूर-बीजाधिष्ठात्र्यै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है।

अष्टमः

ध्यानम्

ॐ अरुणां करुणातरंगिताक्षीं, धृत - पाशांकुश - वाण - चाप - हस्ताम्।
अणिमादिभिरावृतां मयूखैरहमित्येव विभावये भवानीम् ॥

॥ **ऋषिरुवाच** ॥ चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते। बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः। ॐ ऐं क्लीं श्रौं दत्त-स्वर्गायै नमः स्वाहा ॥१॥ ततः कोप-पराधीन-चेताः शुम्भः प्रतापवान्। उद्योगं सर्व-सैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह। ॐ ऐं क्लीं स्लूं विन्ध्य-वासिन्यै नमः स्वाहा ॥२॥ **शुम्भ उवाच** ॥ अथ सर्व-बलैर्दैत्याः षडशीति-

रुदायुधाः । कम्बूनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु स्व-बलैर्वृताः । ॐ ऐं क्लीं प्लीं दम्भ-दाल्यै नमः स्वाहा ॥३॥ कोटि-वीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै । शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया । ॐ ऐं क्लीं अं दम्भ-लोक-विमोहिन्यै नमः स्वाहा ॥४॥ कालका दौहृदा मौर्या कालकेयास्तथासुराः । युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम । ॐ ऐं क्लीं म्लीं दम्भ-शीलायै नमः स्वाहा ॥५॥ ॐ **ऋषिरुवाच** ॥ आज्ञाप्यासुर-पतिः शुम्भो भैरव-शासनः । निर्जगाम महा-सैन्य-सहस्रैर्बहुभिर्वृतः । ॐ ऐं क्लीं श्रां गंधायै नमः स्वाहा ॥६॥ आयान्तं चण्डिकां दृष्ट्वा तत्-सैन्यमति-भीषणम् । ज्या-स्वनैः पूरयामास धरणी-गगनान्तरम् । ॐ ऐं क्लीं सौं दम्भ-हरायै नमः स्वाहा ॥७॥ ततः सिंहो महा-नादमतीव कृतवान् नृप ! घण्टा-स्वनेन तन्नादमम्बिका चोपबृंहयत् । ॐ ऐं क्लीं श्रौं चण्डिकायै नमः स्वाहा ॥८॥ धनुर्ज्या-सिंह-घण्टानां नादापूरित-दिङ्-मुखा । निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारितानना । ॐ ऐं क्लीं प्रीं दम्भ-वत्यारि-मर्दिन्यै नमः स्वाहा ॥९॥ तं निनादमुपश्रुत्य दैत्य-सैन्यैश्चतुर्दिशम् । देवी सिंहस्था काली सरोषैः परिवारिताः । ॐ ऐं क्लीं म्ह्लीं विरूपाक्ष्यै नमः स्वाहा ॥१०॥ एतस्मिन्नन्तरे भूप ! विनाशाय सुर-द्विषाम् । भवायामर-सिंहानामति-वीर्य-बलान्विताः । ॐ ऐं क्लीं प्रूं दम्भ-रूपायै नमः स्वाहा ॥११॥ ब्रह्मेश-गुह-विष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः । शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्-रूपैश्चण्डिकां ययुः । ॐ ऐं क्लीं ऐं महा-मायायै नमः स्वाहा ॥१२॥ यस्य देवस्य यद्-रूपं यथा भूषण-वाहनम् । तद्-वदेव हि तच्छक्तिरसुरान् योद्धुमाययौ । ॐ ऐं क्लीं क्रों दम्भ-कर्यै नमः स्वाहा ॥१३॥ हंस-युक्त-विमानाग्रे साक्ष-सूत्र-कमण्डलुः । आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभि-धीयते । ॐ ऐं क्लीं ईं संहारिण्यै नमः स्वाहा ॥१४॥ माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूल-वर-धारिणी । महाहि-वलया प्राप्ता चन्द्र-रेखा-विभूषणा । ॐ ऐं क्लीं ऐं दम्भ-सन्ताप-दारिण्यै नमः स्वाहा ॥१५॥ कौमारी शक्ति-हस्ता च

मयूर-वर-वाहना । योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुह-रूपिणी । ॐ ऐं क्लीं लूं कुलेश्वर्यै नमः स्वाहा ॥१६॥ तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरि-संस्थिता । शङ्ख-चक्र-गदा-शार्ङ्ग-खड्ग-हस्ताभ्युपाययौ । ॐ ऐं क्लीं फ्रों दत्त-मोक्षायै नमः स्वाहा ॥१७॥ यज्ञ-वाराहमतुलं रूपं या विभ्रतो हरेः । शक्तिः साप्याययौ तत्र वाराहीं विभ्रती तनुम् । ॐ ऐं क्लीं ह्लूं नागिन्यै नमः स्वाहा ॥१८॥ नारसिंही नृसिंहस्य विभ्रती सदृशं वपुः । प्राप्ता तत्र सटाक्षेप-क्षिप्त-नक्षत्र-संहतिः । ॐ ऐं क्लीं फ्रौं दत्तारोग्यायै नमः स्वाहा ॥१९॥ वज्र-हस्ता तथैवेन्द्री गज-राजोपरि-स्थिता । प्राप्ता सहस्र-नयना यथा शक्रस्तथैव सा । ॐ ऐं क्लीं ग्लौं मुद्रायै नमः स्वाहा ॥२०॥ ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देव-शक्तिभिः हन्यतामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याऽऽह चण्डिकाम् । ॐ ऐं क्लीं स्मौं दम्भिकायै नमः स्वाहा ॥२१॥ ततो देवी-शरीरात्तु विनिष्क्रान्ताऽति-भीषणा । चण्डिका-शक्तिरत्युग्रा शिवा-शत-निनादिनी । ॐ ऐं क्लीं श्रीं दत्त-पुत्रायै नमः स्वाहा ॥२२॥ सा चाह धूम्र-जटिलमीशानमपराजिता । दूत ! त्वं गच्छ भगवन् ! पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः । ॐ ऐं क्लीं स्हौं पिनाकिन्यै नमः स्वाहा ॥२३॥ **देव्युवाच** ॥ ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावति-गर्वितौ । ये चान्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः । ॐ ऐं क्लीं ख्सें दत्त-दारायै नमः स्वाहा ॥२४॥ त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः । यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ । ॐ ऐं क्लीं क्ष्म्लीं रक्तांग्यै नमः स्वाहा ॥२५॥ बलावले-पादथ चेद् भवन्तो युद्ध-काङ्क्षिणः । तदागच्छत तृप्यन्तु मच्छिवा पिशितेन वः । ॐ ऐं क्लीं ह्रौं दत्त-हारायै नमः स्वाहा ॥२६॥ **ऋषिरुवाच** ॥ यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम् । शिव-दूती तु लोकेऽस्मिन् ततः सा ख्यातिमागता । ॐ ऐं क्लीं वीं महा-घोरायै नमः स्वाहा ॥२७॥ तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्या शर्वाख्यातं महासुरः । अमर्षापूरिता जग्मुर्यत्र कात्यायनी स्थिता । ॐ ऐं क्लीं लूं दारिकायै नमः स्वाहा ॥२८॥ ततः प्रथममेवाग्रे शर-

शक्त्यृष्टि-वृष्टिभिः । ववर्षु रुद्धतामर्षास्तां देवीममरारयः । ॐ ऐं क्लीं ब्लीं दार-वासायै नमः स्वाहा ॥२९॥ सा च तान् प्रहितान् वाणाँश्छूल-शक्ति-परश्वधान् । चिच्छेद लीलयाऽऽध्मात धनुर्मुक्तैर्महेषुभिः । ॐ ऐं क्लीं स्त्रौं जलेश्वर्यै नमः स्वाहा ॥३०॥ तस्याग्रतस्तथा काली शूल-पात-विदारितान् । (खट्वांग-पोथिताँश्चारीन् कुर्वती व्यचरत्तदा) । कमण्डलु-जलाक्षेप-हत-वीर्यान् हतौजसः । ॐ ऐं क्लीं ब्रूं दत्त-भागायै नमः स्वाहा ॥३१॥ ब्रह्माणी चाकरोच्छत्रून् येन स्म धावति । माहेश्वरी त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी । ॐ ऐं क्लीं (श्क्लीं) श्क्लीं सर्व-सिद्धयै नमः स्वाहा ॥३२॥ दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्याति-कोपना । ऐन्द्री कुलिश-पातेन शतशो दैत्य-दानवाः । ॐ ऐं क्लीं श्रूं दत्त-शोकायै नमः स्वाहा ॥३३॥ पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघ-प्रवर्षिणा । तुण्ड-प्रहार-विध्वस्ता दंष्ट्राग्र-क्षत-वक्षसः । ॐ ऐं क्लीं शीं दत्त-हस्त्यादि-वाहनायै नमः स्वाहा ॥३४॥ वाराह-मूर्त्या न्यपतँश्चक्रेण च विदारिताः । नखैर्विदारिताँश्चान्यान् भक्षयन्ती महासुरान् । ॐ ऐं क्लीं क्लीं योगिन्यै नमः स्वाहा ॥३५॥ नारसिंही चचाराजौ नादापूर्ण-दिगम्बरा । चण्डाट्टहासैरसुराः शिव-दूत्यभि-दूषिताः । ॐ ऐं क्लीं क्लौं दत्त-मत्यै नमः स्वाहा ॥३६॥ पेतुः पृथिव्यां पतितान् ताँश्च खादाथ सा तदा । एवं मातृ-गणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महासुरान् । ॐ ऐं क्लीं ह्लूं दत्त-भार्यायै नमः स्वाहा ॥३७॥ दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारि-सैनिकाः । पलायन-परान् दृष्ट्वा दैत्यान् मातृ-गणार्दितान् । ॐ ऐं क्लीं क्लूं भवान्यै नमः स्वाहा ॥३८॥ योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो रक्त-बीजो महासुरः । रक्त-बिन्दुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः । ॐ ऐं क्लीं तां दत्त-शास्त्राव-बोधिकायै नमः स्वाहा ॥३९॥ समुत्पतति मेदिन्यां तत्-प्रमाण-स्तदासुरः । युयुधे स गदा-पाणिरिन्द्र-शक्त्या महासुरः । ॐ ऐं क्लीं म्लूं भद्रायै नमः स्वाहा ॥४०॥ ततश्चैन्द्री स्व-वज्रेण रक्त-बीजमताडयत् । कुलिशेनाहतस्याशु बहु सुस्राव शोणितम् । ॐ ऐं क्लीं हं दत्त -पानायै नमः

स्वाहा ॥४१॥ समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्-रूपास्तत्-पराक्रमाः । यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद् रक्त-विन्दवः । ॐ ऐं क्लीं स्लूं निकृत्यै नमः स्वाहा ॥४२॥ तावन्तः पुरुषा जातास्तद्-वीर्य-बल-विक्रमाः । ते चाऽपि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्त-सम्भवाः । ॐ ऐं क्लीं औं दत्त-दानायै नमः स्वाहा ॥४३॥ समं मातृभिरत्युग्र-शस्त्र-पातातिभीषणम् । पुनश्च वज्र-पातेन क्षतमस्य शिरो यदा । ॐ ऐं क्लीं ह्लौं विघ्न-नाशिन्यै नमः स्वाहा ॥४४॥ ववाह रक्तं पुरुषास्ततो जाताः सहस्रशः । वैष्णवी समरे चैनं चक्रेणाभि-जघान ह । ॐ ऐं क्लीं यां क्षमा-कर्यै नमः स्वाहा ॥४५॥ गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम् । वैष्णवी-चक्र-भिन्नस्य रुधिर-स्राव-सम्भवैः । ॐ ऐं क्लीं क्ष्लीं दत्त-सौधावनी-वासायै नमः स्वाहा ॥४६॥ सहस्रशो जगद् व्याप्तं तत्-प्रमाणैर्महासुरैः । शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथासिना । ॐ ऐं क्लीं ह्लीं दुर्गायै नमः स्वाहा ॥४७॥ माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्त-बीजं महासुरम् । सा चाऽपि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत् पृथक् । ॐ ऐं क्लीं ग्लौं दासदायै नमः स्वाहा ॥४८॥ मातृ-कोप-समाविष्टो रक्त-बीजो महासुरः । तस्याहतस्य बहुधा शक्ति-शूलादिभिर्भुवि । ॐ ऐं क्लीं ह्रौं शांति-कर्यै नमः स्वाहा ॥४९॥ पपात यो वै रक्तौघस्तेनासँच्छतशोऽसुराः । तैश्चासुरासृक्-सम्भूतैरसुरैः सकलं जगत् । ॐ ऐं क्लीं प्रां दास्य-तुष्टायै नमः स्वाहा ॥५०॥ व्याप्तमासीत् ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम् । तान् विषण्णान् सुरान् दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्वरा । ॐ ऐं क्लीं क्लीं दास्यै हरायै नमः स्वाहा ॥५१॥ **देव्युवाच** ॥ उवाच कालीं चामुण्डे ! विस्तीर्णं वदनं कुरु । मच्छस्त्र-पात-सम्भूतान् रक्त-विन्दून् महासुरान् । ॐ ऐं क्लीं स्लूं गौर्यै नमः स्वाहा ॥५२॥ रक्त-बिन्दो प्रतीच्छ त्वंक्व त्रेणानेन वेगिना । भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्नान् महासुरान् । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं दास-दासी-शत-प्रदायै नमः स्वाहा ॥५३॥ एवमेष क्षयं दैत्यः क्षीण-रक्तो गमिष्यति । भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे । ॐ ऐं क्लीं ह्रैं दंपत्ती-

ष्टायै नमः स्वाहा ॥५४॥ ऋषिरुवाच ॥ उक्त्वैवं तां ततो देवी शूलेनाभिजघान तम् । मुखेन काली जगृहे रक्त-
बीजस्य शोणितम् । ॐ ऐं क्लीं श्रं विश्व-हर्त्रे नमः स्वाहा ॥५५॥ ततोऽसावजघानाथ गदया तत्र चण्डिकाम् । न
चास्या वेदनां चक्रे गदा-पातोऽल्पिकामपि । ॐ ऐं क्लीं सौं वरुणायै नमः स्वाहा ॥५६॥ तस्याहतस्य देहात्तु बहु
सुस्राव शोणितम् । यतस्ततस्तद्-वक्त्रेण चामुण्डा सम्प्रतीच्छति । ॐ ऐं क्लीं श्रीं दम्पत्यै नमः स्वाहा ॥५७॥ मुखे
समुद्गता येऽस्या रक्त-पातान् महासुराः । ताँश्च खादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणितम् । ॐ ऐं क्लीं प्सूं विश्व-
संहार-कारिण्यै नमः स्वाहा ॥५८॥ देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः । जघान रक्त-बीजं तं चामुण्डा-पीत-
शोणितम् । ॐ ऐं क्लीं द्रौं दार-रूपायै नमः स्वाहा ॥५९॥ स पपात मही-पृष्ठे शस्त्र-संघ-समाहतः । नीरक्तश्च मही-
पाल ! रक्त-बीजो महासुरः । ॐ ऐं क्लीं स्स्नां धात्र्यै नमः स्वाहा ॥६०॥ ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप !
तेषां मातृ-गणो जातो ननर्तासृङ्-मदोद्धतः । ॐ ऐं क्लीं ह्स्लीं दार-वासायै नमः स्वाहा ॥६१॥
॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सार्वणिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) जगदम्बार्पणमस्तु ॥

वैदिक आहुति

१ पान पर शाकल्य, १ कमलगट्टा घी में भिगोकर, १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इस अध्याय में विशेष लाल ही है । सब चीजें स्रुची में रखकर खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं-घृत-पावानः पिवतत्वसां वसा पावानः । पिवतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आद्दिशो-
व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

तान्त्रिक आहुति

ॐ जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै रक्ताक्ष्यै अष्ट-मातृ-सहितायै महाऽऽहुतिम्

समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है।

नवमः

॥ ध्यानम् ॥

ॐ बन्धूक-काञ्चन-निभं रुचिराक्ष-मालां, पाशांकुशौ च वरदां निज-बाहु-दण्डैः।
विभ्राणामिन्दु-शकलाभरणं त्रिनेत्रमर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि ॥

॥ ॐ **राजोवाच** ॥ विचित्रमिदमाख्यातं भगवन् भवता मम। देव्याश्चरित-माहात्म्यं रक्त-बीज-क्षयाश्रितम् ॥ ॐ ऐं क्लीं रौं दार-वासि-हृदास्पदायै नमः स्वाहा ॥१॥ भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्त-बीजे निपातिते। चकार शुम्भो यत्-कर्म निशुम्भश्चाति-कोपनः। ॐ ऐं क्लीं क्लीं कामिन्यै नमः स्वाहा ॥२॥ ऋषिरुवाच ॥ चकार कोपमतुलं रक्त-बीजे निपातिते। शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे। ॐ ऐं क्लीं म्लौं दार-वासि-जनाराध्यायै नमः स्वाहा ॥३॥ हन्यमानं महा-सैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन्। अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययाऽसुर-सेनया। ॐ ऐं क्लीं ग्लीं दार-वासि-जन-प्रियायै नमः स्वाहा ॥४॥ तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुरः। संदष्टौष्ठ-पुटाः क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः। ॐ ऐं क्लीं स्हौं दार-वासि-विनिर्मितायै नमः स्वाहा ॥५॥ आजगाम महा-वीर्यः शुम्भोऽपि स्व-बलैर्वृतः। निहन्तुं चण्डिकां कोपात् कृत्वा युद्धं तु मातृभिः। ॐ ऐं क्लीं ईं विद्यायै नमः स्वाहा ॥६॥ ततो युद्ध-मतीवासीद् देव्या शुम्भ-निशुम्भयोः। शर-वर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतोः। ॐ ऐं क्लीं बूं दार-वासि-समर्चितायै नमः स्वाहा ॥७॥ चिच्छेदास्ताँश्छरांस्ताभ्यां चण्डिका स्व-शरोत्करैः। ताडयामास चांगेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ। ॐ

ऐं क्ली लूं दार-वास्याहृत-प्राणायै नमः स्वाहा ॥८॥ निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म चादाय सुप्रभम् । आतडयन्मूर्ध्नि
सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम् । ॐ ऐं क्लीं आं सन्ध्यायै नमः स्वाहा ॥९॥ ताडिते वाहने देवी क्षुर-प्रेणासिमुत्तमम् ।
निशुम्भस्याशु चिच्छेद चर्म चाप्यष्ट-चन्द्रकम् । ॐ ऐं क्लीं श्रीं दार-वास्यारि-नाशिन्यै नमः स्वाहा ॥१०॥ छिन्ने
चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः । तामप्यस्य द्विधा चक्रे चक्रेणाभिमुखागतम् । ॐ ऐं क्लीं क्रौं विरूपाक्ष्यै
नमः स्वाहा ॥११॥ कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः । आयातं मुष्टि-पातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत् ।
ॐ ऐं क्लीं प्रूं दार-वासि-विघ्न-हरायै नमः स्वाहा ॥१२॥ अविध्याथ गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकां प्रति । साऽपि
देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता । ॐ ऐं क्लीं क्लीं त्रि-शांत्यै नमः स्वाहा ॥१३॥ ततः परशु-हस्तं तमायान्तं
दैत्य-पुंगवम् । आहत्य देवी बाणौघैरपातयत भू-तले । ॐ ऐं क्लीं भ्रूं दार-वासि-विमुक्तिदायै नमः स्वाहा ॥१४॥
तस्मिन् निपतिते भूमौ निशुम्भे भीम-विक्रमे । भ्रातर्यतीव-संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् । ॐ ऐं क्लीं ह्रौं शुभ-प्रदायै
नमः स्वाहा ॥१५॥ तमायान्तं समालोक्य देवी शंखमवादयत् । ज्या-शब्दं चापि धनुषश्चकारातीव-दुःसहम् ।
ॐ ऐं क्लीं क्रीं दाराग्नि-रूपिण्यै नमः स्वाहा ॥१६॥ पूरयामास ककुभो निज-घण्टा-स्वनेन च । समस्त-दैत्य-सैन्यानां
तेजो-क्षय-विधायिना । ॐ ऐं क्लीं म्लीं त्रिनेत्रायै नमः स्वाहा ॥१७॥ ततः सिंहो महा-नादैस्त्याजितेभ-महा-मदैः ।
पूरयामास गगनं गां तथैव दिशो दशः । ॐ ऐं क्लीं ग्लौं दारायै नमः स्वाहा ॥१८॥ ततः काली समुत्पत्य गगनं
क्ष्मामताडयत् । कराभ्यां तन्निनादेन प्राक्-स्वनास्ते तिरोहिताः । ॐ ऐं क्लीं प्लीं दार-कार्येऽरि-नाशिन्यै नमः
स्वाहा ॥१९॥ अट्टाट्ट-हासमशिवं शिव-दूती चकार ह । तैः शब्दैरसुरास्त्रेषु शुम्भः कोपं परं ययौ । ॐ ऐं क्लीं ह्लौं
घोरायै नमः स्वाहा ॥२०॥ दुरात्मंस्तिष्ठ तिष्ठेति व्याजहाराम्बिका यदा । तदा जयेत्यभिहितं देवैराकाश-संस्थितैः ।

ॐ ऐं क्लीं ह्स्त्रां दाड़िमी-वृक्ष-वासिन्यै नमः स्वाहा ॥२१॥ ऋषिरुवाच ॥ शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालाति-भीषण । आयान्ती वह्नि-कूटाभा सा निरस्ता महोल्कया । ॐ ऐं क्लीं स्हौं वसुधायै नमः स्वाहा ॥२२॥ सिंह-नादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोक-त्रयान्तरम् । निर्घात-निःस्वनो घोरो जितवानवनी-पते । ॐ ऐं क्लीं ल्लूं दाडिमी-वृक्ष-रूपायै नमः स्वाहा ॥२३॥ शुम्भ-मुक्तांश्छरान् देवी शुम्भस्तत्-प्रहिताँश्छरान् । चिच्छेद स्व-शरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः । ॐ ऐं क्लीं श्रीं दाडिमी-वन-वासिन्यै नमः स्वाहा ॥२४॥ ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभि-जघान तम् । त तदाभिहतो भूमौ मूर्छितो निपतात ह । ॐ ऐं क्लीं च्रूं दक्षिणायै नमः स्वाहा ॥२५॥ ततो निशुम्भः सम्प्राप्य चेतनामात्त-कार्मुकः । आजघान शरैर्देवीं कालीं केसरिणं तथा । ॐ ऐं क्लीं वीं सदा-धनायै नमः स्वाहा ॥२६॥ पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः । चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम् । ॐ ऐं क्लीं क्ष्लूं दक्षिणा-रूपायै नमः स्वाहा ॥२७॥ ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गति-नाशिनी । चिच्छेद तानि चक्राणि स्व-शरैः सायकांश्च तान् । ॐ ऐं क्लीं श्लूं धिये नमः स्वाहा ॥२८॥ ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डिकाम् । अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्य-सेना-समावृतः । ॐ ऐं क्लीं क्रूं दक्षिणा-रूप-धारिण्यै नमः स्वाहा ॥२९॥ तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका । खड्गेन शित-धारेण स च शूलं समाददे । ॐ ऐं क्लीं क्रां कामेश्वर्यै नमः स्वाहा ॥३०॥ शूल-हस्तं समायान्तं निशुम्भममरार्दनम् । हृदि विव्याध शूलेन वेगाविद्धेन चण्डिका । ॐ ऐं क्लीं ह्रौं दश-कन्यायै नमः स्वाहा ॥३१॥ भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निःसृतोऽपरः । महा-बलो महा-वीर्यस्तिष्ठ तु पुरुषो वदन् । ॐ ऐं क्लीं क्रां महातपायै नमः स्वाहा ॥३२॥ तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य स्वनवत्ततः । शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद् भुवि । ॐ ऐं क्लीं स्क्ष्लीं दक्ष-पुत्र्यै नमः स्वाहा ॥३३॥ ततः सिंहश्चखादोग्र दंष्ट्रा क्षुण्ण-शिरोधरान् । असुरांस्तांस्तथा काली

शिव-दूती तथापरान् । ॐ ऐं क्लीं म्रूं अघोरायै नमः स्वाहा ॥३४॥ कौमारी शक्ति-निर्भिन्नाः केचिन्नेशुर्महासुराः । ब्रह्माणी-मन्त्र-पूतेन तोयेनान्ये निराकृताः । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं दक्ष-गोत्रायै नमः स्वाहा ॥३५॥ माहेश्वरी-त्रिशूलेन भिन्नाः पेतुस्तथाऽपरे । वाराही-तुण्ड-घातेन केचिच्चूर्णी-कृता भुवि । ॐ ऐं क्लीं ब्लूं खड्ग-हस्तायै नमः स्वाहा ॥३६॥ खण्डं खण्डं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाः कृताः । वज्रेण चैन्द्री हस्ताग्र-विमुक्तेन तथाऽपरे । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं दक्ष-सुतायै नमः स्वाहा ॥३७॥ केचिद् विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात् । भक्षिताश्चापरे काली शिव-दूती मृगाधिपैः । ॐ ऐं क्लीं फ्रूं दक्ष-मात्रे नमः स्वाहा ॥३८॥

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामा) श्रीजगदम्बार्पणमस्तु ॥

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य, १ कमलगट्टा घी में भिगोकर, १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल। इस अध्याय में विशेष बेल-फल व मैनफल हैं। सब चीजें स्रुची में रखकर खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानाः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आदिशो व्विदिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।

(यजु० सं० अ० ६।१९ मंत्र)

तान्त्रिक आहुति

ॐ क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै भैरव्यै तारा देव्यै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है।

दशमः

॥ ध्यानम् ॥

ॐ उत्तप्त-हेम-रुचिरां रवि-चन्द्र-वह्नि-नेत्रां धनुश्शर-युतांकुश-पाश-शूलम् ।
रम्यैर्भुजैश्च दधतीं शिव-शक्ति-रूपां कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दु-लेखाम् ॥

॥ **ऋषिरुवाच** ॥ निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राण-सम्मितम् । हन्यमानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद् वचः । ॐ ऐं क्लीं श्रीं प्रसन्न-काल्यै नमः स्वाहा ॥१॥ **शुम्भ उवाच** ॥ बलावलेपाद् दुष्टे ! त्वं मा दुर्गे ! गर्वमावह । अन्येषां बलमाश्रित्य युद्धचसे याति-मानिनी । ॐ ऐं क्लीं म्लूं तपस्विन्यै नमः स्वाहा ॥२॥ **देव्युवाच** ॥ एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा ? पश्यैता दुष्ट ! मय्येव विशन्त्यो मद्-विभूतयः । ॐ ऐं क्लीं श्रौं दक्ष-यज्ञ-विनाशिन्यै नमः स्वाहा ॥३॥ **ऋषिरुवाच** ॥ ततः समस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणी-प्रमुखा लयम् । तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत् तदाम्बिका । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं द्वार-धात्र्यै नमः स्वाहा ॥४॥ **देव्युवाच** ॥ अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदास्थिता । तत् संहृतं मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव । ॐ ऐं क्लीं ग्लीं दक्ष-यज्ञान्त-कारिण्यै नमः स्वाहा ॥५॥ **ऋषिरुवाच** ॥ ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुम्भस्य चोभयोः । पश्यतां सर्व-देवानामसुराणां च दारुणम् । ॐ ऐं क्लीं ह्लं द्वार-देश-निवासिन्यै नमः स्वाहा ॥६॥ शर-वर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैव दारुणैः । तयोर्युद्धमभूद् भूयः सर्व-लोक-भयंकरम् । ॐ ऐं क्लीं ऐं दक्ष-प्रसूत्यै नमः स्वाहा ॥७॥ दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका । बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत् प्रतीघात-कर्तृभिः । ॐ ऐं क्लीं हूं द्वार-संस्थायै नमः स्वाहा ॥८॥ मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी । बभञ्ज लीलयैवोग्र-हुंकारोच्चारणादिभिः । ॐ ऐं क्लीं द्रौं दक्षजायै नमः स्वाहा ॥९॥ ततः शर-शतैर्देवीमाच्छादयत

सोऽसुरः । साऽपि तत्-कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः । ॐ ऐं क्लीं श्रीं द्वार-संस्थितायै नमः स्वाहा ।।१०।। छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे । चिच्छेद देवी चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम् । ॐ ऐं क्लीं त्रूं दक्ष-वंशैक-पावन्यै नमः स्वाहा ।।११।। ततः खड्गमुपादाय शत-चन्द्रं च भानु-मत् । अभ्यधावत् तदा देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः । ॐ ऐं क्लीं ब्रूं दक्षात्मजायै नमः स्वाहा ।।१२।। तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चण्डिका । धनुर्मुक्तैः शितैर्वाणैश्चर्म चार्कं करामलाम् । ॐ ऐं क्लीं फ्रें द्वार-रूपायै नमः स्वाहा ।।१३।। (अश्वाँश्च पातयामास रथं सारथिना सह) । हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्न-धन्वा विसारथिः । जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिका-निधनोद्यतः । ॐ ऐं क्लीं ह्रां दक्ष-सूनवे नमः स्वाहा ।।१४।। चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः । तथापि सोऽभ्यधावत्तां मुष्टिमुद्यम्य वेगवान् । ॐ ऐं क्लीं जुं द्वार-वासिन्यै नमः स्वाहा ।।१५।। स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्य-पुंगवः । देव्यास्तं चाऽपि सा देवी तलेनोरस्य ताडयत् । ॐ ऐं क्लीं सौः दक्षजायै नमः स्वाहा ।।१६।। तल-प्रहाराभिहतो निपपात मही-तले । स दैत्य-राजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः । ॐ ऐं क्लीं स्लूं द्वार-पाल-प्रियायै नमः स्वाहा ।।१७।। उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः । तत्राऽपि सा निराधारा युयुधे तेन चण्डिका । ॐ ऐं क्लीं प्रें दक्ष-जातिकायै नमः स्वाहा ।।१८।। नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम् । चक्रतुः प्रथमं सिद्ध-मुनि-विस्मय-कारकम् । ॐ ऐं क्लीं ह्स्वां दक्षिणाचार-संसिद्धायै नमः स्वाहा ।।१९।। ततो नियुद्धं सुचिरं कृत्वा तेनाम्बिका सह । उत्पात्य भ्रामयामास चिक्षेप धरणी-तले । ॐ ऐं क्लीं प्रीं दक्ष-जन्मने नमः स्वाहा ।।२०।। (स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगितः) । अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिका-निधनेच्छया । तमायान्तं ततो देवी सर्व-दैत्य-जनेश्वरम् । ॐ ऐं क्लीं फ्रां दक्ष-देह-समुद्भवायै नमः स्वाहा ।।२१।। जगत्यां पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि । स गतासुः पपातोर्व्यां देवी-शूलाग्र-विक्षतः ।

ॐ ऐं क्लीं क्रीं दक्षिणाचार-संसिद्धायै नमः स्वाहा ॥२२॥ चालयन् सकलां पृथ्वी साब्धि-द्वीपां स-पर्वताम् । ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन् दुरात्मनि । ॐ ऐं क्लीं श्रीं दुर्गमायै नमः स्वाहा ॥२३॥ जगत् स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाभवन्नभः । उत्पात-मेघाः सोल्का ये प्रागासंस्ते शमं ययुः । ॐ ऐं क्लीं क्रां दुर्गम-ध्यानायै नमः स्वाहा ॥२४॥ सरितो मार्ग-वाहिन्यस्तथासँस्तत्र पातिते । ततो देव-गणाः सर्वे हर्ष-निर्भर-मानसाः । ॐ ऐं क्लीं सः दुर्गमात्म-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा ॥२५॥ बभूवुर्निहते तस्मिन् गन्धर्वा ललितं जगुः । अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरो-गणाः । ॐ ऐं क्लीं क्लीं दुर्गमागम-संधानायै नमः स्वाहा ॥२६॥ ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद् दिवाकरः । जज्वलुश्चाग्नयः शान्ता शान्ता दिग्जनित-स्वनाः । ॐ ऐं क्लीं स्हलीं दोष-हरायै नमः स्वाहा ॥२७॥

॥ ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ॥

वैदिक आहुति

१ पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर, १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इस अध्याय में विशेष मैनफल व बेल-फल हैं । सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र पढ़ें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावाना । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा ॥ दिशः प्रतिशऽ आदिशो व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

तान्त्रिक आहुति

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै भैरव्यै देव्यै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥

सामान सब ऊपर लिखा है ।

एकादशः

॥ ध्यानम् ॥

ॐ बाल-रवि-द्युतिमिन्दु-किरीटां, तुंग-कुचां नयन-त्रय-युक्ताम् ।
स्मेर-मुखीं वरदांकुश-पाशाभीति-करां प्रभजे भुवनेशीम् ॥

॥ **ऋषिरुवाच** ॥ देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे, सेन्द्राः सुरा वह्नि-पुरोगमास्ताम् । कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्ट-लाभाद्, विकाशि-वक्त्राब्ज-विकाशिताशाः । ॐ ऐं क्लीं श्रौं दुर्गमाचार-पूजितायै नमः स्वाहा ॥१॥ **देवा ऊचुः** ॥ देवि ! प्रपन्नार्ति-हरे प्रसीद, प्रसीदमातर्जगतोऽखिलस्य । प्रसीद विश्वेश्वरि ! पाहि विश्वं, त्वमीश्वरी देवि ! चराचरस्य । ॐ ऐं क्लीं व्रें दक्षिणाचार-मोक्षाप्त्यै नमः स्वाहा ॥२॥ आधार-भूता जगतस्त्वमेका, मही-स्वरूपेण यतः स्थितासि । अपां स्वरूप-स्थितया त्वयैतदाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्य-वीर्ये । ॐ ऐं क्लीं इं दक्षिणाचार-वंदितायै नमः स्वाहा ॥३॥ त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्त-वीर्या, विश्वस्य बीजं परमासि माया । सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्, त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति-हेतुः । ॐ ऐं क्लीं क्रूं दुर्ग-नाड्यां रोहणायै नमः स्वाहा ॥४॥ विद्याः समस्तास्तव देवि ! भेदाः, स्त्रियः समस्ता सकला जगत्सु । त्वयैकया पूरितमम्बयैतत् ! का ते स्तुतिः स्तव्य-परा परोक्तिः । ॐ ऐं क्लीं श्रीं दीनायै नमः स्वाहा ॥५॥ सर्व-भूता यदा देवी स्वर्ग-मुक्ति-प्रदायिनी । त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः । ॐ ऐं क्लीं ल्लीं दनुजान्त-कर्यै नमः स्वाहा ॥६॥ सर्वस्य बुद्धि-रूपेण जनस्य हृदि संस्थिते । स्वर्गापवर्गदे देवि ! नारायणि ! नमोस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं प्रें दरी-कृत-तपस्यायै नमः स्वाहा ॥७॥ कला-काष्ठादि-रूपेण परिणाम-प्रदायिनि ! विश्व-स्योपरतौ शक्ते ! नारायणि नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं सौं दनुसन्तान-दारिण्यै नमः स्वाहा ॥८॥ सर्व-मंगल-मांगल्ये

शिवे सर्वार्थ-साधिके ! शरण्ये त्र्यम्बके गौरि ! नारायणि ! नमोस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं श्रूं बुद्धयै नमः स्वाहा ॥९॥ सृष्टि-स्थिति-विनाशानां शक्ति-भूते सनातनि ! गुणाश्रये गुणमये नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं क्लीं शक्त्यै नमः स्वाहा ॥१०॥ शरणागत-दीनार्त-परित्राण-परायणे ! सर्वस्यार्ति-हरे देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं स्क्लीं त्र्यम्बक्यै नमः स्वाहा ॥११॥ हंस-युक्त-विमानस्थे ब्रह्माणी-रूप-धारिणि ! कौशाम्भः-क्षुरिके देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं प्रीं गुणाश्रयायै नमः स्वाहा ॥१२॥ त्रिशूल-चन्द्राहि-धरे महा-वृषभ-वाहिनि ! माहेश्वरी-स्वरूपेण नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं स्ह्रीं ब्रह्माण्यै नमः स्वाहा ॥१३॥ मयूर-कुक्कुट-वृते महा-शक्ति-धरेऽनघे ! कौमारी-रूप-संस्थाने नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं स्तौं माहेश्वर्यै नमः स्वाहा ॥१४॥ शंख-चक्र-गदा-शाङ्‌र्ग-गृहीत-परमायुधे ! प्रसीद वैष्णवी-रूपे नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं जीं कौमार्यै नमः स्वाहा ॥१५॥ गृहीतोग्र-महा-चक्रे दंष्ट्रोद्धृत-वसुन्धरे ! वराह-रूपिणि ! शिवे ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं क्रूं ऐन्द्र्यै नमः स्वाहा ॥१६॥ नृसिंह-रूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे । त्रैलोक्य-त्राण-सहिते नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं क्रूं शिव-दूत्यै नमः स्वाहा ॥१७॥ किरीटिनि महावज्रे सहस्र-नयनोज्ज्वले ! वृत्त-प्राण-हरे चैन्द्रि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं चामुण्डायै नमः स्वाहा ॥१८॥ शिव-दूती-स्वरूपेण हत-दैत्य-महाबले ! घोर-रूपे महा-रावे नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं श्रूं दुर्गायै नमः स्वाहा ॥१९॥ दंष्ट्रा-कराल-वदने शिरो-माला-विभूषणे ! चामुण्डे ! मुण्ड-मथने ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं इं कात्यायन्यै नमः स्वाहा ॥२०॥ लक्ष्मि ! लज्जे ! महा-विद्ये ! श्रद्धे ! पुष्टि ! स्वधे ! ध्रुवे ! महा-रात्रि महा-विद्ये नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं जुं भद्र-काल्यै नमः स्वाहा ॥२१॥ मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवि तामसि ! नियते त्वं

प्रसीदेशे नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं त्रैं घंटायै नमः स्वाहा ॥२२॥ सर्वतः पाणि-पादां ते सर्वतोऽक्षि-शिरो-मुखे ! सर्वतः श्रवण-घ्राणे नारायणि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं द्रूँ चण्डिकायै नमः स्वाहा ॥२३॥ सर्व-स्वरूपे सर्वेशे सर्व-शक्ति-समन्विते ! भयेभ्यस्त्राहि नो देवि ! दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते ! ॐ ऐं क्लीं ह्रौं रोग-हरायै नमः स्वाहा ॥२४॥ एतत् ते वदनं सौम्यं लोचन-त्रय-भूषितम् । पातु नः सर्व-भीतिभ्यः कात्यायनि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं क्लीं अंबिकायै नमः स्वाहा ॥२५॥ ज्वाला-करालमत्युग्रमशेषासुर-सूदनम् । त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्र-कालि ! नमोऽस्तु ते । ॐ ऐं क्लीं सूं जगदम्बायै नमः स्वाहा ॥२६॥ हिनस्ति दैत्य-तेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ! सा घण्टा पातु नो देवि ! पापेभ्यो नः सुतानिव ! ॐ ऐं क्लीं श्रं विश्वेश-वन्द्यायै नमः स्वाहा ॥२७॥ असुराऽसृग्-वसा-पंक-चर्चितस्ते करोज्ज्वलः । शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके ! त्वां नता वयम् । ॐ ऐं क्लीं ब्रूं देव्यै नमः स्वाहा ॥२८॥ रोगानशेषानपहंसि तुष्टा, ददासि कामान् सकलानभीष्टान् त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति । ॐ ऐं क्लीं स्फ्रूं विश्वार्ति-हारिण्यै नमः स्वाहा ॥२९॥ एतत-कृतं यत् कदनं त्वयाऽद्य धर्मद्विषां देवि ! महासुराणाम् । रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्म-मूर्तिं कृत्वाऽम्बिके ! तत्प्रकरोति कान्या । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं दक्षिणाचार-शरणायै नमः स्वाहा ॥३०॥ विद्यासु शास्त्रेषु विवेक-दीपेष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या । ममत्व-गर्तेऽति-महान्धकारे विभ्रामयत्येतदतीव-विश्वम् । ॐ ऐं क्लीं लं वरदायै नमः स्वाहा ॥३१॥ रक्षांसि यत्रोग्र-विषाश्च नागा यत्रारयो दस्यु-बलानि यत्र । दावानलो यत्र तथाब्धि-मध्ये तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् । ॐ ऐं क्लीं ह्सौं दक्षिणाचार-वंदितायै नमः स्वाहा ॥३२॥ विश्वेश्वरि ! त्वं परिपासि विश्वं विश्वात्मिका धारयसि तु विश्वम् । विश्वेश-वन्द्या भवती भवन्ति विश्वाश्रया ये त्वयि भक्ति-नम्राः । ॐ ऐं क्लीं सौं अखिलेश्वर्यै नमः स्वाहा ॥३३॥ देवि ! प्रसीद परि-

पालय नोऽरिभीतेर्नित्यं यथासुर-क्षयादधुनैव सद्य । पापानि सर्व-जगतां प्रशमं नयाशु, उत्पात-पाक-जनितांश्च महोपसर्गान् । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं शुम्भ-दैत्य-विमर्दिन्यै नमः स्वाहा ।।३४।। प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि ! विश्वार्तिहारिणि ! त्रैलोक्य-वासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं निशुंभासुर-नाशिन्यै नमः स्वाहा ।।३५।। **देव्युवाच ।** वरदाऽहं सुर-गणा वरं यन्मनसेच्छथ । तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् । ॐ ऐं क्लीं विं विन्ध्याचल-वासिन्यै नमः स्वाहा ।।३६।। **देवा ऊचुः ।** सर्वा-बाधा-प्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ! एवमेव त्वया कार्यमस्मद्-वैरि-विनाशनम् । ॐ ऐं क्लीं प्लीं रौद्र-रूपिण्यै नमः स्वाहा ।।३७।। **देव्युवाच ।** वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युगे । शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महासुरौ । ॐ ऐं क्लीं क्ष्म्क्लीं रक्त-दंतिकायै नमः स्वाहा ।।३८।। नन्द-गोप-गृहे जाता यशोदा-गर्भ-सम्भवा । ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचल-निवासिनी । ॐ ऐं क्लीं त्स्त्रां स्तुत्यै नमः स्वाहा ।।३९।। पुनरप्यति-रौद्रेण रूपेण पृथिवी-तले । अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् । ॐ ऐं क्लीं प्रं अयोनिजायै नमः स्वाहा ।।४०।। भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान् वैप्रचित्तान् महासुरान् । रक्त-दन्ता भविष्यन्ति दाडिमी-कुसुमोपमाः । ॐ ऐं क्लीं क्लौं शताक्ष्यै नमः स्वाहा ।।४१।। ततो मां देवताः स्वर्गे मर्त्य-लोके च मानवाः । स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्त-दन्तिकाम् । ॐ ऐं क्लीं स्रूं पालिन्यै नमः स्वाहा ।।४२।। भूयश्च शत-वार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि । मुनिभिः संस्तुता भूमौ सम्भविष्याम्ययोनिजा । ॐ ऐं क्लीं क्ष्मां शाकम्भर्यै नमः स्वाहा ।।४३।। ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन् । कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षी एव मां ततः । ॐ ऐं क्लीं स्तूं दुर्गायै नमः स्वाहा ।।४४।। ततोऽहमखिलं लोकमात्म-देह-समुद्भवैः । भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टैः प्राण-धारकैः । ॐ ऐं क्लीं स्ह्रीं मुनीनां त्राण-कारिण्यै मः स्वाहा ।।४५।। शाकम्भरी च विख्याता तदा यास्याम्यहं भुवि । तत्रैव च नाशियष्यामि दुर्गं-

माख्यं महासुरम् । ॐ ऐं क्लीं प्रीं भीमायै नमः स्वाहा ।।४६।। दुर्गा देवी च विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
पुनश्चायं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले । ॐ ऐं क्लीं श्रौं महा-बाधा-विनाशिन्यै नमः स्वाहा ।।४७।। रक्षांसि
भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राण-कारणात् । तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्र-मूर्तयः । ॐ ऐं क्लीं श्रां भ्रामर्यै नमः
स्वाहा ।।४८।। भीमा देवी च विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति । यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महा-बाधां करिष्यति । ॐ ऐं क्लीं
ओं सर्व-बाधा-प्रशमन्यै नमः स्वाहा ।।४९।। तदाऽहं भ्रामरं रूपं कृत्वाऽसंख्येय-षट्-पदम् । त्रैलोक्यस्य हितार्थाय
नाशयिष्यामि महासुरम् । ॐ ऐं क्लीं श्रीं मधु-कैटभ-नाशिन्यै नमः स्वाहा ।।५०।। (भ्रामरी चैव मां लोकास्तदा
तोष्यन्ति सर्वतः) । इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति । तदा तदाऽवतीर्याऽहं करिष्याम्यरि-संक्षयम् । ॐ ऐं
क्लीं म्लीं अरि-नाशिन्यै नमः स्वाहा ।।५१।।

।। ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) जगदम्बार्पणमस्तु ।।

वैदिक आहुति

१ पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इस अध्याय में विशेष
पुष्प एवं पायस ही हैं । सब चीजें स्त्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः । पिवतांतरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽआद्दिशो
व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।।

(यजुः सं० अ० ६।१९ मंत्र)

तान्त्रिक आहुति

क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै लक्ष्मी-बीजाधिष्ठात्र्यै गरुड़-वाहिन्यै

नारायणी-देव्यै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ।।
सामान सब ऊपर लिखा है ।

द्वादशः

।। ध्यानम् ।।

ॐ विद्युद्दाम-सम-प्रभां मृगपति-स्कंध-स्थितां भीषणां । कन्याभिः करवाल-खेट - विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदासि-खेट-विशिखाँश्चापं गुणं तर्जनीम् । बिभ्राणामनलात्मिकां शशि-धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ।।

।। देव्युवाच ।। एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः । तस्याऽहं सकलां बाधां नाशयिष्याम्यसंशयम् । ॐ ऐं क्लीं क्रूं भय-नाशिन्यै नमः स्वाहा ।।१।। मधु-कैटभ-नाशं च महिषासुर-घातनम् । कीर्तयिष्यन्ति ये तद्-वद् क्षयं शुम्भ-निशुम्भयोः । ॐ ऐं क्लीं श्रूं स्वस्त्ययन्यै नमः स्वाहा ।।२।। अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैक-चेतसः । श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम् । ॐ ऐं क्लीं प्रां महामारी-हर्यै नमः स्वाहा ।।३।। न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद् दुष्कृतोत्था न चापदः । भविष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्ट-वियोजनम् । ॐ ऐं क्लीं फें बलि-प्रियायै नमः स्वाहा ।।४।। शत्रुतो न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः । न शस्त्रानल-तोयौघात् कदाचित् सम्भविष्यति । ॐ ऐं क्लीं हं शरत्-पूज्यायै नमः स्वाहा ।।५।। तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समाहितैः । श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत् । ॐ ऐं क्लीं चें निर्भय-प्रदायै नमः स्वाहा ।।६।। उपसर्गानशेषाँस्तु महा-मारी-समुद्भवान् । तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम् । ॐ ऐं क्लीं सूं रिपु-नाशिन्यै नमः स्वाहा ।।७।। यत्रैतत् पठ्यते सम्यङ् नित्य-मायतने मम । सदा न तद्-विमोक्ष्यामि सान्निध्यं तत्र मे स्थितम् । ॐ ऐं क्लीं प्रीं ग्रह-पीडा-हर्यै नमः स्वाहा ।।८।। बलि-प्रदाने पूजायामग्नि-कार्ये महोत्सवे । सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च । ॐ ऐं क्लीं ब्लूं उपसर्ग-प्रशमन्यै नमः स्वाहा ।।९।। जानताऽजानता वापि बलि-पूजां तथा कृताम् । प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या वह्नि-होमं तथा कृतम् ।

ॐ ऐं क्लीं आं बालानां शांति-कारिण्यै नमः स्वाहा ।।१०।। शरत्-काले महा-पूजां क्रियते या च वार्षिकी । तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्ति-समन्वितः । ॐ ऐं क्लीं औं दुर्वृत्त-नाशिन्यै नमः स्वाहा ।।११।। सर्वा-बाधा-विनिर्मुक्तो धन-धान्य-समन्वितः । मनुष्यो मत्-प्रसादेन भविष्यति न संशयः । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं देवि ! लोक-प्रदायिन्यै नमः स्वाहा ।।१२।। श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्य तथा चोत्पत्तयः शुभाः । पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् । ॐ ऐं क्लीं क्रीं विप्र-प्रियायै नमः स्वाहा ।।१३।। रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणं चोपपद्यते । नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम श्रृण्वताम् । ॐ ऐं क्लीं द्रां मंत्र-प्रियायै नमः स्वाहा ।।१४।। शान्ति-कर्मणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्न-दर्शने । ग्रह-पीडासु चोग्रासु माहात्म्यं श्रृणुयान्मम । ॐ ऐं क्लीं श्रीं पाप-हरायै नमः स्वाहा ।।१५।। उपसर्गाः शमं यान्ति ग्रह-पीडाश्च दारुणाः । दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सु-स्वप्नमुपजायते । ॐ ऐं क्लीं स्लीं अभयायै नमः स्वाहा ।।१६।। बाल-ग्रहाभि-भूतानां बालानां शान्ति-कारकम् । संघात-भेदे च नृणां मैत्री-करणमुत्तमम् । ॐ ऐं क्लीं क्लीं देव-वन्दितायै नमः स्वाहा ।।१७।। दुर्वृत्तानामशेषाणां बल-हानि-करं परम् । रक्षो-भूत-पिशाचानां पठनादेव नाशनम् । ॐ ऐं क्लीं ह्लीं बंधन-मोचन्यै नमः स्वाहा ।।१८।। सर्वं ममैतन्माहात्म्यं मम सन्निधि-कारकम् । पशु-पुष्पार्घ्य-धूपैश्च गन्ध-दीपैस्त-थोत्तमैः । ॐ ऐं क्लीं ब्लीं पतितोद्धार-कारिण्यै नमः स्वाहा ।।१९।। विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम् । अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या । ॐ ऐं क्लीं त्रों संकट-हारिण्यै नमः स्वाहा ।।२०।। प्रीतिर्मे क्रियते साऽस्मिन् सुकृदुच्चरिते श्रुते । श्रुतं हरति पापानि तथाऽऽरोग्यं प्रयच्छति । ॐ ऐं क्लीं ओं दस्यु-वर्ग-विनाशिन्यै नमः स्वाहा।।२१।। रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनम् मम । युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्ट-दैत्य-निबर्हणम् । ॐ ऐं क्लीं श्रौं ज्ञानदायै नमः स्वाहा ।।२२।। तस्मिन्छ्रुते वैरि-कृतं भयं पुंसां न जायते । युष्माभिः स्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः । ॐ ऐं क्लीं ऐं भगवत्यै नमः स्वाहा ।।२३।। ब्रह्मणा च कृतास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम् । अरण्ये प्रान्तरे वापि दावाग्नि-परिवारितः । ॐ ऐं क्लीं द्रूं दैत्य-नाशिन्यै नमः स्वाहा ।।२४।। दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वापि शत्रुभिः । सिंह-व्याघ्रानुयातो वा वने वा वन-हस्तिभिः । ॐ ऐं क्लीं ल्लूं रिपूणां भय-दायिन्यै नमः

स्वाहा ।।२५।। राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो बध्यो बन्ध-गतोऽपि वा । आघूर्णितो वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे । ॐ ऐं क्लीं औं नित्यायै नमः स्वाहा ।।२६।। पतत्सु चापि शस्त्रेषु संग्रामे भृश-दारुणे । सर्वा-बाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा । ॐ ऐं क्लीं चें महामारी-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा ।।२७।। स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत संकटात् । मम प्रभावात् सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा । ॐ ऐं क्लीं ह्रूं अजायै नमः स्वाहा ।।२८।। दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम ।। **ऋषिरुवाच** ।। उक्त्वैव सा भगवती चण्डिका चण्ड-विक्रमा । ॐ ऐं क्लीं ब्रीं मेधायै नमः स्वाहा ।।२९।। पश्यतामेव देवानां तत्रैवान्तरधीयत । तेऽपि देवा निरातंकाः स्वाधिकारान् यथा पुरा । ॐ ऐं क्लीं ह्लीं परमेश्वर्यै नमः स्वाहा ।।३०।। यज्ञ-भाग-भुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः । दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देव-रिपौ युधि । ॐ ऐं क्लीं श्रीं भोग-स्वर्गापवर्गदायै नमः स्वाहा ।।३१।। जगद्-विध्वंसिनि तस्मिन् महोग्रेऽतुल-विक्रमे । निशुम्भे च महा-वीर्ये शेषाः पातालमाययुः । ॐ ऐं क्लीं श्रां महा-भागायै नमः स्वाहा ।।३२।। एवं भगवती देवी सा नित्याऽपि पुनः पुनः । सम्भूय कुरुते भूप ! जगतः परिपालनम् । ॐ ऐं क्लीं प्लीं तपो-रूपायै नमः स्वाहा ।।३३।। तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते । सा याचिता तु विज्ञानं तुष्टा ऋद्धि प्रयच्छति । ॐ ऐं क्लीं आं अंबायै नमः स्वाहा ।।३४।। व्याप्तं तयैतत् सकलं ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर ! महा-काल्या महा-काले महा-मारी-स्वरूपया । ॐ ऐं क्लीं सौं मही-मय्यै नमः स्वाहा ।।३५।। सैव काले महा-मारी सृष्टिर्भवत्यजा । स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी । ॐ ऐं क्लीं ह्लीं जगद्धात्र्यै नमः स्वाहा ।।३६।। भव-काले नृणाम् सैव लक्ष्मीर्वृद्धि-प्रदा गृहे । सैवाऽभावे तथालक्ष्मोर्विनाशायोपजायते । ॐ ऐं क्लीं क्रीं देव्यै नमः स्वाहा ।।३७। स्तुता सम्पूजिता पुष्पैर्धूपैर्गन्धादिभिस्तथा । ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे गतिं शुभाम् । ॐ ऐं क्लीं क्षां सर्वदायै नमः स्वाहा ।।३८।।

।। ॐ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सार्वणिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्या सन्तु (यजमानस्य कामाः) । जगदम्बार्पणमस्तु ।।

वैदिक आहुति

एक पान पर शाकल्य १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग १ छोटी इलायची, गूगल । इस अध्याय में विशेष ऋतु-फल केला ही है । सब चीजें स्रुची में रख खड़े होकर निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ घृतं घृत-पावानः पिबतव्वसां वसा पावानः । पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आद्दिशो-व्विद्दिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।।

तान्त्रिक आहुति

क्लीं जयन्ती साङ्गायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै वर-प्रदायै वैष्णवी-देव्यै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ।।

सामान सब ऊपर लिखा है ।

त्रयोदशः

।। ध्यानम् ।।

ॐ बालार्क-मण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् । पाशांकुश-वराभीतीर्धारयन्तीं शिवां भजे ।।

।। ॐ **ऋषिरुवाच** ।। एतत् ते कथितं भूप-देवी-माहात्म्यमुत्तमम् । एवं प्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत् । ॐ ऐं क्लीं श्रौं सर्वज्ञायै नमः स्वाहा ।।१।। विद्या तथैव क्रियते भगवद्-विष्णु-मायया । तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः । ॐ ऐं क्लीं ल्लूं चण्डिकायै नमः स्वाहा ।।२।। मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे । तामुपैहि महाराज ! शरणं परमेश्वरीम् । ॐ ऐं क्लीं क्लीं वर-प्रदायै नमः स्वाहा ।।३।। (आराधिता सैव नृणां भोग-स्वर्गापवर्गदा) ।। **मार्कण्डेय उवाच** ।। एवं तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः । प्रणिपत्य महा-भागं तं ऋषिं शंसित-व्रतम् । ॐ ऐं क्लीं ह्रौं मुनि-प्रियायै नमः स्वाहा ।।४।। निर्विण्णोऽति-ममत्वेन राज्यापहरणेन च । जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महा-मुने ! ॐ ऐं क्लीं प्लीं उत्साह-करण्यै नमः स्वाहा ।।५।। सन्दर्शनार्थमम्बाया नदी-पुलिन-संस्थितः । स च वैश्यस्तपः तेपे देवी-सूक्तं परं जपन् । ॐ ऐं क्लीं श्रीं भव-पाश-विमोचन्यै नमः स्वाहा ।।६।। तौ तस्मिन् पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम् । अर्हणां चक्रतुस्तस्याः पुष्प-धूपाग्नि-तर्पणैः । ॐ ऐं क्लीं ल्लीं देव-देव्यै नमः स्वाहा ।।७।। निराहारौ यताहारौ तन्मनस्कौ समाहितौ । ददतुस्तौ बलिं चैव निज-गात्रा-

सृगुक्षितम् । ॐ ऐं क्लीं श्रूं राज्य-प्रदायै नमः स्वाहा ॥८॥ एवं समाराधयतस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः । परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका । ॐ ऐं क्लीं ह्रीं अस्वलितायै नमः स्वाहा ॥९॥ **देव्युवाच** ॥ यत् प्रार्थ्यते त्वया भूप ! त्वया च कुल-नन्दन ! मत्तस्तत् प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत् । ॐ ऐं क्लीं त्रूं जनन्यै नमः स्वाहा ॥१०॥ **मार्कण्डेय उवाच** ॥ ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्य-जन्मनि ॥ **राजोवाच** ॥ अत्रैव च निजं राज्यं हत-शत्रु-बलं बलात् । ॐ ऐं क्लीं ह्रूं मन्त्र-रूपायै नमः स्वाहा ॥११॥ **मार्कण्डेय उवाच** ॥ सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्ण-मानसः ॥ **वैश्य उवाच** ॥ ममेत्यहमेव प्राज्ञः संग-विच्युति-कारकम् । ॐ ऐं क्लीं ह्रां वांछित-प्रदायै नमः स्वाहा ॥१२॥ **देव्युवाच** ॥ स्वल्पैरहोभिर्नृपते ! स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान् । हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति । ॐ ऐं क्लीं प्रीं ज्ञानदायै नमः स्वाहा ॥१३॥ मृतश्च भूयः सम्प्राप्य जन्म दैवाद् विवस्वतः । सावर्णिको नाम मनुर्भवान् भुवि भविष्यति । ॐ ऐं क्लीं ऊं वाण्यै नमः स्वाहा ॥१४॥ वैश्य-वर्य ! त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभिवाञ्छितः । तं प्रयच्छामि संसिद्धयै तव ज्ञानं भविष्यति । ॐ ऐं क्लीं सूं अभिस्तुतायै नमः स्वाहा ॥१५॥ **मार्कण्डेय उवाच** ॥ एवं दत्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम् । बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यम-भिष्टुता । ॐ ऐं क्लीं षों लषित-प्रदायै नमः स्वाहा ॥१६॥ एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभा । सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः । ॐ ऐं क्लीं ओं मनु-रूपायै नमः स्वाहा ॥१७॥

॥ जय जय श्रीमार्कण्डेय-उत्तर-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य कामाः) श्री जगदम्बार्पणमस्तु ॥

वैदिक आहुति

१ पान पर शाकल्य, १ कमलगट्टा घी में भिगोकर १ सुपारी, २ लौंग, १ छोटी इलायची, गूगल । इस अध्याय में विशेष १ फल वा फूल है । सब चीजें स्रुचि में रखकर खड़े होकर निम्न मन्त्र बोल—

ॐ घृत घृत-पावानः पिवतव्वसां वसा पावानः । पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रतिशऽ आद्दिशो-व्विद्दिशऽउद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥ **तान्त्रिक आहुति**—अं क्लीं जयन्ती सांगायै सायुधायै सशक्तिकायै सपरिवारायै सवाहनायै श्रीविद्यायै महाऽऽहुतिं समर्पयामि नमः स्वाहा ॥ सामान सब ऊपर लिखा है।

निगमागम शक्ति शोध संस्थान
सिहोरा जबलपुर

दुर्गा सप्सती जो पुस्तक आपके हाथ मे है. यह पुस्तक मां दुर्गा की कृपा से काफी लम्बे समय के प्रयत्नों के बाद सम्पूर्ण ७०० श्लोक सहित हम अपने भक्तों के समक्ष प्रस्तुत कर रहे है. हमें आशा है कि इस पुस्तक से हमारे भक्तों को बहुत से अप्राप्त विषय जो किसी पुस्तक मे नहीं होगा वो इसमें संग्रह किये गये हैं. जैसे :- महाकाली, महा-लक्ष्मी, महासरस्वती, सूक्त चंडीकादल, सप्तसती हृदय परदेवी सूक्त आदि.

हमे आशा है कि इस पुस्तक से हमारे भक्तों को बहुत लाभ होगा.

— दण्डी स्वामी, तत्ववोधाश्रम :-